ISSN NUMBER : 2455-9717

RNI NUMBER :- MPHIN/2016/67929

Dhingra Family Foundation USA

शिवना प्रकाशन

वर्ष : 6, अंक : 21

अप्रैल-जून 2021

मूल्य 50 रुपये

शिवना साहित्यिकी

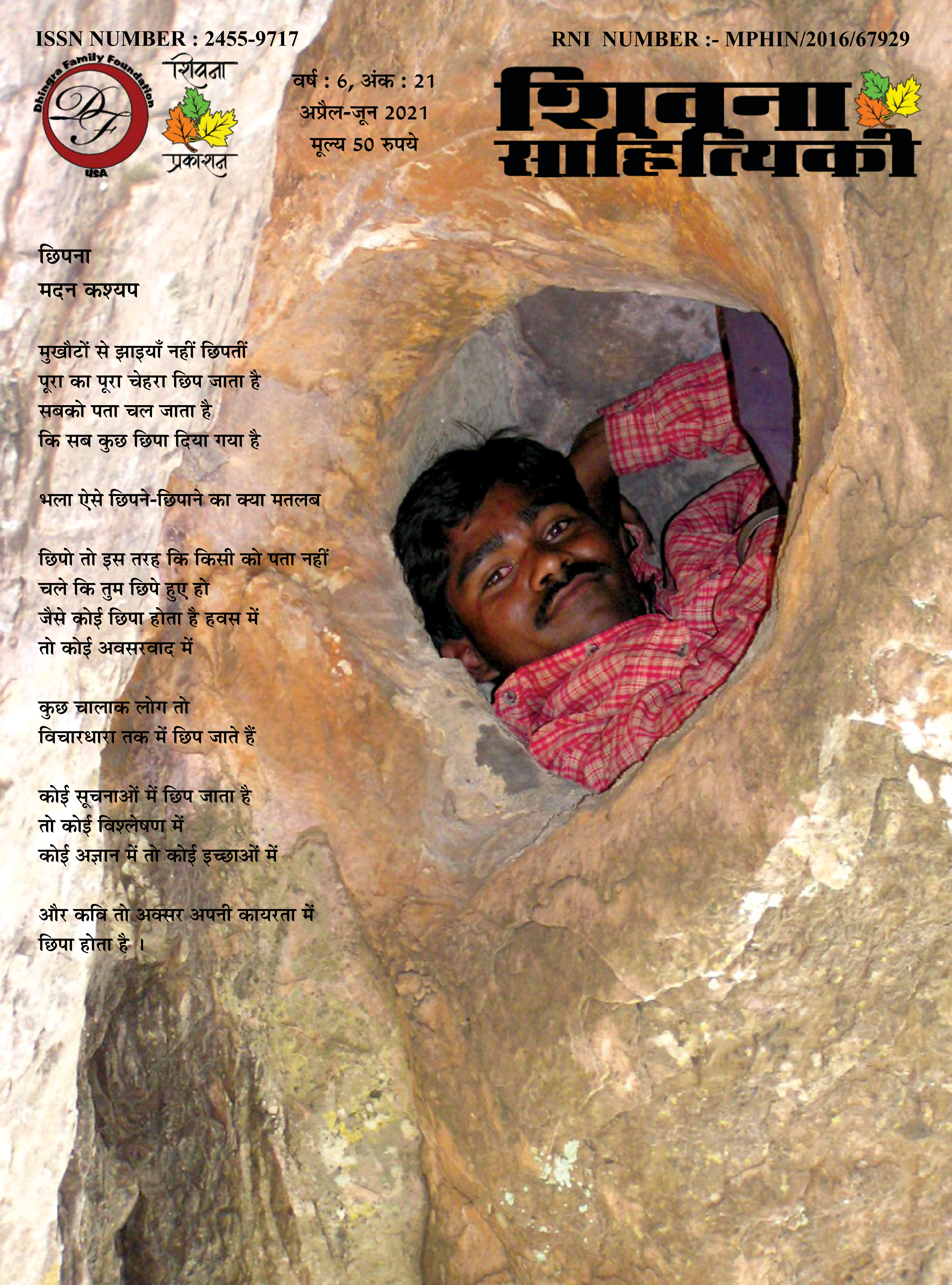

छिपना

मदन कश्यप

मुखौटों से झाइयाँ नहीं छिपतीं
पूरा का पूरा चेहरा छिप जाता है
सबको पता चल जाता है
कि सब कुछ छिपा दिया गया है

भला ऐसे छिपने-छिपाने का क्या मतलब

छिपो तो इस तरह कि किसी को पता नहीं
चले कि तुम छिपे हुए हो
जैसे कोई छिपा होता है हवस में
तो कोई अवसरवाद में

कुछ चालाक लोग तो
विचारधारा तक में छिप जाते हैं

कोई सूचनाओं में छिप जाता है
तो कोई विश्लेषण में
कोई अज्ञान में तो कोई इच्छाओं में

और कवि तो अक्सर अपनी कायरता में
छिपा होता है ।

शिवना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित नई पुस्तकें

शिवना प्रकाशन

शिवना प्रकाशन, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
फोन : 07562-405545, 07562-695918
मोबाइल : +91-9806162184 (शहरयार)
ईमेल : shivna.prakashan@gmail.com
http://shivnaprakashan.blogspot.in
https://www.facebook.com/shivna.prakashan

शिवना प्रकाशन की पुस्तकें सभी प्रमुख ऑनलाइन शॉपिंग स्टोर्स पर

amazon http://www.amazon.in
flipkart http://www.flipkart.com
Paytm https://www.paytm.com
ebay http://www.ebay.in

दिल्ली में पुस्तकें प्राप्त करें : हिन्दी बुक सेंटर, 4/5 आसफ अली रोड फोन : 011-23286757 http://www.hindibook.com

संरक्षक एवं
सलाहकार संपादक
सुधा ओम ढींगरा
प्रबंध संपादक
नीरज गोस्वामी
संपादक
पंकज सुबीर
कार्यकारी संपादक
शहरयार
सह संपादक
शैलेन्द्र शरण
पारुल सिंह
डिज़ायनिंग
सनी गोस्वामी, सुनील पेरवाल, शिवम गोस्वामी

शिवना प्रकाशन

शिवना साहित्यिकी

वर्ष : 6, अंक : 21, त्रैमासिक : अप्रैल-जून 2021
RNI NUMBER :- MPHIN/2016/67929
ISSN : 2455-9717

संपादकीय एवं व्यवस्थापकीय कार्यालय
पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6
सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर, म.प्र. 466001
दूरभाष : 07562405545
मोबाइल : 09806162184 (शहरयार)
ईमेल- shivnasahityiki@gmail.com

ऑनलाइन 'शिवना प्रकाशन'
http://shivnaprakashan.blogspot.in
फेसबुक पर 'शिवना प्रकाशन'
https://facebook.com/shivna prakashan

एक प्रति : 50 रुपये, (विदेशों हेतु 5 डॉलर $5)
सदस्यता शुल्क
1500 रुपये (पाँच वर्ष), 3000 रुपये (आजीवन)

बैंक खाते का विवरण-
Name: Shivna Sahityiki
Bank Name: Bank Of Baroda,
Branch: Sehore (M.P.)
Account Number: 30010200000313
IFSC Code: BARB0SEHORE

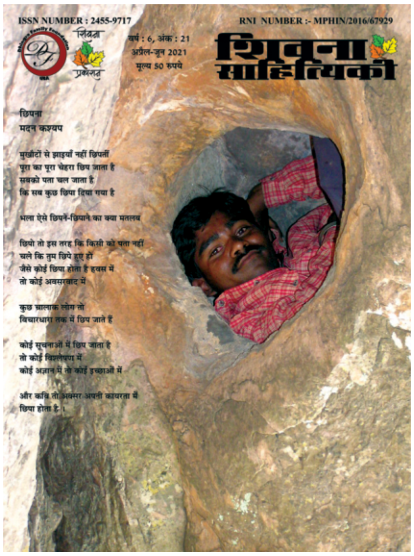

आवरण कविता
मदन कश्यप

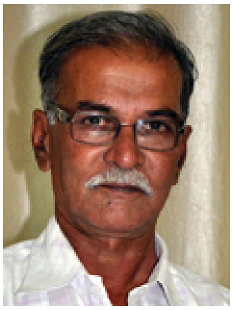

आवरण चित्र
राजेन्द्र शर्मा

संपादन, प्रकाशन एवं संचालन पूर्णत: अवैतनिक, अव्यवसायिक। पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं। संपादक तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा। पत्रिका जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर माह में प्रकाशित होगी। समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र सीहोर (मध्यप्रदेश) रहेगा।

Dhingra Family Foundation India
SHIVNA CREATIONS
Dhingra Family Foundation USA

इस अंक में

आवरण कविता / मदन कश्यप
आवरण चित्र / राजेन्द्र शर्मा
संपादकीय / शहरयार / 5
व्यंग्य चित्र / काजल कुमार / 6

पुस्तक समीक्षा

अपेक्षाओं के बियाबान (कहानी संग्रह)
दीपक गिरकर / डॉ. निधि अग्रवाल / 7
मीडिया का मायाजाल (पत्रकारिता)
प्रेम कुमार / डॉ. मुकेश कुमार / 12
मेरी प्रिय कविताएँ (कविता संकलन)
प्रो. अवध किशोर प्रसाद / अनिरुद्ध प्रसाद विमल / 14
अब ख्वाब नए हैं (कविता संग्रह)
डॉ. नीलोत्पल रमेश / अनिता रश्मि / 19
कठपुतलियाँ जाग रही हैं (कविता संग्रह)
मनीष वैद्य / श्रीराम दवे / 21
प्रेम (कहानी संग्रह)
प्रो. अवध किशोर प्रसाद / पंकज सुबीर / 23
ठौर (कहानी संग्रह)
विजय पुष्पम / दिव्या शुक्ला / 25
खारा पानी (कहानी संग्रह)
गोविंद सेन / आशा पांडेय / 27
गली हसनपुरा (उपन्यास)
हरिराम मीणा / रजनी मोरवाल / 30
अँगूठे पर वसीयत (उपन्यास)
रमेश शर्मा / शोभनाथ शुक्ल / 33
माफ करना यार (संस्मरण)
राकेश शर्मा / बलराम / 35
बिना मतलब (कहानी संग्रह)
संदीप वर्मा / राजासिंह / 37
वे रचना कुमारी को नहीं जानते (व्यंग्य संग्रह)
कमलेश पाण्डेय / शांति लाल जैन / 39
तीस पार की नदियाँ (कविता संग्रह)
डॉ. नीलोत्पल रमेश / सत्या शर्मा 'कीर्ति' / 41
धूप में नंगे पाँव (संस्मरण)
योगेन्द्र शर्मा / स्वयं प्रकाश / 43
सुरंग में लड़की (कविता संग्रह)
हरिराम मीणा / राजेन्द्र नागदेव / 46
जूता ज़िंदाबाद (कविता संग्रह)
डॉ. मक्खन मुरादाबादी / अशोक अंजुम / 58
फाँसी बाग (उपन्यास)
राकेश भारतीय / नरेन्द्र नागदेव / 61
सुन रहा हूँ इस वक्त (कविता संग्रह)
अश्विनीकुमार दुबे / सतीश कुमार सिंह / 63
चाय की विश्व यात्रा (निबंध)
आराधना झा श्रीवास्तव / कादंबरी मेहरा / 65
दस कुंवारियों का दृष्टांत (नाटक संग्रह)
माटिन जॉन / कुमार संजय / 67
खुलती रस्सियों के सपने (कविता संग्रह)
अमरेंद्र मिश्र / राग रंजन / 69

केंद्र में पुस्तक

खिड़कियों से झाँकती आँखें (कहानी संग्रह)
अशोक प्रियदर्शी, डॉ. मधु संधु
सुधा ओम ढींगरा / 49
रिश्ते (कहानी संग्रह)
दीपक गिरकर, प्रो. अवध किशोर प्रसाद
पंकज सुबीर / 54

नई पुस्तक

दृश्य से अदृश्य का सफ़र (उपन्यास) / सुधा ओम ढींगरा / 18
गीली पाँक (कहानी संग्रह) / उषाकिरण खान / 20
बर्फ़ के फूल (जया जादवानी की प्रेम कहानियाँ)
संपादक : मनीषा कुलश्रेष्ठ / 22
कहिये मंज़िल से इंतज़ार करे (उपन्यास)/ गजेन्द्र सिंह वर्धमान / 24
ओ मारिया पिताशे (यात्रा संस्मरण) / प्रतिभा अधिकारी / 29
इक्कीस फेरों का फ़रेब (उपन्यास) / सुनीता पाठक / 31
यही तो इश्क़ है (ग़ज़ल संग्रह) / पंकज सुबीर / 32
मन कस्तूरी रे (उपन्यास) / अंजू शर्मा / 34
सरहदों के पार दरख़्तों के साये में (कविता संग्रह)/रेखा भाटिया/ 40
कुहासा छँट गया (कहानी संग्रह) / ममता त्यागी / 48
फ़ैमिली बिज़नेस की सच्चाइयाँ (प्रबंधन)
लेखक : हेनरी हॅचेसन / अनुवाद : इंज़ी. राजेन्द्र जैन
कोई ख़ुशबू उदास करती है (कहानी संग्रह) / नीलिमा शर्मा / 53
अपनी सी रंग दीन्हीं रे (कहानी संग्रह) / सपना सिंह / 57
शह और मात (कहानी संग्रह) / मंजुश्री / 59
कुम्हलाई कलियाँ (कहानी संकलन) / सीमा शर्मा / 60
हाशिये का हक़ (साझा उपन्यास) / नीलिमा शर्मा, डॉ. रंजना जायसवाल, डॉ. गीता द्विवेदी, डॉ. जया आनंद / 62
बहती हो तुम नदी निरंतर (गीत संग्रह) / श्याम सुंदर तिवारी / 64
हरे स्कर्ट वाले पेड़ों के तले (कहानी संग्रह) / नीलम कुलश्रेष्ठ / 66
कब तक माफ़ करेगी अम्मा (कविता संग्रह) / नीरज पाराशर / 66
द= देह, दरद और दिल (कहानी संग्रह) / विभा रानी / 68

उपन्यास अंश

सीतायन (बांग्ला उपन्यास)
मल्लिका सेनगुप्ता
अनुवाद : सुशील कान्ति / 70

संपादकीय

ज्ञान के प्रकाश से जगमगाती हुई मशाल का नाम होता है पुस्तक

कोरोना ने बीता पूरा साल हमें भयाक्रांत रखा। लेकिन २०२० के बीतते हुए महीनों में ऐसा लगने लगा था कि जीवन एक बार फिर से पटरी पर आ रहा है। सब कुछ सामान्य लगने लगा था। उसके बाद २०२१ के शुरू के दो महीनों जनवरी और फरवरी में तो ऐसा लग रहा था कि पुराना समय लौट कर आ गया है। लगभग सब कुछ खुल चुका था और सामान्य भी हो चुका था, मगर तीसरे महीने के आते ही एक बार फिर वही पिछले साल वाली कहानी लौट कर आ गई। एक बार फिर लॉकडाउन का संकट सिर पर मँडरा रहा है। २०२० के अंतिम दो महीनों तथा २०२१ के प्रारंभ के दो महीनों, इन चार महीनों में ऐसा लगा था कि सब कुछ पहले जैसा हो जाएगा। इस दौरान शिवना प्रकाशन से कई नई किताबें प्रकाशित होकर आईं। नई पुस्तकों का जो दबाव था, वह सुखद अनुभूति प्रदान कर रहा था। इस समय में जितनी किताबें प्रकाशित होकर आईं, उतनी तो शायद विश्व पुस्तक मेले के समय भी नहीं आती हैं। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर शिवना प्रकाशन द्वारा चौदह पुस्तकों का विमोचन किया गया, जिनमें लगभग हर विधा की पुस्तक शामिल थी। एक साथ इतनी पुस्तकों का विमोचन करने का प्रकाशन के लिए भी यह पहला ही अवसर था। सारी पुस्तकें महिला लेखकों की थीं। ऑनलाइन कार्यक्रम में सभी लेखकों का उत्साह देखते ही बनता था। लेखकों का उत्साह ही प्रकाशक की पूँजी होती है। शिवना प्रकाशन का तो कम से कम यही मानना है। आठ मार्च का वह आयोजन जिसकी गूँज अगले दो –तीन दिन तक बनी रही, उस आयोजन ने लॉकडाउन की सारी कड़वाहट को धो दिया। पुस्तकों की मौजूदगी असल में इस दुनिया को बचा कर रखती है, इस दुनिया को रहने लायक बनाए रखती है। पुस्तकों की इस दुनिया में अगर उल्लास है, आयोजनों की उजास है, तो ऐसा लगता है कि सारी दुनिया में सब कुछ ठीक-ठाक चल रहा है। असल में यह पुस्तकें ही अंततः उस अँधेरे को दूर करती हैं, जो अँधेरा धीरे-धीरे हमारे समय और समाज को घेरने लगता है। पुस्तकें मशाल का काम करती हैं, ज्ञान के प्रकाश से जगमगाती हुई मशाल का नाम होता है पुस्तक। बिना पुस्तकों के इस दुनिया की कल्पना कम से कम वे लोग तो कर ही नहीं सकते हैं, जो पढ़ने-लिखने वाले लोग हैं। शिवना प्रकाशन ने अभी तक यही कोशिश की है कि ज्ञान की यह मशाल जलती रहे। और कुछ नए चेहरे भी सामने आएँ, जो इस मशाल को उठा कर चल सकें। इसीलिए आठ मार्च के आयोजन में लगभग आधी महिला लेखक वे थीं, जिनकी पहली ही किताब सामने आ रही थी। यह नए लेखक बहुत उत्साह के साथ साहित्य की दुनिया में आते हैं, इसलिए इनका स्वागत करना आवश्यक होता है। आठ मार्च को जब भारत से लेकर अमेरिका तक की महिला लेखक इस कार्यक्रम में शामिल हुईं तो लगा कि पुराने, सुहाने दिन लौट कर आ गए हैं। मगर मार्च के बीतने तक तो सारा दृश्य एक बार फिर से बदल गया। एक बार फिर से वही दहशत हवाओं में घुल गई है। प्रकाशन का काम केवल व्यापार नहीं होता, यहाँ व्यापार की तरह सोचा भी नहीं जा सकता । प्रकाशन का काम होता है, किसी रचनाकार के द्वारा रची गई रचना को पाठकों तक पहुँचाना। एक लेखक, और उसमें भी ख़ास तौर पर हिन्दी का लेखक सबसे ज़्यादा यही चाहता है कि उसकी रचना ज़्यादा से ज़्यादा पाठकों तक पहुँचे। शिवना प्रकाशन ने शुरू से ही ऑनलाइन बिक्री पर अधिक ध्यान दिया, इसलिए लॉकडाउन के दौरान भी पुस्तकों की बिक्री कमोबेश चलती रही। बल्कि एक समय तो ऐसा भी आया कि सामान्य से अधिक हुई बिक्री। मगर जब हवाओं में एक बार फिर से कोरोना की दहशत घुलने लगी है, तो पिछले साल का वह समय स्मृतियों में आकर डराने लगा है, जब हम सब अपने-अपने घरों में बैठे हुए थे। यही उम्मीद है, जैसे पिछले साल का वो कठिन समय कट गया था, वैसे ही यह भी कट जाएगा। उम्मीद बनाए रखें, सुरक्षित रहें, स्वस्थ रहें। **आपका ही**

शहरयार

शहरयार
शिवना प्रकाशन, पी. सी. लैब,
सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर, म.प्र.
466001,
मोबाइल- 9806162184
ईमेल- shaharyarcj@gmail.com

व्यंग्य चित्र- काजल कुमार

kajalkumar@comic.com

पुस्तक समीक्षा

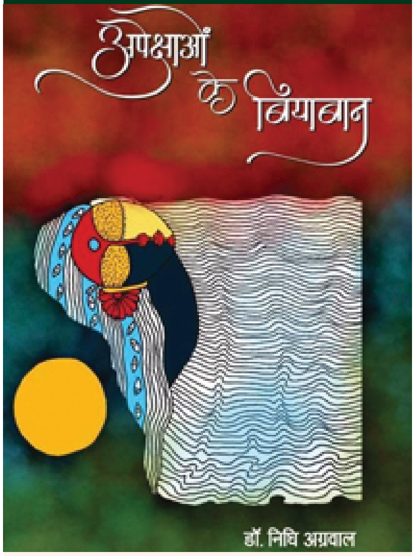

अपेक्षाओं के बियाबान

(कहानी संग्रह)

समीक्षक : दीपक गिरकर

लेखक : डॉ. निधि अग्रवाल

प्रकाशक : बोधि प्रकाशन, जयपुर

दीपक गिरकर
28-सी, वैभव नगर, कनाडिया रोड, इंदौर-452016, मध्यप्रदेश
मोबाइल- 9425067036
ईमेल- deepakgirkar2016@gmail.com

डॉ. निधि अग्रवाल उन कथाकारों में से हैं जो कम लिखकर भी कथा-परिदृश्य में अपनी सार्थक उपस्थिति बनाए हुए है। "अपेक्षाओं के बियाबान" डॉ. निधि अग्रवाल का पहला कहानी संग्रह है, इन दिनों काफी चर्चा में है। डॉ. निधि अग्रवाल के पास एक स्पष्ट और सकारात्मक दृष्टि के साथ कहानी कहने का एक विलक्षण तरीका है। डॉ. निधि अग्रवाल एक चिकित्सक हैं। इस कारण इनकी कहानियों में चिकित्सा क्षेत्र के इनके अपने अनुभव और यथार्थ की व्यापकता देखी जा सकती है। ये अपने अनुभवों को बड़ी सहजता से कहानी में ढाल लेती हैं। इन कहानियों में अनुभूतिजन्य यथार्थ है। डॉ. निधि अग्रवाल ने इस संग्रह की कहानियों में स्त्रियों के मन की अनकही बातों को, उनके जीवन के संघर्ष को और उनके सवालों को रेखांकित किया हैं। इस संग्रह की कहानियाँ ज़िंदगी की हक़ीक़त से रू-ब-रू करवाती है। इस संग्रह की कहानियाँ और कहानियों के चरित्र धीमे और संजीदा अंदाज़ में पाठक के भीतर उतरते चले जाते हैं। इनकी कहानियाँ पाठकों के भीतर नए चिंतन, नई दृष्टि की चमक पैदा करती हैं।

लेखिका अपने आसपास के परिवेश से चरित्र खोजती है। कहानियों के प्रत्येक पात्र की अपनी चारित्रिक विशेषता है, अपना परिवेश है जिसे लेखिका ने सफलतापूर्वक निरूपित किया है। डॉ. निधि अग्रवाल एक ऐसी कथाकार हैं, जो मानवीय स्थितियों और संबंधों को यथार्थ की कलम से उकेरती हैं और वे भावनाओं को गढ़ना जानती हैं। लेखिका के पास गहरी मनोवैज्ञानिक पकड़ है। इनकी कहानियों की कथा-वस्तु कल्पित नहीं है, संग्रह की कहानियाँ सचेत और जीवंत कथाकार की बानगी है और साथ ही मानवीय संवेदना से लबरेज़ हैं। इस कहानी संग्रह में छोटी-बड़ी 12 कहानियाँ हैं। इन कहानियों में कुछ ऐसे चरित्र हैं जो अपनी संवेदनशीलता, मानवीयता, परोपकारिता, सेवाभाविता के कारण सदैव याद किए जाते रहेंगे। इनमें प्रमुख है "अपेक्षाओं के बियाबान" कहानी के शुभेंदु दादा, "अति...रिक्त" कहानी के इंस्पेक्टर महेश, "आईना कभी झूठ नहीं बोलता!" कहानी की पद्मा, "दूसरी पायदान" कहानी के कौस्तुभ सर और अरू, "फ़लक तक चल...साथ मेरे!" कहानी का आभास।

संग्रह की पहली कहानी "अपेक्षाओं के बियाबान" को लेखिका ने काफी संवेदनात्मक सघनता के साथ प्रस्तुत किया है। कहानी का सृजन बेहतरीन तरीके से किया है। कथा नायिका

पाखी की मन: स्थितियाँ और द्वंद्व की एक मर्मस्पर्शी, भावुक कहानी है। कहानी में पाखी का मानसिक ऊहापोह प्रखर रूप में विद्यमान है। पाखी की संवेदनाओं को लेखिका ने जिस तरह से इस कहानी में संप्रेषित किया है वह काबिले तारीफ़ है। निधि जी ने इस कथा को पत्र शैली में लिखकर पाखी की निजी भावनाओं को अभिव्यक्ति दी है। कहानी का शीर्षक "अपेक्षाओं के बियाबान" कथानक के अनुरूप है। निधि जी पाखी के मन के भीतरी तहों में सँजोए सच को स्वाभाविक रूप से अभिव्यक्त करती हैं – इस प्रोजेक्ट ने कितनी दूरियाँ ला दी हैं दादा। सुरभित इस प्रोजेक्ट के लिए छटपटाते हैं और मैं सुरभित के लिए। पिछले छह महीने में शायद ही पन्द्रह दिन घर में रुके हों। मैं नहीं समझ पा रही कि हम पा अधिक रहे हैं कि खो अधिक रहे हैं। बस, एक बेचैनी है भीतर... जिसे देखने वाला कोई नहीं। दादा, आप कहते हैं न कि सुरभित को अपने जीवन का केंद्र न बनाऊँ पर जब मैं उनसे अलग अपनी धुरी तलाशती हूँ तब वे कुछ ऐसा कर देते हैं कि उन्हें पाने की लालसा और बढ़ जाती है... और जब उन्हें पाना चाहती हूँ तो न उनके मन तक पहुँच पाती हूँ न ही रूह तक। इस कहानी को पढ़ते हुए एक मध्यवर्गीय महिला की मनोदशा का बखूबी अहसास होता है। कथाकार इस कथा में स्याह होती संवेदनाओं को उभार कर उनमें फिर से रंग भर देती हैं। कथाकार "यमुना बैंक की मेट्रो" कहानी में विभिन्न किरदारों को समग्रता से पेश करती हैं। कहानी के पात्र हमारे आस-पास के परिवेश के लगते हैं। इस कहानी में पात्रों का चरित्र-चित्रण बहुत ही सशक्त रूप से किया है। लेखिका ने परिवेश के अनुरूप भाषा और दृश्यों के साथ कथा को कुछ इस तरह बुना है कि कथा खुद आँखों के आगे साकार होते चली जाती है। निधि जी की इस कथा में गंध संवेदना की सुंदर अभिव्यक्तियाँ मिलती हैं - मुस्कराहट उसके चेहरे की अकारण ही ओढ़ी कठोरता को हर जो लेती है; जैसे बरसात के बाद पत्तियाँ हो जाती हैं कुछ जवाँ-जवाँ सी। (पृष्ठ 26) मुस्कान उसके चेहरे पर यों खेलती रहती है जैसे किसी माँ की गोदी में शिशु। (पृष्ठ 27) उसके आभूषणों में भी उसके व्यक्तित्व-सी ही नज़ाकत, कमनीयता और ताज़गी रहती है। (पृष्ठ 28) गुलाब के फूल का रंग कोई भी हो, महक और गुण तो वही रहते हैं। आधुनिकता की होड़ में भागते, स्वयं से भी दूर होती इन युवतियों की आपत्तिजनक भाषा से भ्रमित होते हम दरअसल भूल जाते हैं कि यह अँधेरी कोठरी से बाहर आ, प्रकाश में नहाने का प्रथम उन्माद है। (पृष्ठ 30)

"फैंटम लिंब" में आधुनिक जीवन के अंतर्विरोधों को अभिव्यक्ति मिली है। अंबर के साथ जीवन में समिधा ने उद्दात प्रेम और गहरे विषाद दोनों का अनुभव किया। ज़िंदगी के उतार-चढ़ाव में तैरती-डूबती समिधा अंततः अपने जीवन की सार्थकता को एक बिंदु पर स्थिर कर देना चाहती है और वह सब कुछ छोड़कर अपने घर लौट जाती है। निधि जी यथार्थ को पूरी संवेदना के साथ उकेरती हैं। अंबर से उसका रिश्ता भी तो फैंटम लिंब का ही है। वह व्यथित होती है कि कहीं अंबर किसी परेशानी में तो नहीं... बीमार तो नहीं, जबकि असल में अंबर के रिश्ते की डोर कब की कट कर अलग हो चुकी है। बस कुछ अहम के... ज़िद के, भ्रम के तंतु सक्रिय बने हुए हैं। (पृष्ठ 39) लेखिका ने इस कहानी में उत्तराखंड की स्थानीय बोली का बहुत ही सुंदर प्रयोग किया है। कथा नायिका समिधा सांकेतिक प्रतीकों के माध्यम से अपनी स्थिति और भावना अभिव्यक्त करती है। "इस इतवार बाज़ार गई तो बुक स्टोर पर तुम्हारी कहानियों की किताब 'जंगल में उगते शहर' लगी थी। देखकर लगा कि जितना घातक जंगल में शहरों का उगना है, उतना ही शहर का जंगल बनना भी है न। और जंगल और शहर के अर्थ भी तो निश्चित नहीं, सन्दर्भ के साथ बदलते रहते हैं। इन जंगलों की पगडंडियों पर मंज़िल तलाशते और शहरी सड़कों पर सिग्नल की प्रतीक्षा... दोनों से ऊब चुकी हूँ। अब एक छोटे क़स्बे में एक छोटा आशियाना चाहती हूँ... जहाँ अनिश्चितता और संशय के बादल न मँडराते हों। सुकून का अंशुमाली दस्तक दे रहा है। नया सवेरा... नया उजाला... नया अध्याय।" "अति...रिक्त" कहानी एक बिलकुल अलग कथ्य और मिज़ाज की कहानी है जो पाठकों को काफी प्रभावित करती है। कहानी में लेखिका ने संवेदना के मर्मस्पर्शी चित्र उकेरे हैं। कहानी में मरती जा रही संवेदना और मानवीय धूर्तता के दर्शन होते हैं। किस तरह अर्थ के पीछे दौड़ता वर्तमान समाज इंसानियत को भूला देता है। कहानी में समाज का नग्न सच दिखलाई पड़ता है। कहानी की एक पात्र सुदर्शन निरीह सिद्धार्थ पर आरोप लगाती है तो उसका चरित्र पूरे निम्नवर्ग की स्थिति को सामने लाकर खड़ा कर देता है। कथाकार ने अतिरिक्त क्रोमोज़ोम वाले बच्चे की माँ आनंदी की मनोदशा का मर्मस्पर्शी चित्रण इस तरह किया है : "दरअसल ख़तरा सिद्धार्थ नहीं, यह अवसरवादी समाज है जगन्नाथ जी। इस अतिरिक्त क्रोमोज़ोम वाले बच्चे को अति-समझदार दुनिया से ख़तरा है। जब तक मैं हूँ तब तक यह मेरे साथ ही रहेगा। मरते वक़्त ज़रूर अपने हाथों से ज़हर दे जाऊँगी।" निधि जी ने एक माँ की छटपटाहट को स्वाभाविक रूप से रेखांकित किया है। एक विवश माँ की ज़िंदगी का ऐसा करुण दृश्य इस कहानी में उपस्थित है कि मन उद्वेलित हो उठता है। सिद्धार्थ डाउन सिंड्रोम का शिकार है। उसे प्यार और सहयोग सिर्फ़ अपने माता-पिता से ही मिलता है।

" परजीवी" में नारीजनित कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति है। लेखिका ने माँ की ममता को अत्यन्त आत्मीयता एवं कलात्मक ढंग से चित्रित किया है। आँखें धान के खेत-सी लबालब भरी थीं और आई.सी.यू. की मद्धिम रोशनी में भी माँ का चेहरा चाँद सा चमक रहा था। व्यक्ति अपना सब काम स्वयं कर सकता है लेकिन प्रेम में वह परजीवी बन जाता है। लेकिन माँ कभी भी परजीवी नहीं हो सकती। माँ अपने बच्चों का और अपने पूरे परिवार को सँभालती है। माँ सब कुछ याद रखती है लेकिन अपने स्वयं की दवाइयाँ लेना भूल जाती है। "मोहर" शीर्षक को सार्थक करती, बचपन के आत्मीय प्रेम की अनुभूतियों को अभिव्यक्त करती एक लाजवाब कहानी

है। सहज, संवेदनशील मानव मन से साक्षात्कार कराती इस कहानी में कहानीकार ने कहानी की नायिका निशिता के मनोभावों को खूबसूरती से व्यक्त किया है। कहानी में सहजता है। इस कथा की भाषा में चित्रात्मकता, भावानुकूलता, रूमानियत दृष्टिगोचर होती है। कहानी में समाज की मानसिकता के स्पष्ट दर्शन है।

"दंड-निर्धारण" बिलकुल अलग तरह के विषय पर लिखी गई कहानी है। यह एक मनोविश्लेषणात्मक शैली की कहानी है। यह दो लोकों - पृथ्वी लोक और देवलोक, दो भिन्न चरित्र नायकों की कहानी है। एक आदित्य जो संपूर्ण जीवंतता के साथ जटील जीवन से संघर्ष करता है और दूसरा महर्षि आदित्यनाथ जो देवलोक का निवासी है। आदित्य और महर्षि आदित्यनाथ दोनों विभिन्न लोकों के होते हुए भी एक ही मनोदशा से गुज़र रहे हैं। इस कहानी में प्रेम, आसक्ति, विरक्ति, वासना, भावुकता, सम्मोहन, आनन्द, आत्मीयता इत्यादि मनोवृत्तियाँ बड़े सूक्ष्म रूप से स्पष्ट हुई है। इसमें व्यक्तित्व के दोहरेपन, उसके प्रेम संबंधों के सूक्ष्म चित्र दिखते हैं। इस कहानी में वातावरण और परिवेश का सूक्ष्म, सार्थक, प्रतीकात्मक चित्रण विद्यमान है। कहानीकार लिखती हैं - "हिम शिखरों के बीच कल्पतरु और पारिजात के वृक्षों की कतारें अपनी भुजाएँ बढ़ाए मानों मेरा स्वागत कर रही हों।"

यह कहानी पूर्णतः अतिशयोक्तिपूर्ण, परम्पराबद्ध और आदर्शवादी है। इस कहानी में आदित्य और उसकी पत्नी जयश्री का संघर्ष है। साथ में देवलोक की कथा महर्षि आदित्यनाथ, गुरु तीक्ष्णशृंगा और उनकी पुत्री श्रीपदा पात्रों के माध्यम से चलती है। देवलोक कथा की प्रत्येक प्रस्तुति के बाद आदित्य और जयश्री की कथा एक भीषण पारिवारिक समस्या बन कर सामने आती है और आगे आदित्य का स्वास्थ्य काफी बिगड़ जाता है। ऐसी अवस्था में जयश्री तन-मन-धन से आदित्य की सेवा सुश्रुषा करती है। वहीं देवलोक की कथा में श्रीपदा अपने पिता और देवलोक के नियमों के विरुद्ध जाकर महर्षि आदित्यनाथ का साथ देती है। श्रीपदा के पात्र को जिस प्रकार कथाकार ने गढ़ा है, उससे ऐसा लगता है कि श्रीपदा सजीव होकर हमारे सामने आ गई है। वैसे देवलोक की कथा आदित्य के अवचेतन मन की कथा है। जब वर्तमान की कथा के आदित्य और जयश्री का दर्द, मन का पश्चाताप और व्यथा का बोझ कहानीकार सीधे सीधे नहीं कह पाती तो उसकी सांकेतिक अभिव्यंजना के लिए देवलोक कथा का घटना-क्रम वर्जित होने लगता है। अपनी पत्नी को दूसरे व्यक्ति की बाहों में देखकर आदित्य अपनी पत्नी को मन से क्षमा कर देता है। कहानी के इस आदर्श की यथार्थ से संगति नहीं बैठती है और इससे कहानी के समग्र प्रभाव को ठेस पहुँचती है। आदित्य की पत्नी के दूसरे व्यक्ति के साथ संबंध यह बताते है कि प्रेम में अंधे सिर्फ पुरुष ही नहीं होते महिलाएँ भी इससे अछूती नहीं हैं और प्रेम, आसक्ति के आगे समाज, गृहस्थी, सामाजिक प्रतिष्ठा सभी नगण्य हो जाती है। इस कहानी में पात्रों की भीतरी यातना तीव्रता के साथ व्यक्त हुई है। लेखिका ने इस कहानी में स्त्री-पुरूष संवेगों का अत्यंत बारीकी से और बहुत सुन्दर चित्रण किया है। इस कथा में श्रीपदा का किरदार प्रभावशाली है। कितने भी कठोर दंड निर्धारित कर दिए जाए, उसके बाद भी महर्षि आदित्यनाथ जैसे योगी कोमलांगी, कोमलकण्ठा श्रीपदा के उद्वेलित करने वाले सौंदर्य और उसकी आँखों की चंचलता के सम्मोहन में बँधकर आसक्त हो सकते हैं तो धरती पर रहने वाले साधारण इंसान की क्या मजाल। कथाकार ने इस कहानी के अंत में एक बहुत बड़ा सवाल पाठक को थमा दिया है। "काश धरती लोक पर भी कुत्सित विचारों के पनपते ही कठोर दंड देने का प्रावधान होता " यह कहानी एक व्यापक बहस को आमंत्रित करती है।

पुरुष सत्तात्मक जैसे गंभीर विषय को लेकर लिखी गई कहानी "हरसिंगार जानता है उत्तर" आज के तथाकथित सभ्य समाज को आईना दिखाती है। इस कहानी में उपन्यास के तत्व मौजूद हैं। लेखिका ने कैंसर पीड़ित रिद्धि द्वारा भोगे जाने वाले मन: संताप, रिद्धि के पति की हरक़तों और आभासी दुनिया की हक़ीक़त को रेखांकित किया हैं। लेखिका ने एक स्त्री के जीवन का कटु यथार्थ इन शब्दों में पिरोया हैं : "रौनक किसी से बात करता है रे। पहले भी देखा था मैंने... फिर उस लड़की से बात भी की। दोनों बोले 'कुछ नहीं'। फिर रौनक ने बच्चों की क़सम खाई कि अब कभी नहीं करूँगा लेकिन कल फिर मैंने देखा नंबर अलग था लड़की वही।" मैं स्तब्ध थी। रिद्धि की बंगाली मिश्रित हिन्दी के कारण मैं ही कुछ ग़लत समझ रही हूँ क्या, या वह यही कह रही है। कैंसर के दैत्य से जूझती पत्नी को छोड़कर कैसे कोई... कछुआ फिर अपने पैर सिकोड़ने लगा।

"आईना कभी झूठ नहीं बोलता!" कहानी की नायिका रूपा एसिड अटैक का शिकार होती है। कहानी का हर किरदार पद्मा, रूपा, गंगाराम, रीना, जतिन, बीरेन, भोलानाथ अपनी विशेषता लिए हुए हैं और अपनी उसी खासियत के साथ सामने आते हैं। लेखिका ने पात्रों के मनोविज्ञान को अच्छी तरह से निरूपित किया है और उनके स्वभाव को भी रूपायित किया है। कहानी में यह कथन समाज में एसिड अटैक से पीड़ित महिलाओं की स्थिति को बहुत कुछ रेखांकित करता है। कहानी में जीवन का यथार्थ अभिव्यक्त हुआ है। इस हादसे ने उसे समाज का भी असली चेहरा देखने का अवसर दिया। वह जान पाई कि सामाजिक विकृति के आगे उसकी शारीरिक विद्रूपता कितनी सूक्ष्म है। (पृष्ठ 105) समाज में बढ़ रही संवेदनहीनता का विकृत चेहरा लेखिका को व्यथित करता है। कथा नायिका पद्मा की पीड़ा, बैचेनी, त्रासदी को लेखिका ने अपनी आवाज़ दी है। पद्मा की यह करूण कथा मन को आहत करती है। यह कहानी पाठकों की चेतना को झकझोरती है।

"तितली और तिलचट्टा" कहानी की कथावस्तु भावप्रधान है। इसमें कथाकार ने कहानी की नैरेटर, जो कि कहानी की मुख्य किरदार है, की भावदशा का कुशलतापूर्वक चित्रण किया है साथ ही उसकी मनोदशा संकेतात्मक रूप से सामने आई है। निधि जी ने

स्त्री संवेगों और मानवीय संवेदनाओं का अत्यंत बारीकी से और बहुत सुंदर चित्रण किया है। कहानीकार ने इस कहानी में एक नारी की संवेदनाओं की पराकाष्ठा, स्त्री के अंदर की फैंटेसी और उसके विचलन को, स्त्री मन की आकांक्षाओं को सहजता के साथ बख़ूबी चित्रित किया है। कहानीकार ने स्त्री जीवन की नियति को प्रतीकात्मकता के साथ रेखांकित किया है - रात गहराने पर शीशा स्याह हो निरर्थक हो जाता है। अनिकेत के मचलते हाथों को तिलचट्टे का कोई खुरदुरा पैर नहीं महसूस होता, बचती है तो केवल तितली के कोमल पंख की कोमलता हथेलियों में सहेजने लायक़। यह कैसा उन्माद होता है पुरुषों में? ख़ूबसूरती की परिभाषा बदल जाती है या आँखों की दृश्य शक्ति या फिर किसी शबनम या रक्कासा की सुखद कल्पना शहज़ाद भाभी के शरीर के सभी बेडौल उभारों में लावण्य भर देती है। (पृष्ठ 117) पति अपनी पत्नी को सिर्फ़ देह मानता है उसकी भावनाओं की कोई कद्र नहीं। इस कहानी के माध्यम से नारी मन की व्यथा, उसकी वेदना, विवशता और लाचारी को स्पष्ट अनुभव किया जा सकता है।

"दूसरी पायदान" एक लंबी कहानी है। 85 पृष्ठ लंबी। नारी संवेदना को अत्यन्त आत्मीयता एवं कलात्मक ढंग से चित्रित करती रोचक कहानी है जो पाठकों को काफी प्रभावित करती है। इस कहानी में एक अवसादग्रस्त रंगकर्मी के प्रति कथा नायिका की बदलती मनोसंवेदना का वर्णन है। कथाकार ने इस कहानी का गठन बहुत ही बेजोड़ ढंग से प्रस्तुत किया है। इस कहानी का शीर्षक प्रतीकात्मक है जिसमें इस कहानी की मुख्य किरदार अरू को अपनी चेतना से जूझते हुए दिखाया गया है। यह रचना पुरुष मन को समझने की एक नई कोशिश है। कहानी में कौस्तुभ सर का चरित्र बड़ी आत्मीयता से अंकित किया गया है। लेखिका रंगकर्मियों की जिंदगी के हर पार्श्वो को देखने, छूने तथा उकेरने की निरंतर कोशिश करती हैं। कहानी में चित्रकला और साहित्य जीवन को जीवंतता के साथ प्रस्तुत किया गया है। सम्पूर्ण कहानी में कथा नायिका अरू के अंतर्मन की जटिल चेतना का विश्लेषण है। अरू कौस्तुभ सर से मिलने के बाद जिन अनुभवों से गुज़रती है, उन अनुभवों का वह पुनरावलोकन करती है, जिज्ञासु पाठक अरू की कशमकश के साक्षी बनते हैं। यह कथा एक अलग कोण से इसी दशा व दिशा की पड़ताल करती है। इस कहानी के कथानक में आरोह-अवरोह के क्रम बहुत ही कलात्मकता के साथ स्पष्ट हुए हैं। कौस्तुभ सर नॉस्टेल्जिया से ग्रस्त हैं लेकिन कथा नायिका अरू कौस्तुभ सर के जीवन में किस प्रकार सकारात्मकता लाती हैं, यह तो आप इस कहानी को पढ़कर ही समझ पाएँगे। पात्रों के व्यक्तित्व संवादों की वजह से ही सहज उभर आते हैं। कौस्तुभ सर और अरू का चरित्र चित्रण चेतनाप्रवाह शैली में किया गया है। कहानीकार ने अरू के अंतर्द्वंद्व को बख़ूबी व्यक्त किया है – "सर आप मेरी दुविधा समझ नहीं पाएँगे। आपके लिए प्रेम करना सरल है। आपको अनुमति नहीं लेनी। न ख़ुद से, न मुझ से, न समाज से ! मेरी परिस्थितियाँ भिन्न हैं। मैं अपने द्वारा ही चिन्हित परिधियों में घिरी हूँ। भावनाओं की डोर से बँधी हूँ और कर्त्तव्यों में उलझी हूँ। आपकी निष्ठा पर मुझे संदेह नहीं। मन की शुद्धता पर विश्वास है और विचारों की पवित्रता पर भी अगाध श्रद्धा रखती हूँ लेकिन मेरे लिए जानना आवश्यक है कि इस स्नेह को स्वीकारने की अनुमति मेरे संस्कार, मेरे अधिकार और मेरे विचार मुझे देते हैं या नहीं। (पृष्ठ 176) इस कहानी में स्त्री पुरुष संबंधों के विविध स्तरों को अत्यंत सूक्ष्मता एवं प्रामाणिकता के साथ अभिव्यक्त किया है। लेखिका ने कौस्तुभ सर और अरू का सजीव चित्रण अद्‌भुत किया है। कहानी के संवाद अत्यंत सशक्त हैं। कथाकार ने कथानायिका अरू के कथन को बड़े ही स्पष्ट तरीके से शब्दबद्ध किया है – "मैंने विभोर से कहा भी है कि मुझे राम की चाह नहीं जो सीता को सदैव दूसरे पायदान पर रखे। काश ! तुम रावण बन जाओ और मेरे प्रेम में रीति-रिवाज़, समाज, रिश्तेदारी सब भुला दो। वह हँसने लगा था। बोला, यही कलयुग है।" मैंने भी हँसते हुए कहा था, "हाँ, हम कलयुगी स्त्रियाँ हैं, हमें राम और बुद्ध नहीं, शाहरुख़ लुभाता है।" भाषा की रवानगी और क़िस्सागोई की कला इस कहानी को और अधिक सशक्त बनाती है। इस कथा में अनुभूतियों की मधुरता है, यह कहानी निधि जी के सामर्थ्य से परिचित कराती है। डॉ. निधि अग्रवाल ने इस कहानी के माध्यम से साबित किया हैं कि स्त्री जीवन की बहुरंगी छवि को सहेज पाना सिद्धहस्त लेखनी द्वारा ही संभव है।

"फ़लक तक चल...साथ मेरे !" इस संग्रह की महत्त्वपूर्ण कहानी है। इस कहानी में सुलक्षणा मामी का अपनी भाँजी वनिता के प्रति निष्ठुर व्यवहार का चित्रण है। कहानीकार ने एक नारी की दयनीय गाथा को कहानी की मुख्य किरदार वनिता के माध्यम से मार्मिक ढंग से कलमबद्ध किया है। वनिता के जीवन की कहानी मन को भिगोती है। वनिता की व्यथा और उसके नारकीय जीवन का जीवंत दृश्य गहरे तक हिलाकर रख देता है। जीवन यथार्थ के कटु सत्य से जूझती वनिता जैसी नारी हमारी चेतना को झिंझोड़ती है। यह रचना विनीता जैसी नारी की अभिशप्त ज़िंदगी का जीवंत दस्तावेज़ प्रतीत हुई है।

" अपेक्षाओं के बियाबान", " फैंटम लिंब", "हरसिंगार जानता है उत्तर", "आईना कभी झूठ नहीं बोलता !", "तितली और तिलचट्टा", " दूसरी पायदान" आदि कहानियों में नारी मन के अंतर्द्वंद और मानसिक संघर्ष की अभिव्यक्ति हुई है। संग्रह की कहानियों का सधा हुआ कथानक, सरल-स्पष्ट भाषा, चरित्र चित्रण व पात्रों के आपस की बारीकियाँ, पात्रों का रहन-सहन, व्यवहार, उनकी स्वाभाविकता, सामाजिक, आर्थिक स्थिति आदि बिंदु इस कृति को बेहद उम्दा बनाती है। इस संग्रह की कहानियाँ अपनी सार्थकता सिद्ध करती हैं। इनकी कहानियों में व्याप्त स्वाभाविकता, सजीवता और मार्मिकता पाठकों के मन-मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव छोड़ने में सक्षम है। स्त्री के मन को छूती हुई ये कहानियाँ पाठक के मन में समा जाती हैं। इस संकलन की कहानियों में लेखिका की परिपक्वता, उनकी

सकारात्मकता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। निधि जी ने कहानियों में घटनाक्रम से अधिक वहाँ पात्रों के मनोभावों और उनके अंदर चल रहे अंतर्द्वंद्वों को अभिव्यक्त किया है। डॉ. निधि अग्रवाल की कहानियाँ बदलते समय की आहट हैं। लेखिका जीवन की विसंगतियों और जीवन के कच्चे-चिठ्ठों को उद्घाटित करने में सफल हुई है। इस संग्रह की कहानियों के शीर्षक कथानक के अनुसार हैं और शीर्षक कलात्मक भी हैं। कहानियों में कथा पात्रों के मन की गाँठे बहुत ही सहज और स्वाभाविक रूप से खुलती हैं, वे अपनी तरफ से कोई फ़ैसला नहीं देती है, मन की अनकही उथल-पुथल को शब्दों के धागों में सुंदरता से पिरोती है। इस संग्रह की कहानियाँ जीवन और यथार्थ के हर पक्ष को उद्घाटित करने का प्रयास करती है। कहानियों का कथानक निरंतर गतिशील बना रहता है, पात्रों के आचरण में असहजता नहीं लगती, संवाद में स्वाभाविकता बाधित नहीं हुई है। कथाकार ने जीवन के यथार्थ का सहज और सजीव चित्रण अपने कथा साहित्य में किया है। संग्रह की अधिकांश कहानियाँ आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई है। संग्रह की सभी कहानियाँ शिल्प और कथानक में बेजोड़ हैं और पाठकों को सोचने को मजबूर करती हैं। डॉ. निधि अग्रवाल की कहानियों का शिल्प चरित्रों की मन:स्थिति एवं कथ्य की आवश्यकता के अनुरूप निर्धारित होता है। लमही पत्रिका के प्रधान संपादक श्री विजय राय ने लेखिका की कथा शैली को रेखांकित करते हुए लिखा हैं - निधि अग्रवाल गहन जीवनावलोकन की अप्रतिम कथाकार हैं। उन्होंने जहाँ अपनी निजी कथा शैली का विकास किया है वहीं वे लंबे समय तक याद की जाने वाली कहानियों की सतत रचना में संलग्न हैं। इस संग्रह की कहानियाँ पाठकों को मानवीय संवेदनाओं के विविध रंगों से रू-ब-रू करवाती हैं। रिश्तों और मानवीय संबंधों की बारीक पड़ताल की गई है। संग्रह की सभी कहानियाँ मानवीय चरित्र का सहज विश्लेषण करती हैं। कथाकार ने नारी जीवन के विविध पक्षों को अपने ही नज़रिए से देखा और उन्हें अपनी कहानियों में अभिव्यक्त भी किया हैं।

कहानीकार ने पुरुषों और नारियों की सूक्ष्म मनोवृत्तियों, जीवन की धड़कनों को इन कहानियों में अभिव्यक्त किया है। हर कहानी में अपने वक़्त की धड़कनें होती हैं और वे सब निधि जी की इन कहानियों में हैं। कहानियों में जीवन की गहराई है। निधि जी ने मुखर होकर अपने समाज और अपने समय की सच्चाइयों का वास्तविक चित्र प्रस्तुत किया हैं। निधि जी की कहानियाँ भाषा परिवेश के अनुकूल भावों के उतार-चढ़ाव को स्पष्ट करने वाली है। कथाकार की भाषा में पाठक को बाँधे रखने का सामर्थ्य है। संवेदना के धरातल पर ये कहानियाँ सशक्त हैं। दोआबा पत्रिका के संपादक श्री जाबिर हुसैन ने निधि जी कहानियों के पात्रों की संवेदनशीलता पर अपनी सारगर्भित टिप्पणी इस तरह की हैं - निधि अग्रवाल की कहानियों के पात्र अपनी संवेदनशीलता के कारण हमारे मन के किसी कोने में अपनी जगह लंबे समय तक बनाए रखते हैं। एक सफल रचनाकार की सारी विशेषताएँ इनकी कहानियों में मौजूद हैं। संग्रह की हर कहानी उल्लेखनीय तथा लाजवाब है और साथ ही हर कहानी ख़ास शिल्प लिए हुए है। इन कहानियों में स्त्री जीवन के यथार्थ की प्रभावशाली अभिव्यक्ति हुई है। ये कहानियाँ सिर्फ़ हमारा मनोरंजन नहीं करती बल्कि समसामयिक यथार्थ से परिचित कराती हैं। इन कहानियों में प्रयुक्त कथानुकूलित परिवेश, पात्रों की अनुभूतियों, पात्रों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, कहानियों में लेखिका की उत्कृष्ट कला-कौशलता का परिचय देती है। कथा सृजन की अनूठी पद्धति डॉ. निधि अग्रवाल को अपने समकालीन कथाकारों से अलग खड़ा कर देती है। कहानियों का यह संग्रह सिर्फ पठनीय ही नहीं है, संग्रहणीय भी है। इस संग्रह की कहानियाँ पढ़कर ऐसा नहीं लगता है कि "अपेक्षाओं के बियाबान" इनका पहला कहानी संग्रह है। डॉ. निधि अग्रवाल की प्रथम कृति "अपेक्षाओं के बियाबान" का साहित्य जगत् में स्वागत है, इस शुभकामना के साथ कि उनकी यह यात्रा जारी रहेगी।

000

फार्म IV

समाचार पत्रों के अधिनियम 1956 की धारा 19-डी के अंतर्गत स्वामित्व व अन्य विवरण (देखें नियम 8)।

पत्रिका का नाम : शिवना साहित्यिकी

1. प्रकाशन का स्थान : पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001

2. प्रकाशन की अवधि : त्रैमासिक

3. मुद्रक का नाम : ज़ुबैर शेख़।
पता : शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एमपी नगर, भोपाल, मप्र 462011
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

4. प्रकाशक का नाम : पंकज कुमार पुरोहित।
पता : पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

5. संपादक का नाम : पंकज सुबीर।
पता : रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

4. उन व्यक्तियों के नाम / पते जो समाचार पत्र / पत्रिका के स्वामित्व में हैं। स्वामी का नाम : पंकज कुमार पुरोहित। पता : रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

मैं, पंकज कुमार पुरोहित, घोषणा करता हूँ कि यहाँ दिए गए तथ्य मेरी संपूर्ण जानकारी और विश्वास के मुताबिक सत्य हैं।

दिनांक 20 मार्च 2021

हस्ताक्षर पंकज कुमार पुरोहित

(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

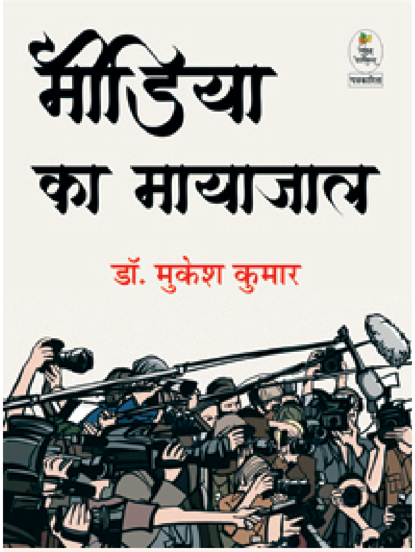

मीडिया का मायाजाल

(पत्रकारिता)

समीक्षक : प्रेम कुमार

लेखक : डॉ. मुकेश कुमार

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सीहोर

प्रेम कुमार
ए-302, विक्टर, एच.आर.सी प्रोफेशनल्स हब, वैभव खण्ड, इंदिरापुरम, उत्तर प्रदेश-201014
मोबाइल- 8447011477
ईमेल- AskThePremKumar@gmail.com

'मीडिया का मायाजाल' मीडिया विषयक चार दर्जन लेखों का संग्रह है, जिसमें बीते चार-पाँच साल में मीडिया के स्वभाव में आए परिवर्तन चिंता के साथ व्यक्त हुए हैं। यह पुस्तक लेखक डॉ. मुकेश कुमार के सतत् लेखन का संकलन निश्चित रूप से है लेकिन इसका मज़बूत वैचारिक पक्ष पुस्तक को उपयोगी बनाता है। हर वर्ग के लोगों के लिए यह पुस्तक महत्त्वपूर्ण है चाहे वे राजनीतिक हों, बुद्धिजीवी, पत्रकार, पत्रकारिता के छात्र या फिर आम लोग।

लेखक ने तीन दशक से अधिक समय के अपने पत्रकारीय अनुभवों से इस पुस्तक के हर पन्ने और पंक्तियों को बुना है। यह कहना ज़रूरी नहीं है कि लेखक पत्रकारिता की दुनिया में कितने नामचीन हैं क्योंकि इस परिचय के बगैर भी पाठक पुस्तक के कथ्य को सहज सहर्ष स्वीकार कर लेंगे। यही पुस्तक की ख़ासियत है। तथ्य, कथ्य, विचार, अभिव्यक्ति का सौंदर्य...सब कुछ इस पुस्तक के बागीचे में माली रूपी लेखक के तन-मन-धन से बोए गए हैं, सँजोए गए हैं।

सन्नाटे को चीरने की बेचैनी दिखती है जब डॉ. मुकेश कुमार चकित होकर पूछते हैं इतना सन्नाटा क्यों है भाई...! रुपर्ट मर्डोक की पत्रिका न्यूज ऑफ द वर्ल्ड के फ़ोन हैकिंग कांड के बाद पत्रकारिता के अपराधीकरण का सच सामने आया था। जस्टिस लेवसन की अध्यक्षता में गठित कमेटी ने मीडिया को सनसनी के पीछे भागता हुआ, धंधेबाजी करता हुआ पाया था। हिन्दुस्तान में भी वैसी ही कहानी लगातार दोहरायी जा रही है। मगर, सन्नाटा है कि टूटता नहीं। संपादकों के हृदय परिवर्तन की झूठी आशा पर लेखक ने कठोर सवाल खड़ा किया है- "संपादक वही लोग बनाए जा रहे हैं जिनमें संपादकीय नहीं, व्यावसायिक दक्षता होती है। और ये तो आप जानते हैं कि व्यवसाय में रीढ़ का होना एक ग़ैर ज़रूरी शर्त है।"

सवाल के रूप में मीडिया में दलाल तंत्र की मौजदूगी की बात लेखक ने बड़ी शिद्दत से उठाई है। नीरा राडिया टेप कांड, अगस्ते वेस्टलैंड हैलीकॉप्टर सौदे में रिश्वतखोरों में पत्रकारों के नाम और ऐसी ही घटनाओं से पत्रकार बिरादरी शक़ के दायरे में आ गई है। डॉ. मुकेश लिखते हैं, "ये न तो मीडिया के लिए शुभ है और न ही लोकतंत्र के लिए।" प्रसार भारती से लोक प्रसारक होने का तमगा छीनने की वकालत लेखक करते हैं क्योंकि बकौल लेखक यह नालायक हो गया है। प्रसार भारती के २० साल के कामकाज की समीक्षा से लेखक पाते हैं कि निष्पक्षता तो दूर यह सरकारी प्रोपेगंडा में लगा हुआ दिखता है।

कैराना में एक बीजेपी नेता की कथित सूची के आधार पर मुसलमानों के डर से हिन्दुओं के पलायन की कहानी पर डॉ. मुकेश कुमार की बेबाक कलम चली है। इसे उन्होंने 'काले मुँह वाले चैनलों का कैराना' बताया है। पत्रकारिता में सही-ग़लत को परखने की क्षमता में जो गिरावट आई है या आ रही है उसका बारीकी से विश्लेषण इसमें मिलता है। टीवी की एक ख़ासियत बताते हुए लेखक लिखते हैं कि अगर यह छवि निर्माण का शक्तिशाली औज़ार है तो इसे छवि को ध्वस्त करने में भी वक्त नहीं लगता। टाइम्स नाऊ के एंकर अर्णब गोस्वामी पीएम उम्मीदवार नरेंद्र मोदी का पहला इंटरव्यू लेकर वाहवाही लूटते हैं, उन्हीं की चारों तरफ़ निंदा-भर्त्सना होने में भी देर नहीं लगती। उनकी छवि २०१४ में हुए सत्ता परिवर्तन के बाद से सरकार परस्त, संघपरस्त और मोदी परस्त राष्ट्रवादी पत्रकार की हो चुकी है।

लेखक इस बात पर चिंता जताता है कि मुख्य धारा की मीडिया में उग्र, नस्लवादी और

हिंसक पत्रकारों की नई जमात पैदा हो गई है। यह जमात अज्ञानी भी है, कूपमंडूक भी। भ्रम का शिकार भी है यह और अहंकारी भी। इनके सहारे ही नकली विकास का प्रोपेगेंडा चलता है। एक झूठ को सौ बार दोहराने पर सच महसूस कराने का गोएबल्स फॉर्मूला मीडिया के जरिए अमल में लाया जाता है। फर्ज़ी आँकड़ों से कभी गुजरात मॉडल की बात होती है, कभी बिहार मॉडल की। समय इन सभी दावों को ध्वस्त भी कर देता है। स्वच्छता अभियान को कवर करते समय यही मीडिया कैसे और कब खुद कूड़ा-करकट फैलाता नज़र आने लगता है किसी को महसूस ही नहीं होता। मलिन बस्तियों तक की तस्वीरें भुलाकर प्रायोजित तस्वीरों की गंदगी फैलाकर मीडिया महापाखंडी होने का सबूत खुद सामने रखता है।

लेखक का मानना है कि आज का मीडिया जंगखोर है। शांति के बजाए जंग की वकालत करता है। युद्ध को मनोरंजन के तौर पर पेश करता है। १९९१ में सीएनएन की लोकप्रियता के बाद यह ट्रेंड चला था, लेकिन अब यह और भी बुरे स्वरूप में सामने आ चुका है। हथियार बेचने वाले गिरोह के हाथों मीडिया इस्तेमाल होने लगा है। लेखक कहते हैं, "ये कोई छिपी बात तो है नहीं कि पूरा का पूरा मीडिया काले धन के कीचड़ में लोटपोट हो रहा है। अगर कोई ईमानदार जाँच एजेंसी मीडिया संस्थानों के खाते ढंग से खँगाले तो सबकी पोल-पट्टी खुल जाएगी।" टीवी रेटिंग में 'धाँधली' के सवाल को लेखक ने २०१६ में ही उठाया था जो आज की तारीख़ में बहुत मौजूँ हो चुका है। तब इंडिया न्यूज़ और तीन अन्य टीवी चैनलों को चार हफ्ते तक सस्पेंड करने का निर्णय ब्रॉडकास्ट ऑडियंस रिसर्च कौंसिल ने लिया था।

लेखक ने मीडिया के प्रति नरेंद्र मोदी सरकार के रुख़ को बहुत पहले सामने रख दिया था। नरेंद्र मोदी बनारस की सभा में नोटबंदी के सवाल पर एक रिपोर्टर की खिल्ली उड़ाते हैं, तो सूचना एवं प्रसारण मंत्री वेंकैया नायडू दिल्ली में सरे आम मीडिया पर बरसते हैं। स्मृति ईरानी, रविशंकर प्रसाद, गिरिराज सिंह जैसे नेता भी अपने ओहदे के दम पर पत्रकारों को धमकाते नज़र आते हैं। लेखक ने २०१६ में ही पूछा था कि ये अंदाज़-ए-गुफ्तगू क्या है? आज यह स्थिति और गंभीर हो चुकी है। 'ट्रम्प और मोदी का मीडिया' के जरिए लेखक बताते हैं कि अमेरिका में मोदी के विरोध की हिम्मत मीडिया में है जबकि यही हिम्मत भारत में खोता नज़र आ रहा है। मोदी हों या ट्रंप दोनों ने मीडिया के सवालों से बचने के लिए मीडिया को ही भ्रष्ट बताने का तरीका अपनाया। मोदी तो मीडिया को न्यूज़ ट्रेडर तक बता चुके हैं।

फ़ेक न्यूज़ के ख़तरनाक जाल से लेखक आगाह करते हैं। सूचनाओं के विस्फोट ने पूरी दुनिया को पारदर्शी और विश्वसनीय बनाने के बजाए संदिग्ध बना दिया है। अब ख़बर भी शक़ के साथ देखी जाने लगी है। डोनाल्ड ट्रंप जैसे शक्तिशाली अमेरिकी राष्ट्रपति भी फ़ेक न्यूज़ को अनजाने में आगे बढ़ाते नज़र आते हैं यानी फ़ेक न्यूज़ का शिकार हो जाते हैं।

लेखक बताते हैं कि झूठ फैलाने के कारोबार में राजनीति से जुड़े लोग अधिक सक्रिय हैं। घिनौनी पत्रकारिता के अंध जागरण से लेखक ने आगाह किया है। सांप्रदायिक संपादकीय नीति ने मीडिया के एक तबके को हिन्दुत्ववादियों का प्रवक्ता बना डाला है। जब आम लोगों की अभिव्यक्ति से मीडिया दूर होने लगता है तो गुरमेहर के पोस्टर बच्ची की मार्गदर्शक बनकर सामने आ जाते हैं। सर्वशक्तिमान मीडिया एक बच्ची के प्रतिरोध की ख़बर उठाने को मजबूर हो जाता है।

मीडिया पत्थरबाज़ी का विरोध करते-करते इंसान को ह्यूमन शील्ड बनाने की सैन्य हरकत का समर्थन करने की हद तक जा पहुँचता है। यह योगी आदित्यनाथ को स्वामी विवेकानंद से अधिक महान् बताने की मूर्खता भी करता है। सुपारी पत्रकारिता इसकी अनन्य ख़ासियत है। रिपब्लिक टीवी और अर्णब गोस्वामी इसके उदाहरण हैं। वहीं, शशि थरूर और लालू प्रसाद सुपारी किलिंग के उदाहरण। अमरनाथ यात्रियों पर हमले के मामले में तीर्थयात्रियों की जान बचाने वाला ड्राइवर सलीम मुसलमान था। लेकिन, मीडिया ने उसे हिन्दू बताया और मनगढ़ंत कहानियाँ छापीं। ड्राइवर को मुसलमान बताने वाली मीडिया के एक तबके ने तो उसे आतंकवादियों से मिला हुआ करार दिया। मीडिया के बेहद घिनौने सांप्रदायिक रूप का यह उदाहरण है।

नोबल पुरस्कार से सम्मानित प्रोफ़ेसर अमर्त्य सेन पर बनी डॉक्यूमेंट्री फिल्म द आर्ग्यूमेंटेटिव इंडियन को इसलिए हरी झंडी नहीं दी जाती है क्योंकि उसमे गाय, हिन्दुत्व और गुजरात जैसे शब्द हटाने की शर्त नहीं मानी जाती। असहमति सरकार को पसंद नहीं और इस वजह से तर्क भी नापसंद हैं। मीडिया इसी सरकारी सोच का भोंपू बन चुका लगता है। लेखक ने बताया है कि त्रिपुरा के मुख्यमंत्री मानिक सरकार के स्वतंत्रता दिवस के संबोधन को दूरदर्शन एवं आकाशवाणी द्वारा प्रसारित नहीं किया जाता है। मगर, इसकी ज़िम्मेदारी कोई नहीं लेता। नरेंद्र दाभोलकर, गोविंद पानसारे और एमएम कलबुर्गी के बाद गौरी लंकेश की हत्या के बाद मीडिया के रुख़ की भी लेखक चर्चा करते हैं। हत्यारों को संरक्षण के खिलाफ़ उठ खड़े होने के बजाए मीडिया उल्टे गौरी लंकेश के चरित्र मर्दन में जुटा नज़र आता है।

मीडिया में सवर्णवाद हावी है। कोरेगाँव की लड़ाई के नायक और खलनायक की डिबेट में मीडिया का यह सवर्णवादी चेहरा सामने दिख जाता है। मीडिया की पोल तब भी खुल जाती है जब वह प्रवीण तोगड़िया के रुदन पर ख़ामोश हो जाता है। यही तोगड़िया कभी मीडिया के लाड़ले हुआ करते थे। मीडिया में मर्दानगी दिखाते एंकरों में महिला एंकर भी शुमार हो चुकी हैं। वह भी 'मर्द' दिखना चाहती हैं। लेखक ने होली परेड के बहाने बखूबी बताया है कि टीआरपी के नाम पर माथापच्ची करती संपादकीय टीम को संघ की ओर से आइडिया सुझाए जाते हैं और यही वजह है कि हर मीडिया हाऊस होली के दिन सोच रहा होता है कि उसका आइडिया न्यूज़ रूम से चोरी कैसे हुआ। जबकि, सच यह है कि यह आइडिया चोरी से कब कैसे न्यूज़ रूम में पैठ कर चुका है खुद उन्हें नहीं पता।

000

पुस्तक समीक्षा

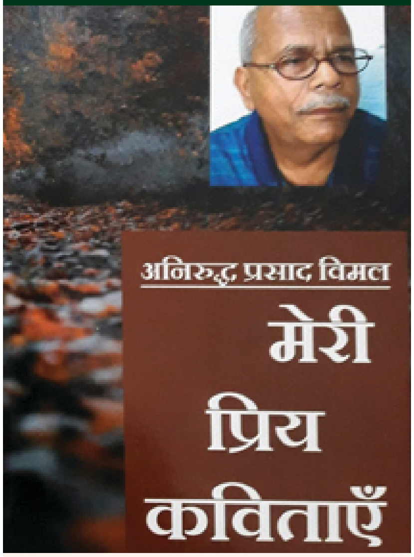

मेरी प्रिय कविताएँ

(कविता संकलन)

समीक्षक : प्रो. अवध किशोर प्रसाद

लेखक : अनिरुद्ध प्रसाद विमल

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सीहोर, मप्र

प्रो. अवध किशोर प्रसाद
द्वारा- कुमार राजेश, सी.ए.ओ
सी.आई.ए.ई. नबी बाग़
बैरसिया रोड, भोपाल (एम.पी.) 462038
मोबाइल– 9599794129

अनिरुद्ध प्रसाद विमल ग्रामीण परिवेश के कवि हैं, गाँव की धूल, गाँव के खेत-खलिहान और गाँव में रची-बसी ज़िंदगी को कवि ने निकट से देखा है। और जो देखा, समझा तथा भोगा है, उसी सच को अपनी कविताओं में अभिव्यक्त किया है। 'मेरी प्रिय कविताएँ' विमल की 'घाटियों के बीच' तथा 'अंकुर की आँखें' के बाद तीसरा कविता संकलन है। इसमें 67 बहुआयामी कविताएँ संकलित हैं।

कवि क्रांतदर्शी होता है, भले ही वह वाल्मीकि की तरह 'ओंकार इव वर्णानां कवीनाम प्रथमो कवि' न हो, कालिदास की तरह शून्य में विराट् का दर्शन न करे; किन्तु वह युगद्रष्टा होता है। अपने समय और परिवेश को अपने अन्तर्चक्षु से देखता और परखता है एवं परखकर अपनी भावनाओं के उद्रेक से उसे कविता के रूप में अभिव्यक्त करता है। वर्डस वर्थ के अनुसार- 'कविता शान्ति के क्षणों में एकत्रित सशक्त भावानुभूतियों का स्वत:स्फूर्त प्रवाह है' विमल की कविताएँ भी एकान्तिक क्षणों में स्वत: स्फूर्त सशक्त भावनाओं के प्रवाह के प्रतिफल हैं। मधुमती भूमिका में पैठकर रची गई संकलन की प्राय: सारी कविताओं में जग-जीवन में व्याप्त तथ्यों का अंकन हुआ है।

एक चेतन धर्मा कवि समाज और समाज में रहने वाले मनुष्य के जीवन में बदलाव की अपेक्षा करता है। वैसा बदलाव जो उसके विकास का साधक हो। वह कृष्ण के 'नियतं कुरु कर्म त्वम् कर्म ज्यायो ह्मकर्मण:' (गीता3/8) की तरह मनुष्य को कर्म पथ पर आरूढ़ होने की प्रेरणा प्रदान करता है। संकलन की प्रारम्भिक दो कविताओं 'बदलाव' एवं 'मेरा अंधा इतिहास' में इसी भाव की अभिव्यक्ति हुई है। कवि परिवर्तन का कामी है। तभी तो वह अभाव संकुल जीवन की विवशता में भी कर्म पथ पर अग्रसर होने को संकल्पबद्ध होता है। 'मेरा अंधा इतिहास' शीर्षक कविता में परिस्थितियाँ उसे बाध्य करती हैं - 'पत्नी का बच्चों पर बरसना/बच्चों का रोना/गायों का रम्भाना/बैलों का डकारना /सब के सब/मेरी बंद आँखों में घूमने लगते हैं/और मुझे लगता है/ये सब मुझे बुला रहे हैं/कोल्हू के बैल की तरह/जुतने के लिए (पृष्ठ 15)। 'प्रतीक्षा' शीर्षक कविता में कवि स्वप्नद्रष्टा बनकर उस सपने के सच होने की प्रतीक्षा करता है, जिसमें वह बलराम बनकर कृष्ण के सुदर्शन चक्र को लील लेता है। और कृष्ण के बार-बार के प्रयास के बावजूद उसकी अतड़ियों को फाड़कर कृष्ण का सुदर्शन चक्र बाहर नहीं निकल सका था। इसी स्वप्न के बहाने कवि धरती पर फैली भूख, दहशत उत्पीड़न का ज़िक्र करते हुए देश की न्याय व्यवस्था पर तंज कसता है।

संकल्प (1) और (2) शीर्षक कविताओं में कवि ने यह स्पष्ट किया है कि देश में फैली अव्यवस्था एवं राजनीतिक उथल-पुथल के युग में जनता की आवाज़ की अनसुनी कर दी जाती है। जनता चीखती-चिल्लाती रह जाती है। किन्तु नेताओं, मंत्रियों एवं देश की नैया के तथाकथित खेवनहारों के कानों पर जूँ नहीं रेंगती है। जनता की आवाज़ नक्कारखाने में तूती की आवाज़ सिद्ध होकर रह जाती है। किन्तु कवि का संकल्प - 'मैं अकेला ही शकुनियों के साथ लड़ता रहूँगा/अंतिम साँस तक' मनुष्य को संघर्ष के लिए प्रेरित करता है। देश की हर जनता देश की इकाई होती है। अगर वह अपने आप को संघर्ष के लिए तैयार करेगी, तो राजनीति के शकुनियों का नाश हो जायगा। तभी तो कवि 'विश्वास' कविता में कहता है - 'इस बार/जब वह लौटेगा/ तो उसके हाथों में /एक नया सूरज होगा' (पृष्ठ- 21) मनुष्य का जीवन विश्वासों और आशाओं पर टिका रहता है। कवि को विश्वास है कि मनुष्य सारी विवशताओं के बाद भी नवयुग के निर्माण में अवश्य ही सफल होगा। 'सब कुछ सलीब पर' कविता में कवि कीचक की सुलगती आँखों का

शिकार द्रौपदी, द्रोणाचार्य की साज़िशों का शिकार सप्तरथियों के बीच सिर्फ एक टूटे हुए पहिये को लेकर लड़ते हुए अभिमन्यु और आसन्न मृत्यु से भयभीत शीलीभूत सुभद्रा के उपालम्भों के माध्यम से देश में व्याप्त अन्याय, अनाचार और अनैतिकता की ओर संकेत करता है।

कविता शब्द की एक सार्थक शृंखला है, जिसके द्वारा सन्दर्भ को, परिवेश को और हृदय से निकलती व्यथा को कल्पना के उद्रेक से अभिव्यक्त किया जाता है। कवि के समक्ष कवि कल्पना को उजागर करने वाला भोर का तारा, नीले चन्दोवे की तरह फैला हुआ मेघमय आकाश और विरहिनियों का दर्द आदि सब कुछ है। परन्तु कवि के पास इन सब को व्यक्त करने के लिए शब्द नहीं हैं। 'शब्द नहीं मिलते' शीर्षक कविता के माध्यम से कवि ने यह स्पष्ट किया है कि भावाभिव्यक्ति में कभी-कभी वाणी मौन हो जाती है। किन्तु वाणी मौन रहकर भी सब कुछ कह देती है। कविता (1) में कविता के कविता होने की सार्थकता, अर्थवत्ता एवं प्रासंगिकता का उल्लेख करते हुए कवि यह स्पष्ट करता है कि वह अंधी और गूँगी नहीं है, बल्कि बर्बरीक की तरह देखती और बोलती भी है। कविता (2) में कविता की रचना प्रक्रिया का वर्णन किया गया है। एक कवि की विडंबना का उल्लेख करता हुआ कवि यह कहने में संकोच नहीं करता है कि 'कविता रोटी नहीं देती है/रोटी ही कविता देती है.. ' किन्तु कवि का अपना महत्त्व होता है। वह मर कर भी जीवित रहता है, अपनी कविताओं के माध्यम से 'कवि ज़िंदा है/कवि कभी नहीं मरता' इस सच को कवि ने चार मित्रों के वार्तालाप के माध्यम से 'कवि' शीर्षक कविता में व्यक्त किया है।

महाभारत के विध्वंसक युद्ध के कई कारणों में से भीष्म की प्रतिज्ञा भी एक महत्त्वपूर्ण कारण था। उसी प्रकार यदि राम ने अपने देवत्व बोध के कारण शूर्पनखा के प्रणय निवेदन को ठुकराकर उसकी नाक नहीं कटवा दी होती, तो सीता हरण नहीं हुआ होता, सोने की लंका नहीं जलती और न ही विनाशकारी युद्ध हुआ होता। कवि इसी कारण भीष्म प्रतिज्ञा को भूल जाना चाहता है और राम के देवत्व की प्राप्ति की कामना भी नहीं करना चाहता है। तभी तो 'मुझे देवत्व नहीं चाहिए' शीर्षक कविता में वह कहता है- 'हे राम /मुझे तुम्हारा देवत्व नहीं चाहिए/मैं आदमी हूँ/मुझे आदमी ही रहने दो/तुम्हारा देवत्व पा लेने से/फिर कहीं किसी/शूर्पनखा की नाक न कट जाय' (पृष्ठ 24)। 'जहाज़ पर' अनेक भावों से परिपूर्ण एक विवरणात्मक कविता है। जहाज़ पर के बढ़ते हुए शोर की तुलना कवि हिन्दुस्तान की ग़रीबी और जनसंख्या विस्तार से करता है। तथा एक संकल्पी किसान के हल चलाने की प्रक्रिया से किसान संस्कृति का विवरण भी करता है। इस कविता में बिम्बात्मकता है। गंगा की धारा को फाड़ते जाते हुए जहाज़ की गति में बिम्ब है। 'परिवर्तन' एक मर्मस्पर्शी कविता है। इसमें कवि ने राजनीति के गलियारे में एक जनप्रतिनिधि के बनने और उसके क्रिया-कलापों का मार्मिक विवरण प्रस्तुत किया है। 'कब तक' शीर्षक कविता में पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में पूँजीपतियों के शोषण की चक्की में पिसते हुए सर्वहारा वर्ग की व्यथा-कथा को सिद्धार्थ, यशोधरा और राहुल के प्रसंगों के माध्यम से व्यक्त किया गया है। 'इसे क्या कहोगे' में कवि ने देश की अर्थ व्यवस्था पर व्यंग्य किया है। आज़ादी के बाद भी देश इतना विकास नहीं कर सका है कि मनुष्य को तन ढँकने के लिए पर्याप्त वस्त्र उपलब्ध हों। 'अंधेरी घाटियों के बीच' शीर्षक कविता में युग सत्य को प्रस्तुत किया गया है। आज मानव समाज में चतुर्दिक घोर अराजकता, संत्रास, विरोधाभास एवं असहयोग की स्थिति व्याप्त हो गई है। घाटियों की कर्णपटु ध्वनियों का रूपक बाँधकर सर्वत्र फैली स्वार्थवादी राजनीति का पटाक्षेप करते हुए कवि का संकल्प- 'बार-बार मरने से/बेहतर है/एक बार मरना/और अब मुझे /अँधेरी घाटियों में अकेले ही कुछ करना होगा/मारना होगा/या खुद मरना होगा'(पृष्ठ-39) सटीक, सार्थक और अर्थ भरा है। 'अंतहीन यातना' में देश की क़ानून व्यवस्था पर कुठाराघात किया गया है। जेल, फाँसी एवं अन्य सारी यातनाएँ सिर्फ निरपराधों के लिए है। कवि के अनुसार- क़ानून अदालत सब शकुनी की चाल है और जेल धरती का नरक है। 'देश में' शीर्षक कविता में 'हर प्रताप के पीछे मानसिंह हिमालय की तरह खड़ा है' कहकर कभी सोने की चिड़िया कह जाने वाले देश भारत में व्याप्त स्वार्थपरता के भाव का उल्लेख किया गया है। सामान्य जन से लेकर सत्तासीन लोग स्वार्थी प्रवृत्ति से परिचालित हैं। 'उसका स्वार्थ' प्रतीकात्मक कविता है। जनता अपने प्रतिनिधि को चुनकर संसद में भेजती है कि वह उसके दुख दर्ज व उसकी भूख को मिटाने का प्रयास करेगा। किन्तु वह संसद में जाकर अपने स्वार्थ में इतना संलिप्त होकर अपने लक्ष्य कि 'वह लाखों लोगों की भूख को अपनी मुट्ठियों बंद कर इस शहर में आया है' को भूल जाता है। 'क्या वह दिल्ली जाकर लौट भी सकेगा ?, क्या कोई लौटा भी है अब तक ?' जैसी यथार्थ बोधन करने वाली पंक्तियों के माध्यम से कवि ने 'दिल्ली दूर है' शीर्षक कविता में उन जन प्रतिनिधियों पर व्यंग्य किया है, जो सत्ता के सुख भोगने में इतना मस्त-व्यस्त हो जाता है कि उसे अपना जनपद भी याद नहीं आता है। 'सब कुछ बदल गया' शीर्षक कविता में कवि देश की राजनीतिक व्यवस्था पर व्यंग्य भी करता है और उसकी अस्मिता पर कुठाराघात भी। यद्यपि स्वतंत्र भारत में सब कुछ बदल गया-सा लगता है, किन्तु आज भी सब कुछ वैसा ही है। कहने को तो राजतंत्र समाप्त हो गया है। ज़मींदारी प्रथा का उन्मूलन हो गया है। किन्तु नेताओं, सांसदों, मंत्रियों के रूप में वह व्यवस्था आज भी बरक़रार है। सिर्फ नाम बदला है, काम वही हो रहा है। प्रजातंत्र नहीं, देश में 'बदलू तन्त्र' चल रहा है। 'सिलसिला' शीर्षक कविता में भी इसी आशय की अभिव्यक्ति हुई है। भारतीय राजनीति में जनतंत्र बड़ा ही व्यापक शब्द है। किन्तु अब इसकी व्यापकता 'जन' और 'तन्त्र' दो धारों में खंडित हो गई है। जिसके बीच की खाई को कोई भी पाट नहीं सकता है। क्योंकि ऐसा ही सिलसिला चल पड़ा है कि यहाँ इन्कलाब में उठी हर गर्दन बर्बरीक बना दी जाती है जो देख तो सकता है,

पर बोल नहीं सकता है। 'सूरज ने कहा' में वोट की राजनीति पर व्यंग्य किया गया है। जनतंत्र यानि 'जनता का तन्त्र' में जहाँ मत पेटियाँ बदली जाती हैं, चुनावी दाँव-पेंच चलता है, वहाँ जनता के मत की कोई अर्थवत्ता नहीं होती और इस प्रकार जनतंत्र पर ख़तरे के काले बादल मँडराने लगते हैं। सूरज के उपालम्भ के माध्यम से कवि ने इस कविता में इसी सत्य को रूपायित किया है--- 'थका हारा/पपड़ियाये होठों पर जीभ फेरते हुए/गुमसुम, उदास/सूरज ने कहा/जनतंत्र ख़तरे में हैं'(पृष्ठ 87) 'कैसे मनाएँ' शीर्षक कविता में कवि ने देश में व्याप्त लूट, व्यभिचार, अनाचार, महँगाई, शासन की बेवफ़ाई, काले धंधे की कमाई, अभाव के कारण किसानों की आत्महत्या जैसी विषम परिस्थितियों में दिवाली मनाए जाने के औचित्य पर प्रश्न चिह्न लगा दिया है - 'हर तरफ शोषण/लूट, व्यभिचार, अनाचार का नर्तन /तैनिक मूल्यों से हीन जन-जन/कहते हैं देवगण महलों को सजाएँ/दिवाली इस बार की कहो कैसे मनाएँ ? (पृष्ठ88)' 'उसे पहचानों' में कवि राजनीतिज्ञों के झूठे आश्वासनों पर जी रही जनता का, नेताओं के झूठे आश्वासनों पर विश्वास करना छोड़कर उठ खड़े होने का, आह्वान करता है। उसी तरह 'बदलाव' और 'बचाव की कला' शीर्षक कविताओं में मनुष्य को मेमने की तरह मिमियाने नहीं, बल्कि तन कर खड़े होने, अधिकार को माँगने नहीं, ले लेने की कला की सीख दी गई है। सत्ताधारी के इशारे पर सारी जनता नाचती है, क्योंकि जनता में संगठन का अभाव है। किन्तु कवि का विश्वास है कि जिस दिन जनता संगठित हो जाएगी तो। अदृश्य बना सत्ताधारी दृश्यमान हो जाएगा। और जनता का सारा दु:ख- दर्द मिट जाएगा। तुम/मैं/वह और वह शीर्षक कविता में कवि ने इसी तथ्य को स्पष्ट किया है। 'भाषण' एक व्यंग्य कविता है, जिसमें सिर्फ भाषण देने वाले अकर्मण्य नेताओं पर व्यंग्य किया गया है। 'पेट' शीर्षक छोटी सी कविता में व्यंग्य भी है। यथार्थ भी और प्रयोग की नवीनता भी। प्रयोगवादी साठोत्तरी कवियों ने कविता में नए-नए बिम्बों एवं प्रतीकों की रचना की है। उनके लिए आकाश में चमकता चाँद सुंदरियों के मुखमंडल का प्रतीक नहीं बल्कि तवे पर सेंकी जा रही गोल-गोल रोटी का प्रतीक है। कवि विमल ने भी पेट की उपमा एक तपते हुए तबे से दी है - 'मेरा पेट/एक तपता हुआ ताबा है/ जो आग पर/तपता तो है/पर इस पर रोटी नहीं सिकती'(पृष्ठ-43)

आज के अर्थप्रधान सामाजिक विषमता के युग में एक ओर मनुष्य का बौद्धिक विकास हो रहा है, तो दूसरी ओर उसी अनुपात में उसका आत्मिक दायरा भी सिमटता जा रहा है। इसलिए उसमें सदप्रवृत्तियाँ कम एवं दुष्प्रवृत्तियाँ अधिक मात्रा में विकसित हो रही है। 'ईश्वर की भूल' शीर्षक कविता में कवि ने ईश्वर की भूल की ओर संकेत किया है --'हे ईश्वर/तुमने यह क्या किया/ कि उसमें दया प्रेम से अधिक/उसमें घृणा, स्वार्थ द्वेष दिया/जिससे उसका रूप ही/अंगुलिमाल बन गया' (पृष्ठ-46), वहीं कवि ईश्वर की समदर्शिता की लोकमान्य वृत्ति पर प्रश्न चिह्न लगाते हुए 'बचा हुआ प्रश्न' शीर्षक कविता में क़ानून व्यवस्था पर व्यंग्य करता है कि अपराधी स्वच्छन्द विचरता है और निरपराधी जेल की सींखचों में बंद दोहरी यातना का दंश झेलता है। 'नहीं समझोगे दर्द' जैसी मार्मिक कविता में कवि कृष्ण का उपालम्भ लेकर अपने जेल में बंद होने के दर्द का इजहार करता है --'कि जब तुम्हारा मन/जेल में जनम लेने के बाद ही/ नहीं लगा/तब मेरे बेल होने की प्रतीक्षा में/ द्वार पर अकेली खड़ी/ मीरा के बिना/कैसे लग सकता है?' (पृष्ठ-48) 'समय और मेरा मैं' जागतिक सत्य की कविता है। कवि ने यह व्यक्त किया है कि गिरने वालों पर लोगों में हँसने का प्रचलन चल पड़ा है। गिरे हुओं को उठाना तो दूर। लोग उस पर हँसते हैं, क्योंकि यह उनकी आदत बन गई है। 'लक्ष्य मेरे लघु जीवन का' जग-जीवन के सातत्य को अभिव्यक्त करती उत्कृष्ट कविता है। कवि ने मानव जीवन के लक्ष्य को, कुछ-कुछ दार्शनिक कुछ-कुछ आध्यात्मिक बनकर, व्यक्त किया है। जब सर्वत्र गतिशीलता है तो फिर मनुष्य को मोहजाल में पड़कर अपने जीवन के लक्ष्य से दिकभ्रमित होना क्या--- 'बदली से पूछो रोती क्यों है?/सूरज से पूछो जलता क्यों?/झरने से पूछो बिना रुके/संदेश गीत का देता क्यों ?' (पृष्ठ-62) मानव जीवन की सार्थकता जन-जन की खुशियाँ देखने, शत बार जलकर भी शिकायत नहीं करने और सदा हँसते रहने में है। जीवन (1) शीर्षक कविता में इसी भाव की अभिव्यक्ति हुई है। वहीं जीवन (2) में कवि ने जीवन की विभिन्न व्याख्याओं के सन्दर्भ में अपनी ओर से जीवन को व्याख्यायित किया है- 'यह जीवन तो केवल समझौता है/बस समझौता है/एक पल चूके तो जीवन बस एक सरोता है। (पृष्ठ-70)

कवि नवीनता का आग्रही होता है। वह पुरातनता के निर्मोक को तोड़कर नवीनता का अवगाहन करता है। कवि विमल भी नवीनता का अवगाहन करता है। वह अपने गीतों के माध्यम से इस धरती पर नए संसार को बसाने के लिए अपनी प्रियतमा से कर्म पथ पर जाते हुए उसे नहीं रोकने का आग्रह करता है, क्योंकि वह पीड़ा के दंश को झेलते-झेलते थक गया है। उसकी पीड़ा जल-थल-नभ यहाँ तक कि प्रकृति के अणु-अणु में व्याप्त हो गई है। तभी तो वह 'नूतन जगत् बसाने दो' कविता में कहता है--- 'झरती बरसातों को देखो/रोती रातों को देखो/हिलते तरुपातों को देखो/ज़िंदा ज़ख्मों को देखो/विष-दंशित इस जग पर मुझको/स्नेह सुधा बरसाने दो' (पृष्ठ-64)

वीर रस का स्थायी भाव 'उत्साह' है। कुछ कर गुज़रने की इच्छा का जन्म उत्साह से होता है। और उत्साही समाज और देश में व्याप्त विसंगतियों, दुरावस्थाओं एवं विरोधाभासों के विरुद्ध खम ठोंककर उठ खड़ा होता है।

'सच्चा यौवन' भी वीर रस की कविता है। चौदह पंक्तियों (अंग्रेज़ी की सोनेट) की इस कविता की प्रत्येक पंक्ति में वीरता का भाव भरा हुआ है। इसमें कवि यौवन की व्याख्या करते हुए इसकी सार्थकता का उल्लेख करता है- 'काल सर्प सा/धनुष डोरी वा/जो नित क्षण-क्षण/है बढ़ता जाता/यौवन उसका ही यौवन है/जो नहीं मरण से है डरता'। और 'जो मिट्टी की माँग सुने/सच में वही जवानी'

(पृष्ठ-71)

'चाँद ने चुपके कहा' एक उत्साह वर्धक कविता है। प्रकृति का रम्य उपकरण जहाँ प्रेमोद्दीपक बनकर प्रेमी और प्रेमिका को अभिसार का आमंत्रण देता है। वहीं वह मनुष्य को कर्म के लिए प्रेरित भी करता है। द्वितीया का चाँद खेत की मेढ़ पर बैठे निष्प्रभ किसान को बल देता है और वह अपने कचिये में चाँद की चमक सी धार करने लग जाता है। गति ही जीवन है।

'शोषक जोंक की तरह तुम्हारा खून चूसता है, उसे चूसने दो। अगर तुम उसका विरोध करोगे तो समाज की शान्ति भंग करने के ज़ुल्म में तुम दंडित किये जाओगे' दिनकर के इसी आशय को कवि विमल ने 'सच पूछो तो' शीर्षक कविता में व्यक्त किया है- 'और सच पूछो तो/ग़द्दार मैं हूँ/जो जाग्रत ज्वालामुखी की तरह/धधकने लगा हूँ/कि मरने लगा हूँ/उन बेबश आँखों में/आवाज़ उठाने की भाषा-'(पृष्ठ-77)

किन्तु इसके साथ ही कवि ने 'इस सदी का आदमी' शीर्षक कविता में प्राकृतिक चित्रों के अंकन के माध्यम से आज के आदमी की निष्क्रियता, अकर्मण्यता एवं आसन्न भय से भीत होने की प्रक्रिया का वर्णन किया है। तूफ़ान के आगमन की आशंका में जड़, चेतन यहाँ तक कि मनुष्य भी शिथिल एवं निष्क्रिय हो गए हैं। कवि को आश्चर्य होता है- 'तूफ़ान के आने का/कोई भी विरोध नहीं कर रहा/कोई पहाड़ बनना नहीं चाह रहा/इसकी गति को मोड़ देने के लिए/क्यों एक विरोधी हाल होने के बावजूद/वह शुतुर्मुग हो रहा है'(पृष्ठ-42)

प्राचीन आचार्यों ने श्रृंगार के दो भेद किये हैं- संयोग और वियोग। श्रृंगार का स्थायी भाव 'रति' होने के कारण इसके दोनों ही रूप आनंदोप्लब्धि के कारण, काव्य के उपजीव्य हैं। कवि जब रागात्मिका वृत्ति से परिचालित होकर कवि कर्म में प्रवृत्त होता है, तो उसकी कविता में इस प्रेम रस का प्रवाह फूटता है। वह कभी मिलन के गीत गाता है, तो कभी विरह के ताप से तप्त होता है। विमल का कवि भी इसका कायल है। संकलन की बहुसंख्यक कविताओं में प्रेमानुभूति की अभिव्यक्ति हुई है। कहीं मिलन का सुख है, तो कहीं विरह की पीड़ा। किन्तु कवि का मन विरहानुभूति के चित्रण में अधिक रमा है।

'तुमने ठीक ही कहा था' प्रेमानुभूति की मार्मिक कविता है, जिसमें कवि ने क्षितिज के छोर पर धरती और आकाश के मिलन को इंगित कर एक शाश्वत सत्य का उद्घाटन किया है -'कि प्रेम की दहलीज़ पर /जलते चिराग/कभी नहीं बुझते'(पृष्ठ-90) 'एकांत का दर्द' में विरह की घड़ियों में भी मिलन की अनुभूति की अभिव्यक्ति हुई है। कवि को हवाओं के स्पर्श में प्रिया की छुवन और हवा की सिसकियों में प्रेयसी के चुम्बन की अनुभूति होती है--- 'मुझे हवाओं का छूना/ठीक वैसा ही लगा/जैसे वह मेरी देह को छुआ करती थी/हवा की सिसकियों में/उसके चुम्बनों की आवाज़ थी' (पृष्ठ-99) 'पी लेने दो' एक रागात्मिका वृत्ति की मार्मिक कविता है, जिसमें कवि मिलन और प्रणय की घड़ियों में मृत्यु से ठहर जाने का आग्रह करता है, ताकि वह प्रेम रस का छक कर पान कर सके ---'मदमाता यौवन का प्याला/छोड़ कहाँ मैं जाऊँगा?/री मृत्यु ठहर, मधु पीने दो/फिर साथ तुम्हारा दूँगा'(पृष्ठ-72) 'मैं और वह' में प्रेम की पीर की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। मिलन और विछुड़न प्रेमी जीवन के दो छोर होते हैं। जिनके बीच एक चीज़ होती है, जो दोनों को एक दूसरे से आबद्ध किये रहती है। वह है-'तोहफा' प्रेमी जन उसी तोहफे के सहारे, जो देह की होकर भी देह से दूर रहने वाली छाया की तरह साथ रहती है; जीवन में सुकून का अनुभव करते हैं 'तुम्हारे नाम' में एक आकुल प्रेमी की पीड़ा की अभिव्यक्ति हुई है। इस लम्बी कविता में कवि ने उपालम्भों के माध्यम से अपने हृदय की पीड़ा को व्यक्त किया है। तो प्रेमिका की चुप्पी पर अपनी व्याकुलता भी प्रकट करता है। परन्तु वह स्वयं इसका समाधान भी ढूँढ़ निकालता है- 'तुम्हीं कहो/क्या चुप रहना/प्यार की सबसे सुन्दर परिभाषा नहीं'(पृष्ठ-31) एक प्रेमी के लिए उसकी प्रेमिका असीम, अनंत और किसी भी सम्बोधन की सीमा से परे होती है। यही तो प्रेम की विशालता होती है। इसलिए वह प्रेमिका की अनंत सागर-सी गहरी आँखों में डूबा ही रहना चाहता है। वह उससे आग्रह करता है--- 'तुम न जाओ/मुझे डूबे ही रहने दो/चंचल मुग्ध मीन बनकर/अपनी आँखों के/नील नूतन सागर में'(पृष्ठ-33) 'तुम और मैं' शीर्षक कविता में उपमा एवं उपालम्भों के माध्यम से प्रेयसी के नहीं आने की शिकायत का मार्मिक वर्णन हुआ है। इस छोटी सी कविता में कवि ने गागर में सागर भर दिया है। अंतिम पंक्तियाँ मन को बाँध लेती हैं- 'तुम अर्जुन के तीर की तरह निकलती रहीं/और मैं/भीष्म की तरह बिंधता रहा' (पृष्ठ-80) कितनी सटीक समता है। 'प्रतीक्षा' में कवि ने केकी, पपीहा, चातक और चकोर की इंगिति से प्रेम, विरह, दर्द एवं प्रिय मिलन की आकुल प्रतीक्षा की मार्मिकता को उजागर किया है। 'दर्द की दहलीज़ से' में वियोग की असह्य पीड़ा की अभिव्यक्ति हुई है, तो 'फिर कब आओगी' में प्रेमिका की प्रतीक्षा में बैशाख की धूप में तपते प्रेमी की व्यथा कथा कही गई है। विरह की तड़प की अभिव्यक्ति के लिए प्रस्तुत चित्रावलियाँ --- 'बिच्छू के काटे सा समय, करैत सर्प के काटने जैसा दिन, बिजली के करेंट जैसी रात, निरपराध पर पुलिस के डंडे की चोट सा दर्द आदि अद्भुत हैं। कल्पना की उड़ान और शब्द योजना अद्भुत है। यद्यपि विरह की सघन पीड़ा में भी वह आशावान है। और उसके आने के रास्ते की धूल को मुट्ठियों में उठा लेता है। जिसमें प्रेमिका की श्वेत कमल की पंखुड़ियों सी सुकुमार छवि दीखती है। 'तुम्हें आना होगा/बसंत चला गया तो क्या' जैसे आग्रह भरे शब्दों में कवि अपनी प्रियतमा से लौट आने का आग्रह करता है, क्योंकि उसके नहीं रहने के बाद प्रकृति में सब कुछ उलट-पुलट – सा हो गया है। 'जब तुम नहीं आई' शीर्षक कविता में विरह की वेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। मिलन की स्थिति में जो परिस्थितियाँ सुखदाई होती हैं। विरह की स्थिति में वही दुखदाई हो जाती है। तभी तो सूर की गोपियाँ मधुवन को कोसती हैं। जिस मधुवन की हरी-भरी अमराइयों में उन्होंने कृष्ण के साथ अभिसार का सुख भोगा था, वही मधुवन कृष्ण के वियोग में दुखदाई हो गई

है। कवि अपने सपनों का रक्त बहाकर अरमानों का देश लुटाकर भी अपने प्रेम को प्राप्त नहीं कर सका है, तभी तो 'मूक मिलन की बात' में वह कहता है----'अपने सपनों का रक्त बहाकर/अरमानों का देश लुटाकर/पा न सका हा पा न सका/जीवन लगता थका-थका'(पृष्ठ-69) तथापि कवि प्रियतमा के दर्द में जीवन जीता हुआ आँसुओं के साथ उसका अभिनन्दन करता और विदाई देता है। उसका दर्द कितना मार्मिक है- 'उजड़ी मम सपनों की दुनिया/उजड़ा मेरा नन्दन वन/रे मीत बता किस तरह करूँ ?/मैं एक तुम्हारा अभिनन्दन' अपनी मर्मान्तक पीड़ा को व्यक्त करते हुए कहता है ---'आज विदाई का अभिनन्दन/आँसू से लिखकर देना होगा/मेरे जीवन का लक्ष्य आख़री/चुप-चुप कर बस रोना है' (पृष्ठ-60) यह विरह की चरम परिणति है। यह विरह वर्णन अनूठा है।

प्रेम जब लौकिक होता, तब शृंगार और जब आध्यात्मिक होता है, तो भक्ति कहलाता है। कवियों ने शृंगार रस के वर्णन के क्रम में नायिकाओं का स्मरण विभिन्न रूपों में किया है। उसी प्रकार भक्त कवियों ने भक्ति के उद्रेक में ब्रह्म के विभिन्न रूपों की आराधना की है। किन्तु इन दोनों रूपों की एक साथ आवृत्ति दुर्लभ है। कवि विमल की 'तुम्हारा रूप' शीर्षक कविता में प्रेम के इन दोनों रूपों के दर्शन होते हैं। शृंगार में यहाँ प्रेयसि और भक्ति में ब्रह्म की अव्यक्त रूपाकृति की अभिव्यक्ति हुई है- 'बहुत दूर/जहाँ मेरी आँखें असमर्थ हो जाती हैं/कुछ देखने में/वहाँ/भोर की टटकी ओस में नहाये/कल्पद्रुम के अकेले कुसुम सा/तुम्हारा रूप/दिखाई देता है'(पृष्ठ-44) 'जहाँ मेरी आँखें असमर्थ हो जाती हैं। कुछ देखने को' में ब्रह्म एवं भोर की टटकी ओस में नहाए – तुम्हारा रूप में प्रेयसी की कल्पना अद्भुत है।

संकलन की अंतिम कविता 'अमरेन्द्र से शिकायत' में कवि ने अमरेन्द्र के प्रति अपनी आत्मीयता व्यक्त करते हुए अमरेन्द्र की प्रवृत्तियों का उल्लेख किया है। जो एक रसिक, वीतरागी एवं जनक की तरह विदेह की भूमिका का निर्वाह करता है।

संकलन की समस्त कविताओं के सम्यक आलोडन से यह स्पष्ट होता है कि इन कविताओं के माध्यम से कवि ने युग- जीवन के प्राय: समस्त सन्दर्भों को अपनी कविता का वर्ण्य बनाया है। देश में फैली अराजकता, राजनीति, वितंडावाद, क़ानून की अव्यवस्था, मानवीय वृत्तियाँ आदि पर कवि ने सम्पूर्ण हृदय से चिंतन किया है। नेताओं की स्वार्थपरता, जनता की अशमर्थता-अकर्मण्यता एवं सबसे बढ़ कर घटते हुए मानव मूल्यों को कवि ने सही, सटीक और सार्थक शब्दों में अभिव्यक्त किया है। वीर रस और उस के क्रोड़ से नि:सृत शृंगार रस के प्रवाह से कविताओं में ओज और लालित्य गुणों का संचार हो गया है, जो एक ओर मनुष्य को कर्म में प्रवृत्त होने, संघर्ष करने एवं विजयी होने की प्रेरणा प्रदान करता है, तो दूसरी ओर मन में रागात्मिका वृत्ति का संचार करता है। वियोग की मर्मान्तक पीड़ा की दरिया में कवि के साथ-साथ अध्येता भी डूबता-उतराता चलता है। संकलन की कविताओं में प्रकृति का चित्रण भी हुआ है। वस्तुत: कवि ने प्रकृति के रम्य उपकरणों से कविता कामिनी का शृंगार किया है। प्रकृति के कहीं चल चित्र हैं तो कहीं प्रकृति का मानवीकरण किया गया है। मानवीकरण का एक चित्र द्रष्टव्य है- 'अन्धकार के गर्भ से चाँदनी /उसकी सुगंध भरी देह के/श्वेत पुष्प –पराग –सी/ धरती पर बिछने लगी है'(पृष्ठ-98) निम्न पंक्तियों में प्रकृति का चल चित्र भी है और बिम्ब भी-'यह कैसा तूफ़ान है/हुआ अँधेरा/आँधी आई/बरसा आई/प्रलय छेड़ता तान है' (पृष्ठ-75) ऐसे अनेक चित्र भरे हैं।

कविता सार्थक शब्दों और उसके संयोजन तथा भाव सम्प्रेषण की उत्कृष्ट कला है। मुक्त छंद में रचित संकलन की कविताओं में प्रयुक्त शब्दों का संतुलित संयोजन भाव सम्प्रेषण में सहज सक्षम हैं। भाषा में लय और प्रवाह है। संकलन की सारी कविताएँ भाव, भाषा एवं शब्द चित्र की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं। इनसे साहित्य के दोनों प्रयोजनों ज्ञान प्राप्ति एवं आनन्दोपलब्धि, की सिद्धि होती है।

000

नई पुस्तक

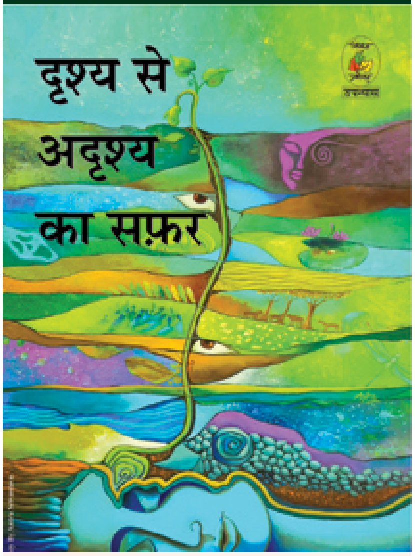

दृश्य से अदृश्य का सफ़र

(उपन्यास)

लेखक : सुधा ओम ढींगरा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

वरिष्ठ कथाकार, उपन्यासकार, कवि सुधा ओम ढींगरा का यह दूसरा उपन्यास शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आया है। मनोवैज्ञानिक धरातल पर लिखा गया यह रोचक उपन्यास मनोविज्ञान की कई पहेलियों को सुलझाने का प्रयास करता है। उपन्यास अपने साथ पाठक को लेकर जाता है उन रहस्यमयी गलियों में जहाँ भूल भुलैया की तरह उलझनें बिछी हुई हैं। मनोविज्ञान पर हिन्दी में बहुत कम लेखन हुआ है, विशेषकर उपन्यास के रूप में तो बस इक्का-दुक्का ही उदाहरण सामने आते हैं। सुधा ओम ढींगरा ने इस उपन्यास में मानव मन की गहराइयों में उतर कर वहाँ जो उलझे हुए रेशम हैं, उनको सुलझा कर पाठकों के सामने लाने का प्रयास इस उपन्यास में किया है। मनोविज्ञान के कई अनछुए पहलुओं को सुधा ओम ढींगरा ने इस उपन्यास के माध्यम से उजागर किया है। पाठकों के लिए यह उपन्यास पढ़ना नया अनुभव होगा।

000

पुस्तक समीक्षा

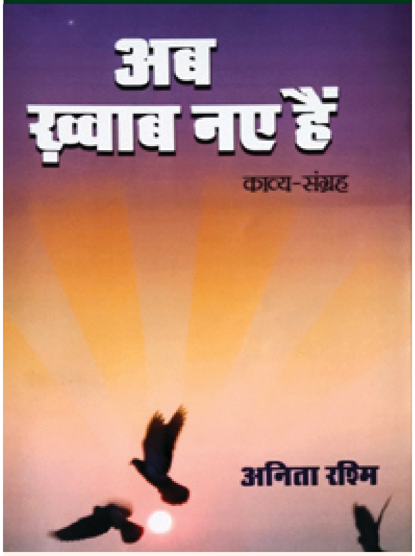

अब ख्वाब नए हैं

(कविता संग्रह)

समीक्षक : डॉ. नीलोत्पल रमेश

लेखक : अनिता रश्मि

प्रकाशक : रवीना प्रकाशन, दिल्ली

डॉ. नीलोत्पल रमेश
पुराना शिव मंदिर, बुध बाज़ार, गिद्दी
ज़िला–हज़ारीबाग (झारखण्ड) 829108
मोबाइल- 9931117537, 8709791120
ईमेल- neelotpalramesh@gmail.com

'अब ख़्वाब नए हैं' अनिता रश्मि का दूसरा कविता-संग्रह है जो हाल में ही प्रकाशित होकर आया है। इसके पहले इनका एक कविता-संग्रह 'ज़िंदा रहेंगी कविताएँ' प्रकाशित होकर प्रशंसित हो चुका है। इस संग्रह की अनेक कविताएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी है। अनिता रश्मि मूलत: कथाकार हैं। इन्होंने कहानियों-कविताओं के माध्यम से हिन्दी साहित्य में प्रवेश किया था। इनके अब तक चार कहानी-संग्रह और दो उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं तथा कई प्रकाशनाधीन हैं।

अनिता रश्मि की कविताओं में झारखण्ड की विडंबना, बेबसी, ग़रीबी, शोषण, अत्याचार, भूख आदि का चित्रण हुआ है। इसके साथ ही कवयित्री ने अपने आस-पास जो कुछ देखा है, महसूसा है, उसे भी अपनी कविता का विषय बनाया है। इनकी कविताएँ प्रकृति के उस स्वरूप का चित्रण करती हैं, जहाँ तक अन्य का ध्यान ही नहीं जाता है। प्रकृति इनकी कविताओं में इस तरह रच-बस गई कि इन्हें प्रकृति से अलग करके नहीं देखा जा सकता है।

इनकी कविताओं के बारे में निरंजन प्रसाद श्रीवास्तव ने पुरोवाक् में लिखा है - "अनिता रश्मि की कविताएँ शांत स्थिर क्षणों में सशक्त, संस्मृत, अनुभूतियों का स्वत:स्फूर्त प्रवाह मात्र नहीं हैं अपितु इनका वर्तमान से, उसकी विद्रूपताओं से उसके जटिल और क्रूर पक्ष से भी संबंध है।" यानी इनकी कविताओं का विषयवस्तु भूत-वर्तमान-भविष्य से लिया गया है। ये कविताएँ पाठकों के दिल में उतर कर उनसे संवाद करती नज़र आती हैं। कविताओं पर कहीं भी कवयित्री हावी नहीं होती दीख रही है। बल्कि उनके साथ कदम ताल करती हुई आगे बढ़ रही हैं।

'अब ख़्वाब नए हैं' शीर्षक नामित कविता के माध्यम से कवयित्री ने मनुष्य की अदम्य जिजीविषा का वर्णन किया है। कोरोना के बाद पूरे देश में पलयन की जो स्थिति बनी थी, उससे कवयित्री का मन व्यथित रहा। वह अब नए ख़्वाब की बात करती हैं। मज़दूरों का शहर छोड़कर गाँव लौटना, फिर गाँव में ही मेहनत-मजूरी करके जीवन यापन करने की लगातार कोशिश करना कवयित्री को प्रभावित करता है। इसीलिए कवयित्री नए ख़्वाब की ओर पाठकों का ध्यान दिलाना चहती है। पुराने पड़ चुके ख़्वाब से जीवन सार्थक नहीं बन सकता है। इसके लिए अब नए ख़्वाब की ज़रूरत है - "नहीं जगह बची उसके दिल में / अपने उजाड़ खेतों के लिए / कोई भी नया-सा ख़्वाब / खेत लाख कहते रह गए / अच्छी होती नहीं यूँ / सपनों की अकाल मृत्यु"

'आवाज़' कविता के माध्यम से कवयित्री ने किसानों के द्वारा किए जा रहे आत्महत्या की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट कराया है। किसानों की आत्महत्या के बाद परिजनों के रोने की आवाज़ खो चुकी है, लाउडस्पीकरों की आवाज़ में। उस परिवार का मुखिया दम तोड़ चुका है, फाँसी लगाकर। कवयित्री का मन व्यथित है, ऐसे वातावरण से, इसलिए उसने लिखा है - "लाउडस्पीकर की आवाज़ में / वह सिसकी की आवाज़ / अपनी दिशा ही खोती हुई / उस किसान के / परले सिरेवाले फूस के / झोंपड़े से उठती है / जहाँ का बापू मर गया है / फाँसी लगाकर"

'औरत' कविता के माध्यम से कवयित्री ने औरत के एक नए रूप का दर्शन करवाया है, जिसमें उफान है, आवेश है, प्रवाह है, आवेग है, सब कुछ को तहस-नहस करने का। औरत कुछ भी कर सकती है, जब वह ठान लेती है। नदी का आवेग सब कुछ पर विजय प्राप्त करते हुए समुद्र में जा मिलता है और वहाँ समुद्र का विनाशकारी रूप दिखाई पडता है। उसी प्रकार औरत सामाजिक जड़ताओं को तोड़ते हुए आगे बढ़ती है और उस पर विजय प्राप्त कर लेती है - "औरत / एक नदी-सी / अंत में समंदर तक / आते-आते / रेत की तप्त नदी में / बदल जाती है / जब समंदर का विनाशी रूप / है देखती।"

'युद्ध' कविता के माध्यम से कवयित्री ने युद्ध की विभीषिका का वर्णन किया है। युद्ध की ज़मीन पर प्रेम की खेती संभव नही है और नहीं उस पर कोई फ़सल उगायी जा सकती है। और न

ही कोई फल ही। यहाँ तक कि थेथर भी नहीं उगाया जा सकता है, जो एकदम ढीट होता है। युद्ध की ज़मीन पर उन्माद, ख़ून की भूख और एक-दूसरे के ख़ून के प्यास की ही फ़सल उगायी जा सकती है। कवयित्री ने युद्ध की भयावहता का वर्णन करते हुए लिखा है - "युद्ध की ज़मीन पर / उग आते हैं गोली-बारूद / तोपें, मिसाइलें, नफ़रत के बीज / हवा में लहराते फाइटर प्लेन / लहरों पे मचाते जंगी जहाज़ / शहीद हो जाने को / तैयार पूरी पलटन"

'माँ : एक और कविता' के माध्यम से कवयित्री ने माँ की विराटता का वर्णन किया है। माँ का हृदय अथाह सागर होता है। उसमें अपनी संतान के लिए सब कुछ सहन करने की शक्ति निहित होती है। वह अपने बच्चे के लिए कुछ भी करने को तैयार रहती है। वह किसी भी रूप में माँ बने रहना चाहती है, लाख कष्ट क्यों न उसे उठाना पड़ जाएँ। माँ केवल माँ ही नहीं होती है, बल्कि वह कई रिश्तों को एक साथ जीती रहती है। कवयित्री ने लिखा है - "माँ कभी भी केवल माँ नहीं रहती / वह भाई-बहन, पिता-दादा / दादी-नानी और न जाने क्या-क्या बन / अनाम रिश्तों में जी लेती है / रह लेती जैसे-तैसे खुद / पर बच्चों की वृक्ष बनाने की / तमन्ना उसकी कभी मुर्झा पाती नहीं"

'बैलूनवाला' कविता के माध्यम से कवयित्री ने बैलूनवाले की भूख़, ग़रीबी, बेबसी और अभाव का वर्णन किया है। बैलूनवाला असमय ही जवान हो जाता है, अपने परिवार की परवरिश करने के लिए। समय ने उस पर ऐसा बोझ लाद दिया है जिससे वह कभी भी बाहर नहीं निकल सकता है। वह बैलून के रंग-बिरंगे स्वरूप से भले ही दूसरों में खुशियाँ भर देता है, पर उसकी खुशी ग़ायब है। कवयित्री ने लिखा है - "बैलून के चटख रंगों का / मोहताज नहीं वह / बेरंगे जीवन में सादी, / आधी, अधजली रोटी से ही / चेहरे पर उसके / रंगों के इंद्रधनुष खिल उठते हैं।"

'ठूँठ को जिलाया जाए' कविता के माध्यम से कवयित्री ने संबंधों में हो रहे बिखराव की ओर पाठकों का ध्यान खींचा है। रिश्ते टूटते जा रहे हैं, और लगातर टूट रहे हैं। आज के समय में रिश्तों की अहमियत नहीं रह गई है। यही कारण है कि संबंधों की शृंखला जो मज़बूत हुआ करती थी, वह कमज़ोर हो गई है। कवयित्री आग्रह करती हैं कि ठूँठ होते रिश्तों को बचाया जाए ताकि जीवन की गर्मी बरकरार रहे। वे लिखती हैं - "तो चलो हम बचाएँ / ठूँठ होती जाती /पूरी की पूरी पीढ़ी की / मरती आत्मा को / बिखते रिश्तों को / चलो एक नई साँस दें / रिश्ते को ऊँचाई / प्यार की प्यास दें"

'आज' कविता के माध्यम से कवयित्री ने कविता के बदलते स्वरूप का वर्णन किया है। कविता पहले गुलाब और प्रेम की बात करती थी, लेकिन अब परिवर्तन की बात करती है, और बदलाव की ओर हमारा ध्यान खींचती है। कवयित्री ने लिखा है - "आज कविता / सरल सहज नहीं / उसने अपने रंग, चलन, ढब / बदल लिये / न जाने कब से / उसकी बातों में / सरोकारों में / बंदूक, गोली, बारूद की / धमक भर गई"

'अब चुप न रहो कविता' के माध्यम से कवयित्री ने कवियों से अनुरोध किया है कि वह अपनी कविता के द्वारा सामाजिक बुराइयों पर प्रहार करे। वह किसानों की बेवजह हो रही आत्महत्याओं, बेटियों की भ्रूण हत्याओं, बेटों के आत्मघाती हमलों से चिंतित हैं। यही कारण है, वे कहती हैं कि तुम सही पड़ताल करके उसका समाधान प्रस्तुत करो, ताकि समाज में फैली अराजकता का माहौल ठीक हो सके। उन सभी विषयों पर कविता लिखो, जिससे समाज बेहतर बन सके।

कविता-संग्रह के माध्यम से अनिता रश्मि ने वर्तमान समय की नब्ज़ को पकड़ने की कोशिश की है। उसमें हमारे समय का सच वर्णित हुआ है। वह सच,जो हमें डराता भी है और अचंभित भी करता है। कवयित्री की भाषा सहज और सरल है जो पाठकों को अनायास ही अपना बना लेती है। एक बार संग्रह पढ़ना शुरू कर देने के बाद बिना पूरा पढ़े छोड़ने का मन नहीं करता है।

000

नई पुस्तक

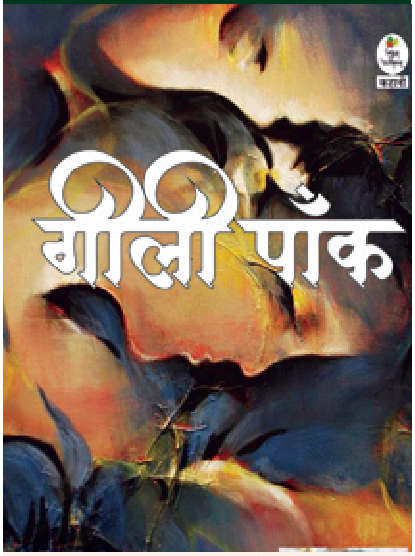

गीली पाँक

(कहानी संग्रह)

लेखक : उषाकिरण खान

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

वरिष्ठ कथाकार, उपन्यासकार पद्मश्री उषाकिरण खान का यह कहानी संग्रह शिवना प्रकाशन से अभी हाल में ही प्रकाशित होकर आया है। इसमें उषाकिरण खान की दस कहानियाँ संकलित हैं। ये कहानियाँ हैं-साबुत मूरत, जल कुंभी, दखिन पवन, भाई जी, कौस्तुभ स्तंभ, मौसम का दर्द, सहयात्री, पाखंड पर्व, मानवता, देसिल बयना। अपनी विशिष्ट भाषा के कारण यह कहानियाँ अत्यंत पठनीय बन पड़ी हैं। उस पर कहानियों में विषय वैविध्यता के कारण यह संग्रह पढ़ते समय पाठक को कभी भी एकरसता में नहीं उलझने देता है। लोक जीवन से पात्र उठाना तथा लोक की झाँकी को अपनी कहानियों में प्रस्तुत करना उषा जी की विशेषता है और यह विशेषता इस संग्रह में भी है। इन कहानियों को पढ़ते समय पाठक उस लोक में सैर करता है, जिस लोक को इन दिनों बिसरा दिया गया है। उषा जी की कहानियाँ लोक की वापसी की कहानियाँ हैं। शिवना प्रकाशन से इसके पूर्व उषा जी का कहानी संग्रह 'जलधार' भी प्रकाशित हो चुका है।

000

पुस्तक समीक्षा

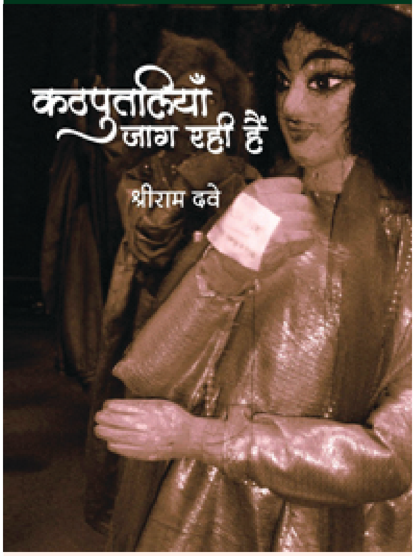

कठपुतलियाँ जाग रही हैं

(कविता संग्रह)

समीक्षक : मनीष वैद्य

लेखक : श्रीराम दवे

प्रकाशक : अयन प्रकाशन, नई दिल्ली

मनीष वैद्य
11 - ए मुखर्जी नगर
पायनियर स्कूल चौराहा
देवास (म.प्र.) - 455001
मोबाइल – 9826013806

"चारों ओर सन्नाटा है / लेकिन कठपुतलियाँ जाग रही हैं / और उनके साथ जागा हुआ है इतिहास / इतिहास, जिसे अतीत का हिस्सा मानकर / फेंक दिया जाता रहा है-अँधेरे में / हाँ, वही इतिहास और उसके वे चमकीले लोग / जिन पर गर्व करती कठपुतलियाँ / ख़ामोश और निश्चल हैं इन दिनों"

ये चंद पंक्तियाँ ही हमारे समय के सच को बयान करने के लिए पर्याप्त है। लेकिन इस सन्नाटे और अँधेरे समय में भी कविता चेतना सम्पन्न है और वह अपनी तरफ़ से पुरज़ोर ढंग का ज़रूरी सात्विक विरोध भी दर्ज कर रही है। यह आश्वस्ति हमें साफ़ तौर पर श्रीराम दवे के ताज़ा कविता संग्रह 'कठपुतलियाँ जाग रही हैं' पढ़ते हुए मिलती रहती है। बीते चार दशकों से कविता में संलग्न-सक्रिय कवि श्रीराम दवे की दृष्टि बहुत स्पष्ट है।

इधर बाज़ार के दखल ने हमारे बीच के स्नेह-प्रेम, मनुष्यता और नैतिकता को सोख लिया तो तथाकथित विकास ने प्रकृति के हज़ारों-हज़ार साल पुराने ताने-बाने को ही छिन्न-भिन्न कर दिया है। ऐसे उजाड़, बंजर और दरिद्र समय में जब तमाम इनसे लड़ने के सारे हथियार बोथरे साबित हो चुके हैं तब कविता प्रतिपक्ष में खड़ी क्षीण ही सही, अपनी आवाज़ उठाती है। वह हमेशा मनुष्यता के लिए होती है। वह मनुष्यता का विस्तार करती है और समाज में मानवीय गुणों के प्रसार की कोशिश करती है। कविता का कोना हमारे भीतर की नमी को बचाए, बनाए रखता है। वह धरती पर मनुष्यता के लिए निरंतर पैरवी करती है। 'कठपुतलियाँ जाग रही हैं' संग्रह की कविताओं से गुज़रते हुए हम लगातार इस नमी को महसूस कर सकते हैं, इस पैरवी को सुन सकते हैं।

ये कविताएँ अपने शिल्प और कहन में सहज-सरल होने के बावजूद अपने समय की पड़ताल पूरी साफगोई से करती हैं। उनकी चालीस साला कविता यात्रा के निशान हमें इन कविताओं में नज़र आते हैं। कोई कविता तब ही मुठभेड़ के अंदाज़ में समाज की आँखों में आँखें डालकर सवाल दाग सकती है, जब उसके कवि में विचार संपन्नता हो, इसके लिए ज़रूरी साहस हो और यह जोखिम उठाने का माद्दा हो।

यह उनका चौथा संग्रह है और क़रीब दस साल के अंतराल के बाद आया है। इसकी भूमिका

लिखते हुए आलोचक राजेश सक्सेना समीचीन ही कहते हैं-"इस संग्रह में संघर्ष के बेचैन स्वर और हस्तक्षेप के साथ प्रतिरोध की एक तमक भी दिखाई पड़ती है, कदाचित यही कारण है कि 'कठपुतलियाँ जाग रही हैं' जैसी कविता इसकी शीर्षक कविता बनती है। स्त्रियों के उत्पीड़न और उन पर निरंतर होने वाले दुराचार को लेकर उनकी कविता की बेचैनी 'बीहड़' जैसी कविता-शृंखला लिखती है।"

संग्रह में यात्रा पर आठ कविताएँ एक शृंखला में हैं। इसी तरह स्त्री मुद्दों पर 'बीहड़' 'चेहरा' और 'मार' शीर्षक से भी एकाधिक कविताएँ हैं। भाषा के लिहाज से 'बासीदा' कविता इस कारण बड़ी हो जाती है कि इसमें अंचल से छूटती हुई मालवी बोली के कुछ शब्द सहेजे गए हैं। इस तरह के शब्द कुछ अन्य कविताओं में भी आते हैं। 'शाही स्नान' हमारी व्यवस्था की कलाई खोलती है। 'युद्ध' कविता में यह पंक्ति बड़ी अच्छी बन पड़ी है-"कोई युद्ध कभी भी शांति का प्रतीक नहीं हो सकता। कोई युद्ध कभी ख़त्म नहीं होता।" 'विदूषक' में वे कहते हैं-"और हर विदूषक की अपनी सत्ता होती है।" 'बुन्दु खां' 'करघे मौन हैं' और 'बेलदार' कथात्मक कविता है, जो किरदार के चरित्र को उजागर करती है। 'झरबेरी', 'बसंत' और 'पतझर' भी कविता के विषय हैं। हँसी कई जगह कई रूप में कविताओं में शामिल है। लखनऊ के अस्पताल में बच्चों की मौतों और हिमालय में भूकंप त्रासदी पर कुछ कविताएँ हैं। स्टीफन हॉकिंग पर लिखी कविता भी अच्छी है।

'कैसे कहें यहाँ सब ठीक है', 'न तो दिन मीठे हैं और न रातें ठंडी', 'जड़ होते हुए समय में' जैसी कविताएँ हमें बताती हैं कि अब हम कहाँ तक गिर चुके हैं। नैतिक पतन के साथ प्रकृति, समाज और सोच में आए बदलावों ने किस तरह हमसे हमारी सबसे अनमोल मनुष्यता को तबाह कर दिया है, कि किस तरह हमारे बीच का भरोसा टूट रहा है। लेकिन कवि की दृष्टि इस अँधेरे समय में भी एक उम्मीद की तरह कुहासे के पार किसी किरण की शहतीर को देख पा रही है, इसे हम उनकी कविता 'अभी शेष है' में देख सकते हैं।

संग्रह के पूर्वकथन में श्रीराम दवे कहते हैं-"एक विशेष प्रकार के सात्विक विरोध का स्वर मेरी कविताओं में बना हुआ है। निश्चित ही ऐसा कोई पूर्वाग्रह मुझे नहीं और न ही किसी वाद या खेमे से इन कविताओं को 'ऑक्सीजन' मिली है। जब-जब भी स्थितियों ने विचलित किया है, तब-तब कोरे काग़ज़ और कलम ने मुझे न केवल आश्वस्त किया है प्रत्युत बेबाक अभिव्यक्ति के लिए प्रेरित भी किया है। चूँकि बीते दशक में प्रकृति से लेकर समाज और सोच से लेकर व्यवहार तक में परिवर्तन हुए हैं इसलिए इन कविताओं में उनका अक्स आना स्वाभाविक है।"

यही बात हमें उनकी इन कविताओं में स्पष्ट दिखती भी है। उनके यहाँ जीवन जीने और लिखने वाले दो अलग-अलग लोग नहीं हैं, वे एक ही हैं। जीवन और कविता का संघर्ष उनमें एकाकार होकर घनीभूत हो जाता है। एक कवि की कविताओं को पढ़ते हुए हम कविता के ताप और तेवर के साथ-साथ उसके व्यक्तित्व से भी रु-ब-रु होते हैं। साधारण जीवन में असाधारण खालिस कवि के रूप में हम सब उन्हें जानते रहे हैं।

भले ही कोई कुछ भी कहे / जब भूख लगती है बच्चों को / और घर का कनस्तर ढब-ढब बोलने लगता है / तब-तब / कठपुतलियाँ डोर में बँधने के लिए / ख़ुद तैयार होने लगती हैं / अपनी समस्त विवशताओं को विस्मृत कर

कुल मिलाकर ये कवि की उस शाश्वत आदिम इच्छा की कविताएँ हैं, जहाँ वह बेहतर और ख़ूबसूरत दुनिया के साथ मनुष्यता का स्वप्न देखता है। वह चाहता है कि धरती पर इंसानियत काबिज रहे। यह दुनिया अपनी आदमियत के साथ ही ख़ूबसूरत हो सकती है। इंसान और इंसान के बीच स्नेह का नाता दुनिया का सबसे सुंदर और ज़रूरी रिश्ता है। जिस दिन यह रिश्ता नहीं बचेगा, दुनिया बेहद उजाड़ और नीरस हो जाएगी। आसमानी ख़्वाब देखते रहने के बावजूद कवि अपनी मिट्टी से जुड़ा है। यह सबसे अच्छी बात है।

000

नई पुस्तक

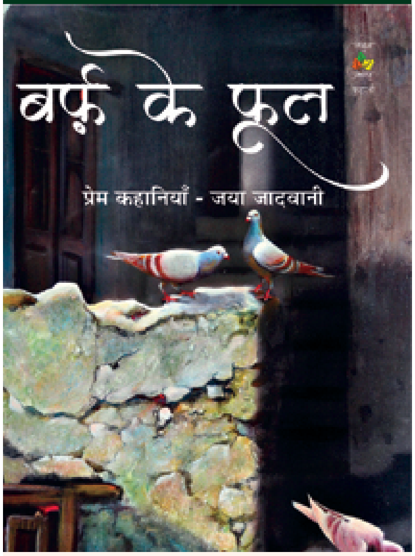

बर्फ़ के फूल

(जया जादवानी की प्रेम कहानियाँ)

संपादक : मनीषा कुलश्रेष्ठ

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

चर्चित कथाकार जया जादवानी की प्रेम कहानियों का संकलन कथाकार मनीषा कुलश्रेष्ठ के संपादन में प्रकाशित होकर शिवना प्रकाशन से आया है। इस संग्रह में बर्फ़ के फूल, मेरी तस्वीर आधी रह गई है, हमसफ़र, आपने मुझे देखा है, मितान, सिर्फ एक दिन, अनकहा आख्यान, उससे पूछो, आख़िरी बार से पहले, आख़िरी सिगरेट, घाट, इसे ऐसा ही होने दो कहानियाँ संकलित की गई हैं। संपादक मनीषा कुलश्रेष्ठ इस संग्रह को लेकर कहती हैं- प्रेम में मिली पीड़ा को जीवन-पाथेय बनाते हैं। जया जादवानी की कहानियों में प्रेम के बरक्स प्रकृति का अवलम्बन अद्भुत रूप से अभिव्यक्त होता है। प्रेम की सारी सहज कोमलता में प्रकृति की उपस्थिति रहती है। हर सुलझे हुए लेखक की तरह जया की कहानियाँ भी इस फ़लसफ़े पर आकर ठिठकती हैं कि सफल प्रेम कहानी वह नहीं जो विवाह तक पहुँचे और ख़त्म हो जाए, सफल प्रेम कहानी में असफल प्रेम का होना ज़रूरी है।

000

पुस्तक समीक्षा

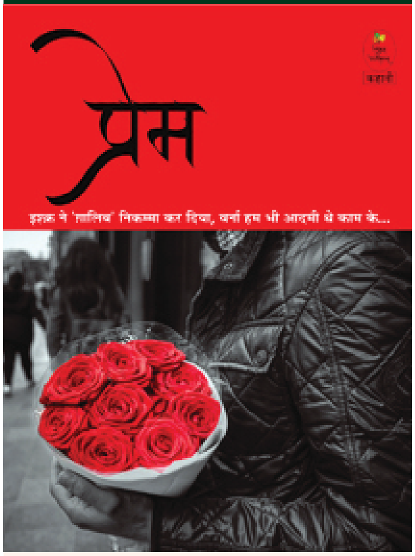

प्रेम

(कहानी संग्रह)

समीक्षक : प्रो. अवध किशोर प्रसाद

लेखक : पंकज सुबीर

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सीहोर

पंकज सुबीर ने शिवना प्रकाशन सीहोर से प्रकाशित अपने कहानी संग्रह "प्रेम" में संकलित समस्त तेईस कहानियों में प्राय: 'प्रेम की शाश्वत गति विरह' को अभिव्यंजित किया है। प्रेम की परिणति मिलन है किन्तु कथाकार ने प्रेम की परिणति का आधार विरह की शाश्वतता को स्वीकार किया है। इसलिए प्रेमी- प्रेमिका एक दूसरे से दूर रहते हुए भी प्रेम की अखंड-उज्वल ज्योति जलाए रहते हैं। चाहे वे 'रंगून क्रीपर' की लता और निर्मल हों,'एक रात' की वीणा और सुनील हों, 'राहों पे नज़र रखना' की मंजरी और संभव हों, 'उदास शाम' की नेहा और तरुण हों अथवा 'मेरा गीत अमर कर दो' की गीता और साहिल हों, सभी प्रेम की मार्मिकता, अर्थवत्ता और आदर्शोन्मुखता को स्थापित करते हैं। तभी तो 'रंगून क्रीपर' का निर्मल लता से कहता है—"मैं तुमसे तुम्हारे परिवार से जीवन भर जुड़ा रहना चाहता हूँ। तुम्हारी स्मृतियों में केवल मैं हूँ, जबकि मेरी स्मृतियों में तुम्हारे साथ अंकल-आंटी का निश्छल प्यार भी है। तुम अपने अतीत से केवल मुझको लौटाना चाह रही हो कि वह पूरा अतीत लौट आए जबकि मैं उस पूरे कालखण्ड को जीवित रखना चाहता हूँ, ताकि वह अतीत बनने नहीं पाए। इसलिए तो यह मर्यादा की लक्ष्मण रेखा मैंने अपने बीच खींची है।"(पृ.२६) संकलन की इन कहानियों में निश्छल प्रेम की मार्मिकता है, प्रेमी एवं प्रेमिका के ह्रदयों में प्रेम की टीस, तड़प और वेदना है, किन्तु वहाँ उतावलापन नहीं है, तड़प को व्यक्त करने की आकुलता नहीं है, बल्कि अदम्य उत्साह है, प्रबल मिलनाकांक्षा है और है अतृप्त प्यास। ये प्रेमी युगल प्रेम की अहमन्यता को समझते-महसूसते हैं। तभी तो 'मैं बेला ही हूँ मास्साब'की बेला कहती है -"स्त्री अपने जीवन का प्रथम प्रेम कभी नहीं भूलती है ......स्त्री के लिए प्रेम उसके जीवन का पूरा इतिहास होता है ...आपके वे दो गजरे आज तक मेरे पास सुरक्षित हैं"। प्रत्युत्तर में मास्टर सुभाष कहता है -"मैं उन स्मृतियों को, उन अनुभूतियों को अपने अन्दर हमेशा महसूस करना चाहता था, इसलिए एकाकी हो गया। मैंने तुम्हें छोड़ा नहीं है बेला, तुम आज भी मेरे साथ हो"। (पृ८३) 'राहों पे नज़र रखना' में मंजरी की प्रतीक्षा अनंत है। वह पिता की बात काट कर अपने प्रेमी रोहित के लिए विवाह को रोक देती है। किन्तु अंत में उसे अनंत वियोग की सौगात मिलती है। उसी तरह 'चाँद की खिड़कियाँ' की प्रतिभा कॅरियर बनाने के चक्कर में अपने प्रेमी सुधांशु को खोकर एकाकी जीवन जीना स्वीकार कर लेती है।

किन्तु प्रेम की फूटती किरण लंबी प्रतीक्षा के बाद भी मिलन की परिणति को प्राप्त करती है। 'क्षितिज की राह पर कहीं वो नीड़' के देवेन्द्र पटेल और विभा, 'खंडित ताजमहल' के वारुणी और सीमा, 'नसीम-ए –सुब्ह' के सुधाकर और नसीम जीवन के लम्बे दौर तक एक दूसरे के प्रेम में पगे रहते हुए अंत में मिलकर प्रेम की सार्थकता को सिद्ध करते हैं। कथाकार अपनी प्रवृत्ति के अनुसार (द्रष्टव्य: होली में संकलित कहानियाँ) प्रेमी –प्रेमिका से कुछ नहीं कहलवाता है, न तो स्वयं कुछ कहता है, बल्कि प्रकृति से उनके मिलन का इज़हार करवाता है। 'क्षितिज की राह पर कहीं वो नीड़' कहानी में देवेन्द्र पटेल और विभा के मिलन का सत्यापन प्रकृति करती है -" दूर कहीं क्षितिज के पास बना मकान धीरे-धीरे नीड़ में बदल रहा था।"(पृ.९२) 'खंडित ताजमहल' में सीमा और वारुणी के मिलन को "खंडित ताजमहल का जीर्णोद्धार प्रारम्भ हो चुका था" जैसे वाक्य से किया गया है। 'नसीम –ए –सुब्ह' में सुधाकर और नसीम के अद्भुत प्रेम को –"मैं भी नसीमे –सुब्ह बनकर रोज़ आऊँगी और आपको छूकर एहसास दिलाऊँगी कि मैं कहीं नहीं गई आपके पास ही हूँ" जैसे कथन से व्यक्त किया गया है। इन कहानियों में मिलन के सुख का अद्भुत वर्णन हुआ है। यहाँ न वियोग की पीड़ा है, न अहर्निश प्रतीक्षा और न ही जीवन संघर्ष है, बल्कि यहाँ मिलन का सुख है, प्रणय का उल्लास है और जीवन के उस पार की मिलनाकांक्षा है। बीमार चल रही प्रेमिका नसीम अपने प्रेमी सुधाकर से कहती है -"मैं आपको छोड़कर जा नहीं सकती, अगर चली भी गई तो नसीमे सुब्ह बनकर रोज़ आपसे मिलने आया करूँगी। वहीं, उसी जगह, जहाँ आपसे पहली बार मिली थी, उसी झील के किनारे। आप रोज़ सुबह आया

प्रो. अवध किशोर प्रसाद
द्वारा- कुमार राजेश, सी.ए.ओ
सी.आई.ए.ई. नबी बाग़
बैरसिया रोड, भोपाल (एम.पी.) 462038
मोबाइल– 9599794129

कीजिएगा। मैं भी नसीमे-सुबह बनकर रोज़ आऊँगी और आपको छूकर एहसास दिलाऊँगी कि मैं कहीं नहीं गई आप के पास ही हूँ"(पृ.-४१) "इस पार प्रिये तुम हो मधु है, उस पार न जाने क्या होगा" की यहाँ चिंता नहीं है, क्योंकि प्रेमिका अपने प्रेमी को 'नसीमे-सुबह बनकर' रोज़ आने का वायदा कर जाती है। यहाँ अपने प्रेमी से मिलने की ललक प्रेमिका को उस पार से खींचकर धरती पर ले आती है, तो कहीं प्रेमिका को अहर्निश देखते रहने की लालसा प्रेमी को उस पार पहुँचा देती है। 'दो नैना मत खाइयो.....!' का मिश्रीलाल अपनी बाल प्रेमिका उर्मिला को देखते रहने के लिए ही बम विस्फोट में अपनी दोनों आँखे खो देने वाले उस के कर्नल पति को अपनी दोनों आँखें प्रदान कर अपनी चाहत पूर्ण करता है। 'प्रेम सिर्फ लेने का ही नाम नहीं है, प्रेम देता भी है'। मिश्रीलाल की वसीयत इस तथ्य को सत्यापित करती है -"मैं पंडित मिश्रीलाल उपाध्याय पुत्र स्वर्गीय श्री पंडित गिरिजा शंकर उपाध्याय निवासी ग्राम दौलतपुर पूरे होशो-हवाश में वसीयत करता हूँ कि मेरी मृत्यु के पश्चात् मेरी दोनों आँखों को तुरंत निकलवा कर गाँव के श्री मणीराम की बेटी उर्मिला के पति श्री चन्द्र शेखर को लगवा दी जाएँ"(पृष्ठ.१६८)।

'गुलमोहर' शीर्षक कहानी में प्रेम की परिभाषा, प्रेम की प्रासंगिकता एवं सार्थकता को अभिव्यंजित किया गया है। कथाकार ने गुलमोहर को प्रतीक मानकर प्रेम को पारिभाषित किया है- "जब ज़िंदगी में कड़ी धूप हो तब जो गुलमोहर आपके लिए खिल उठे वही आपका प्रेम है।" और "कोई होता है जिसको कड़ी धूप में खड़े देखकर हमें लगता है कि हम गुलमोहर बनकर उस पर छा जाएँ, बस वही प्रेम होता है"(पृ-४४)।

जब सुजाता को लगता है कि उसका पति कुमार उससे प्रेम नहीं करता है, तो राजेश उसे समझाता है—"प्रेम प्रश्न नहीं पूछता, वह तो केवल समर्पण करता है, और फिर कड़ी धूप में तो कुमार खड़ा है, छाँव तो तुम्हें ही करनी होगी। अब तुम्हारे जीवन में कड़ी गर्मियों का मौसम आ गया है, अब तुम्हें गुलमोहर बनना पड़ेगा"(पृ-४४)। यह कहानी कम प्रेम की व्याख्या अधिक है। वैसे ही 'सुनो मांडव' शीर्षक कहानी में प्रेम की अवस्थिति की व्याख्या की गई है। प्रेम को देह के धरातल पर रखकर विवेचित किया गया है। मांडव में रानी रूपमती के महल के चबूतरे पर एक युवती के साथ प्रिया के तर्क–वितर्क के माध्यम से कथाकार ने प्रेम की अवस्थिति का उल्लेख किया है। युवती कहती है -"प्रेम में देह भी होती है, लेकिन प्रेम में देह ही होती है, ऐसा भी नहीं है। होस्टल के उस अँधेरे कमरे में जो कुछ तुम तलाशते हो, वो निस्संदेह देह ही है, लेकिन जिसकी तलाश में तुम यहाँ तक आए हो, वो प्रेम ही है। दोनों साथ-साथ चलते हैं।" (पृ.-१५७) देह और प्रेम का यह विश्लेषण अद्‌भुत और यथार्थ है।

संकलन की सभी कहानियों में प्रेम की अभिव्यक्ति हुई है कहीं मिलन का सुख है, तो कहीं विरह की मर्मान्तक पीड़ा, तो कहीं अहर्निश प्रतीक्षा, तो कहीं 'उस पार' की निश्चिंतता और सबसे बढ़कर अनोखा त्याग। संकलन की कहानियों का प्रतिपाद्य प्रेम है इसलिए पुस्तक का शीर्षक 'प्रेम' सटीक और सार्थक है।

पंकज सुबीर की भाषा लालित्यपूर्ण एवं लचकदार होती है। इसमें प्रकृति की रंगीनियों का चित्रण होता है। पंकज सुबीर अपनी बात प्राकृतिक चित्रावली से शुरू करते हैं और अंत भी प्रकृति की रम्य–सुरम्य चित्रावलियों के साथ ही करते हैं। संकलन की कहानियों की भाषा में लालित्य और प्रवाह है। शब्दों और वाक्यों का सुंदर समायोजन हुआ है। प्रकृति भावों की अभिव्यक्ति एवं भाषा की रमणीयता में चार चाँद लगा देती है। संकलन की कहानियों में बिखरे प्रकृति के ये चित्र अनोखे हैं।

यथा -"सिंदूरी-सा सूरज धीरे-धीरे उफ़क से नीचे जा रहा है, परछाइयाँ लम्बी होकर अँधेरे में डूब रही हैं", "खिड़की के बाहर गर्मी की रात बिखरी हुई है", "साँवली परछाइयों के उदास साए आसमान पर भटक रहे थे"। प्रकृति यहाँ मानवीय रूप में उपस्थित है।

000

नई पुस्तक

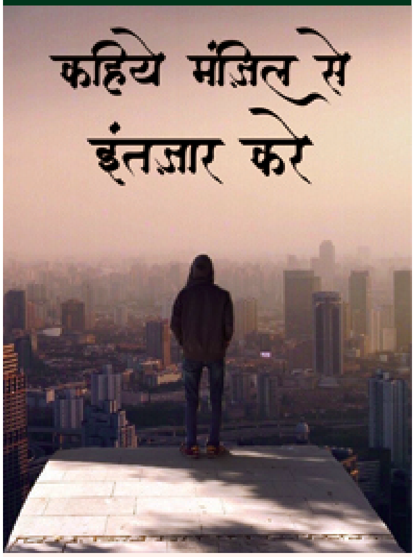

कहिये मंज़िल से इंतज़ार करे

(उपन्यास)

लेखक : गजेन्द्र सिंह वर्धमान

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

पहली कृति किसी भी लेखक के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। गजेन्द्र सिंह वर्धमान की पहली कृति "कहिये मंज़िल से इंतज़ार करे" जो एक उपन्यास है, शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आ रहा है। उन लोगों को यह किताब नई दिशा प्रदान करेगी जो ज़िंदगी के संघर्षों से हार जाते हैं। शीर्षक में जो आत्मविश्वास है वह पूरे उपन्यास में मौजूद है। कथाकार पंकज सुबीर इस उपन्यास के बारे में कहते हैं- एक बात इस उपन्यास के बारे में कहना चाहूँगा, वह ये कि यह उपन्यास निराशा का उपन्यास नहीं है। बावजूद इसके कि उपन्यास के पहले लगभग आधे से ज़्यादा हिस्से में असफलताएँ हैं, पराजय है; मगर उसके बाद भी उपन्यास हौसले को बचाए रखता है। कथा-नायक गिरता है, फिर उठ कर चल पड़ता है। यह इस उपन्यास की बड़ी ख़ूबी है। टूटे हुए और निराश लोगों के लिए यह उपन्यास बहुत अच्छा मार्गदर्शक हो सकता है।

000

पुस्तक समीक्षा

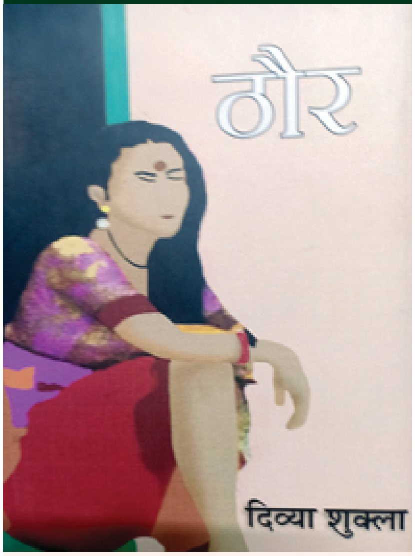

ठौर
(कहानी संग्रह)

समीक्षक : विजय पुष्पम

लेखक : दिव्या शुक्ला

प्रकाशक : रश्मि प्रकाशन, लखनऊ

दिव्या शुक्ला का कहानी संग्रह 'ठौर' सात कहानियों का ऐसा प्रवाह है जो समाज के विचलन, समस्याओं, विडम्बनाओं, उलझनों के साथ पाठकों को अपने साथ बहाए लिए चलता है। कहानियाँ वास्तविकता और कल्पनाओं के ताने-बाने में बुनी ऐसी चादर की तरह हैं जो पाठकों को अपने आग़ोश में लपेट लेती हैं। जीवन से उठाई गई ये कहानियाँ कोई विमर्श या ज़िंदाबाद-मुर्दाबाद नही करतीं पर मन की घुटन, संत्रास व पीड़ा को शब्दों के माध्यम से व्यक्त कर देती हैं। लेखिका का आत्मकथ्य कहानियों की रचना प्रक्रिया रूपी भवन का नींव का पत्थर है जिस पर कहानियाँ मंज़िल दर मंज़िल जुड़ती चली गई हैं। हर कहानी एक अलग कथावस्तु के साथ सामाजिक विडम्बनाओं को परत दर परत खोलती है। संग्रह की सभी कहानियाँ अलग-अलग पत्रिकाओं में प्रकाशित होकर चर्चित रही हैं तथा सराही गई हैं। अपनी दूसरी ही कहानी से रमाकांत स्मृति पुरस्कार से सम्मानित हुईं। पहली कहानी गिद्ध के पश्चात् 'निकट' पत्रिका में छपी 'अग्निगर्भा' के लिए यह सम्मान मिला जो किसी भी रचनाकार के लिए गर्व का विषय हो सकता है। हालाँकि दिव्या जी ने बहुत देर से कहानी लेखन में पदार्पण किया, फिर भी आते ही साहित्य जगत् में एक अच्छा मुकाम बना लिया और कम ही समय में एक कहानी संग्रह के रूप में रचनाएँ इकट्ठी होकर पाठकों के समक्ष आईं।

संग्रह की सभी कहानियाँ पाठकों को अपने साथ बाँधे हुए लिए चलती हैं और उस समय, काल, परिस्थिति में ले जाकर छोड़ती हैं जहाँ कहानी के चरित्र रह रहे होते हैं। मुख़्तलिफ़ परिस्थितियों में स्त्री की सोच, अपने अधिकारों के साथ ही कर्तव्यों को पूर्ण करने की सजगता, अपनी अस्मिता की रक्षा के साथ ही मुखर विद्रोह स्त्री चरित्रों को अलग आयाम देते हैं। कहानियों में प्रेम, समर्पण जैसे भाव हैं तो सामंती रख-रखाव से टक्कर लेने की ताक़त भी दिखाई देती है। कहानियों के चरित्र चूँकि अपने आस-पास से ही उठाये गए हैं तो परिवेश के हिसाब से भाषा और लोकाचार का भी सजीव चित्रण मिलता है। गाँव की परंपरागत शैली के साथ ही शहर की आपा-धापी वाली जीवन शैली का चित्रण कहानियों में बखूबी हुआ है जिससे लेखिका के सामाजिक जीवन पर पैनी नज़र की तस्दीक होती है। यदि हृषिकेश सुलभ जी के शब्दों में कहें तो 'जीवन के घात-प्रतिघात, द्वंद्व, अंतर्विरोध और मानवीय संवेदना का विलक्षण अन्तरगुम्फन इन कहानियों को विशिष्ट बना देता है। स्त्री जीवन का वह क्रूर यथार्थ जिसे पुरुष सत्तात्मक समाज अक्सर अपने मोहक तर्कों से छिपाकर स्त्री को प्रश्नांकित करता है, दिव्या शुक्ला उस क्रूर

विजय पुष्पम
एच ए एल टाउनशिप, लखनऊ, उप्र
226016
मोबाइल- 9415516679-
7905307406

यथार्थ को कलात्मकता के साथ अपनी कहानियों में बेहिचक प्रकट करती हैं और तथाकथित नैतिकता के आवरण को भेदकर लैंगिक अस्मिता के प्रश्नों को अपनी कहानियों की केंद्रीय चेतना बना देती हैं।'

संग्रह की पहली कहानी 'गिद्ध' समाज के उस अभिजात्य वर्ग में फैली सड़ाँध के विषय में है जहाँ स्त्री किसी भी वयस की हो स्तर की हो, सिर्फ भोग्या के रूप में ही देखी जाती है। यह अवश्य है कि समस्त पुरुष लोलुप नहीं होते कुछ सम्बल प्रदान करने वाले भी होते हैं। लेखिका की संतुलित दृष्टि इस बात का निरूपण करने में भी नहीं चूकती। जहाँ अजीत और खुराना जैसे गिद्ध की तरह पंजे गड़ा देने के लिए तत्पर लोग हैं वहीं अशोक और ईशान जैसे पुरुष भी हैं जो किसी भी अप्रिय स्थिति को न आने देने के लिए अपना सम्पूर्ण प्रयास करते हैं। एक संतुलित कहानी है 'गिद्ध' जिसमें समाज के विभिन्न तबकों में व्याप्त आदिम भूख अपने विकृत रूप में दिखाई देती है।

संग्रह की दूसरी कहानी 'अग्निगर्भा' एक सामंती ठाकुर परिवार की बड़ी बहू चंदा की कहानी है जिसका पति अपनी यौनिक अक्षमता को छिपाने के लिए स्वयं को घर के बाहर व्यस्त रखता है और अपनी कुंठा को मारपीट और अपशब्दों के रूप में पत्नी पर उतारता रहता है, अपनी स्थिति को न मानकर पत्नी को ही बंजर करार देता है। आज भी भारतीय लोक का ताना-बाना ऐसी मानसिकता से बना है जिसमें पुरुष की कमज़ोरी के विषय में सोचा भी नही जाता, स्त्री को ही बाँझ-बंजर के तमगे से नवाज़ दिया जाता है। स्त्री के सारे गुण, रूप-लावण्य मातृत्व धारण किये बिना शून्य समझे जाते हैं। लेकिन उसी मातृत्व प्राप्ति के लिए अगर चंदा दूसरा रास्ता अख्तियार करती है तो रंडी और छिनाल जैसे शब्दों से उस पर प्रहार होता है। इस पर चंदा का व्यक्तित्व एक अशक्त और दृढ़ स्त्री का नज़र आता है जब वह कहती है, 'यह पाप नहीं है, तुम्हारे मुँह से बाँझ-बंजर सुनते रहे, कभी कहा नही। आज सुन लो, धरती कभी बंजर नही होती। बीज नपुंसक होता है वरना रेगिस्तान और ऊसर में भी खर-पतवार तो उग ही आते हैं।'

चंदा की देवरानी और सास का ताक़त बनकर उसके साथ खड़ा होना एक सामाजिक बदलाव की तरफ इंगित करता है, जहाँ कहा जाता है कि स्त्री ही स्त्री की शत्रु होती है। आने वाली सन्तान के स्वागत में सतवासा पूजने का न्योता व होने वाला नाच-गाना एक सकारात्मक बदलाव की राह में कदम की तरह दिखाई देता है।

संग्रह की तीसरी कहानी 'हूक' समाज के ऐसे अनैतिक रूप को सामने रखती है जिसके विषय में बात करने और सोचने में हृदय लरजता है, कतराया जाता है, लेकिन गाँव - देहात व क़स्बाई समाज की बड़ी-बूढ़ियाँ साफ-साफ न कहकर भी बहुत कुछ जता जाती हैं। सहानुभूति के साथ ही क्रोध और घृणा के भाव भी कहानी पढ़ते हुए मन में मचलते रहते हैं। कहानी का अंतिम वाक्य 'जब बाड़ ही खेत खाने लगे तो फसल कहाँ जाए?' एक बहुत बड़ा सवाल छोड़ जाता है।

'फैसला' संग्रह की चौथी कहानी है अपने स्त्रीत्व की अस्मिता को बचाये रखने के लिए संघर्ष करती हुई स्त्री के रूप में मेघा का चरित्र और उसकी छटपटाहट को बहुत बारीकी से उकेरा गया है। स्त्री को मनुष्य मात्र न मानकर एक कमोडिटी भर मान लेने की सामंती सोच आत्मसम्मान पर कितनी बड़ी चोट पहुँचा सकती है, यह कहानी पढ़कर ही समझा जा सकता है।

संग्रह की शीर्षक कहानी 'ठौर' समाज के बुज़ुर्गों की उस अवस्था की कहानी है जब उन्हें घर के सुखद माहौल, देखभाल और सहायता की ज़रूरत होती है तब उन्हें वृद्धाश्रम में रहना पड़ता है। सारा जीवन, धन-दौलत बच्चों पर न्योछावर करने के पश्चात जीवन संध्या में उपेक्षित और घर बदर किये गए अभिशप्त बुज़ुर्ग वृद्धाश्रम में ही ठौर पाते हैं। कहानी में व्यक्त पीड़ा, जीवन मूल्यों का विचलन आने वाले वक्त के लिए मन को संशय में डाल देती है।

'चिन्दी चिन्दी सुख- थान बराबर दु:ख' एक ऐसी स्त्री की कहानी है जो विवाह के दो ही वर्षों में विधवा हो जाती है तिस पर कोढ़ में खाज एक बच्चा, और वह भी बेटी। ऐसी स्त्री जिसके लिए न मायके में स्थान है और न ससुराल में। ऐसे में सुंदरता अलग ही बैरी बन जाती है। उपेक्षा, शोषण और आर्थिक अभाव को झेलते हुए, जीवन में आये तमाम उतार-चढ़ाव को देखते हुए कहानी की नायिका अपने जीवन में स्थायित्व लाने के लिए प्राण पण से प्रयास करती है और बेटी दामाद के सहयोग से एक बार फिर सुख के दिन उसके जीवन में आते हैं। संघर्ष करते हुए उसका अच्छे जीवन में पुन: प्रवेश प्रेरक है।

संग्रह की अंतिम कहानी 'देह दंश' एक ऐसी बच्ची के शोषण की कहानी है जिसे घरेलू सहायिका के रूप में किसी परिवार के साथ अपने घर से बहुत दूर दिल्ली चंद रुपयों के लिए भेज दिया जाता है। जाने कितनी ऐसी ग़रीब बच्चियाँ अपने घर परिवार से दूर मानसिक और शारीरिक शोषण सहती हैं। ऐसी घटनाएँ अब सहज स्वीकार्य होती जा रही हैं। यदि समाज मुखर नहीं होता है तो यह स्वीकार्यता ही मानी जाएगी। ऐसे में जान बचाकर भागी बच्चियाँ न जाने किस पथ की राही बन जाती हैं। कोई ही भाग्यशाली होगी जो सही सलामत घर लौट पाती होगी। कहानी अन्तस् को झिंझोड़ने वाली है।

अपनी कहानियों से दिव्या जी ने समाज के दोहरे मापदंडों और छद्म चेहरों पर से नकाब खींची है। स्त्री को मात्र देह समझने की मानसिकता को बहुत मार्मिक शब्दों में चित्रित किया है। कहानियाँ सहज और सरल भाषा में होने की वजह से आकृष्ट करती हैं। कहानियों में जिस बोली बानी का इस्तेमाल किया गया है उससे कहानी के चरित्र और अधिक मौलिक रूप में दिखाई देते हैं। बहुत करीब से देखी गई, महसूस की गई दर्दनाक घटनाओं का लेखा-जोखा हैं ये कहानियाँ। इनमें दिव्या जी के सामाजिक सरोकार और परिस्थितियों की निष्पक्ष विवेचना करने की परिपक्व दृष्टि परिलक्षित होती है।

दिव्या जी को अपने पहले कहानी संग्रह के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ।

000

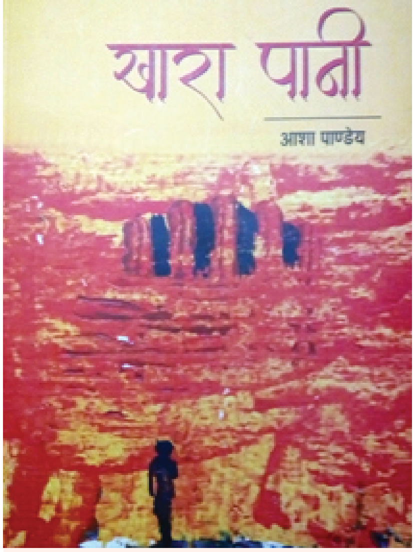

खारा पानी

(कहानी संग्रह)

समीक्षक : गोविंद सेन

लेखक : आशा पांडेय

प्रकाशक : बोधि प्रकाशन,जयपुर

'खारा पानी' आशा पांडेय का तीसरा कहानी संग्रह है। इसके अलावा उनके खाते में एक यात्रा वृतांत, दो कविता संग्रह, हाइकु संग्रह, दोहा संग्रह, तीन बाल कविता संग्रह भी हैं। इस तरह लेखिका की गद्य-पद्य की कुल जमा ग्यारह किताबें प्रकाश में आ चुकी हैं। स्त्री होना एक त्रासदी से कम नहीं है। क़दम-क़दम पर उसे दैहिक और मानसिक शोषण का शिकार होना पड़ता है। समीक्ष्य कहानी संग्रह 'खारा पानी' के ज़रिए आशा पांडेय ने दुनिया की इस आधी आबादी की मनोव्यथा, द्वंद्व, आशा-निराशा, बेबसी, बेचैनी, आकांक्षा, शोषण और जिजीविषा को वाणी देने का सफल प्रयास किया है। ग्रामीण जन-जीवन के ताने-बाने में रची-बसी स्त्री के असीम कष्टों से लेखिका भलीभाँति परिचित हैं। इसीलिए उनका चित्रण सजीव, विश्वसनीय और हृदयग्राही बन पड़ा है। स्त्री को हमेशा किसी न किसी पुरुष की छाया में जीना पड़ता है। वह पुरुष अक्सर उसका पिता, पति, भाई या कोई अन्य रिश्तेदार होता है। स्री को कष्ट केवल पुरुष ही नहीं देते, कभी-कभी तो कोई स्त्री भी उसका जीना दूभर कर देती है। स्त्री को देवी माना जाता है या दासी, कभी उसे मनुष्य का दर्जा नहीं दिया गया। ये कहानियाँ स्त्री के लिए मनुष्यता की माँग करती हैं।

आशा पांडेय चालू स्त्री-विमर्श से इतर स्त्री को उसके वास्तविक संघर्ष के बीच चित्रित करती हैं। उसकी हर स्थिति और संकट को बारीक रेखाओं के ज़रिए उकेरती हैं। शहरी स्त्री की अपेक्षा ग्रामीण स्त्री का संघर्ष अधिक विकट और जटिल होता है। ग्रामीण स्त्री की आशा-निराशा और सपने सभी कुछ इन कहानियों में बखूबी चित्रित हुए हैं। ख़ूबी यह है कि आशा पांडेय अपनी कहानियों में कहानीपन को ज़िंदा रखती हैं। हर कहानी में वे कुछ न कुछ नयापन देती हैं। ग्राम्य मुहावरे और कहावतें कथा प्रवाह में सहज ही आ गए हैं। आशा पांडेय कहानी को पूरी तफ़सील से लिखती हैं। उनकी कहानियों में इकहरापन नहीं मिलेगा।

स्त्री-जीवन के अलावा समाज के वंचित-दमित वर्ग, राजनीति के विघटित मूल्य और हाशिए में जीने वाले लोगों की समस्याओं को भी लेखिका ने पाठकों के समक्ष रखा है। ये पात्र होटल या अमीर घरों में काम करने वाले निम्न वर्ग के लड़के हैं जो गाँवों से रोज़ी-रोटी के लिए शहर में आए हैं। इस वर्ग के कुछ पात्र खुद्दार हैं तो कुछ मक्कार। लेखिका ने उन्हें जस का तस चित्रित करते हुए मानवता का पक्ष लिया है। अपनी कहानियों के जरिए समाज के सामने कुछ सवाल भी खड़े किए हैं क्योंकि एक स्वस्थ समाज तो वही होगा जिसके सभी अंगों का समुचित विकास हो। सामाजिक और आर्थिक असमानता एक बीमार समाज ही पैदा करेगी।

'यही एक राह' एक ऐसी प्रगतिशील सोच की महिला वैदेही की कहानी है जो असमय विधवा हो जाती है। वह अपने दम पर समाज से टक्कर लेते हुए साहस के साथ अपने दो बच्चों

गोविंद सेन
राधारमण कालोनी, मनावर–454446,
ज़िला–धार, म.प्र.
मोबाइल– 9893010439
ईमेल– govindsen2011@gmail.com

को पालती है। कालांतर में दोनों बेटों की भी मृत्यु हो जाती है। अब विधवा बहू और दो नाती की ज़िम्मेदारी उस पर है। प्रधान का भाई रामबरन उसे अकेली और असहाय जानकर उसकी ज़मीन हड़पना चाहता है। तब उसे एक ही राह सूझती है। वह राह वैसे तो अंधविश्वास की राह है पर उसी से उसके और उसके परिवार के बचाव की राह खुलती है। वह अपने शरीर में देवी की सवारी लाने लगती है। उसके शरीर में आने वाली देवी रामबरन को चेतावनी देती है कि वह उसकी सवारी वैदेही को परेशान करता है, इसलिए उसका सर्वनाश हो जाएगा। उसी शाम संयोग से रामबरन दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है। इस तरह वैदेही का सिक्का जम जाता है। उसके सारे संकट दूर हो जाते हैं पर वह देवी का अभिनय करते-करते थक जाती है।

'सुरक्षा' कहानी रेलवे प्लेटफ़ार्म पर घटित होती है। पच्चीस-अट्ठाइस साल की पागल महिला यात्रियों के लिए बनी एक बेंच पर अकेली बैठी है। महिला अपने अस्त-व्यस्त लिबास के बावजूद ख़ूबसूरत है। एक काला लोलुप अधेड़-सा पुरुष उसे आसान शिकार समझ उसके पास आता है। अपने तईं बहलाने-फुसलाने की कोशिश करता है। उसे अश्लील इशारा करते हुए पीछे ले जाने की कोशिश करता है। इसी उद्देश्य से पुरुष उसे चाय देने की कोशिश करता है पर वह अबोध और पागल महिला शायद उसकी मंशा भाँप जाती है और क्रोधित होकर वही गरम चाय उस पुरुष के चेहरे पर उछालकर उसे करारा थप्पड़ जड़ देती है। पुरुष तिलमिला जाता है। उस महिला के क्रोध से रेलवे स्टेशन पर चने-मुरमुरे और चाय-काफ़ी बेचने वालों को भी अपनी सुरक्षा की चिंता सताने लगती है। जबकि वह पागल महिला अपनी सुरक्षा ख़ुद कर लेती है। महिला घटना के बाद शांत भाव से स्टेशन से किसी ट्रेन की तरह चली जाती है। कहानी अपने छोटे-से कलेवर में अत्यंत प्रभावी है।

'दंश' गाँव से आए सनेही और पार्वती की कहानी है। शहर में एक साहब के यहाँ दोनों को काम और आउटहाऊस में रहने की सुविधा भी मिल जाती है। सनेही को बग़ीचे की देखभाल का काम मिल जाता है। पार्वती बँगले पर रसोई बनाने का काम करने लगती है। पार्वती सज-सँवर कर रहने लगी है। उल्टे पल्ले की साड़ी पहनने लगी है। बच्चे स्कूल जाने लगे हैं। पार्वती को छोटे साहब के चाय-पानी और भोजन के लिए बँगले पर अधिक समय रहना पड़ता है। उसकी पगार बढ़ जाती है। पर सनेही के मन में पार्वती और छोटे साहब को लेकर शंका का कीड़ा कुलबुलाने लग जाता है। यहीं स्थिति बिगड़ जाती है। पार्वती के स्वाभिमान को सनेही की शंका से गहरी ठेस लगती है। उससे भोजन बनाने में भूलें होने लगती हैं। इस शंका के दंश ने दोनों के जीवन को पटरी से उतार दिया। बच्चों के बेहतर जीवन के लिए देखे गए सपने धूमिल हो जाते हैं।

'वसीयत' कहानी के केन्द्र में स्त्री के अधिकार और पुरुष की स्वार्थपरता है। कथा नायिका अपने भैया और भाभी से शिंदे भाभी के ज़रिए अपना हक़ पा लेती है। एक भाई स्वार्थवश अपनी पत्नी की सहमति से अपनी बहन को उसके वाजिब अधिकार से वंचित रखता है, कहानी में यह सब तफ़सील से चित्रित किया गया है। कथा नायिका वसीयत अपनी तलाक़शुदा भतीजी मीता के नाम कर देती है। कहानी का अंत मर्मस्पर्शी है और कथा नायिका की संवेदना और समझ को अंकित कर जाता है।

'चीख़' मर्दवादी और जातिवादी सोच के तले पिसती स्त्री की मर्मस्पर्शी कहानी है जो पाठक को झकझोर कर रख देती है। कहानी की नायिका हंसा है। उसके पिता चौधरी उसकी इच्छा जाने बिना उसका ब्याह अपनी ही बिरादरी के धनी किंतु आठवीं फ़ेल लड़के के साथ कर देते हैं जबकि हंसा होनहार है। इसके अलावा लड़के का परिवार अहंकारी और लालची भी है। पति के आठवीं फ़ेल होने का सोचकर हंसा दसवीं की परीक्षा का फ़ार्म भी नहीं भरती। वह हर तरह से ससुराल से निर्वाह करना चाहती है पर ससुराल में उसकी भावनाओं और त्याग का कोई मूल्य नहीं है। पति उस पर हर तरह से अत्याचार करता है। उसे बताए बिना अल्ट्रासाउंड के ज़रिए गर्भ में लड़की की जानकारी होने पर उसके गर्भ को गिरा दिया जाता है। दूसरी बार जब गर्भवती हुई तो वह गर्भ की डॉक्टर से जाँच कराने का पुरज़ोर विरोध करती है। तब उसका पति उबलता दूध हंसा के सिर पर उँड़ेल देता है। तंग आकर वह अपने मायके यानी चौधरी के घर आ जाती है। वहीं उसे लड़का होता है। हंसा का पति दूसरा ब्याह कर लेता है। अब हंसा अपने बारह वर्षीय लड़के मोहन के साथ मायके में रहती है। उसी गाँव का एक ऊँची जाति का मास्टर उससे ब्याह करना चाहता है किंतु चौधरी और उसके भाई सुभाष को जाति और इज़्ज़त के झूठे अभिमान के कारण यह मंज़ूर नहीं। मोहन की भी मृत्यु हो जाती है। अंत में सुभाष यानी ख़ुद हंसा का भाई जैसा कि कहानी में संकेत है, उसे कुएँ में धकेल देता है। यह कहानी कहती है कि एक भारतीय स्त्री का पुरुषवादी समाज में जीना कितना मुश्किल है। स्त्री के सारे निर्णय पुरुष ही लेता है। उसकी इच्छा का कोई मूल्य नहीं। सारी ज़िल्लत उसे ही झेलनी पड़ती है। यह एक ऐसी चीख़ की कहानी है जो मर्दवादी समाज में अनसुनी रह जाती है।

कहानी 'कुल का दिया' बताती है कि जाति-धर्म से बड़ा रिश्ता इंसानियत का होता है। अंत में सुमेर मामा ही नैरेटर की बुआ की मृत्यु के उपरांत दीपक जलाता है। रिश्तेदार इसका विरोध करते हैं कि एक नीची जात के व्यक्ति को यह अधिकार नहीं है। सुमेर मामा बुआ का मुँहबोला भाई है। बुआ की हर मुसीबत में वही उसके साथ खड़ा होता है। वह इंसानियत में बुआ के स्वार्थी और जाति के दम्भ में डूबे रिश्तेदारों से बहुत बड़ा है।

'मर्ज़' में एक रूपक कथा है जो बताती है कि आज़ादी के पहले का मर्ज़ आज भी क़ायम है। राजतंत्र ने महज़ प्रजातंत्र का मुखौटा पहन लिया है। पूर्व के राजा-महाराजा के पुत्र-पुत्रियाँ फिर से राज करने के लिए आ गए हैं। कोई नई इमारत नहीं बनी है। वही इमारत खंडहर बन गई है। उससे निरन्तर धूल उड़ रही है जिसके कारण जनता छींक रही है। कहानी का एक संवाद है- 'सोचो भाई, कब

तक चिपकती रहेगी खंडहर में मिट्टी। पहले ये कोट में बैठकर अत्याचार करते थे अब दिल्ली में बैठकर अत्याचार करते हैं। कहाँ मिली हमें स्वतंत्रता? बस रूप बदला गया है इनके शासन का। इनकी क्रूरता से खंडहर बढ़ेंगे गाँव में।'

'जागते रहो' किसानों की आत्महत्या के सवाल की बख़ूबी पड़ताल करती है। उन परिस्थियों को सूक्ष्मता से चित्रित करती है जिसके कारण एक किसान आत्महत्या करने पर विवश हो जाता है। साथ ही लेखिका अपने तईं एक समाधान भी प्रस्तुत करती है।

'खारा पानी' कहानी ने संग्रह को शीर्षक दिया है। यह संग्रह की ख़ास कहानी है। गाँव से एक लड़का नौकरी करने दूर शहर में आता है। उसके पिता, जब वह पाँचवीं कक्षा में था तभी गुज़र गए थे। बाद में उसे माँ के साथ मज़दूरी करनी पड़ती है। आगे वह पढ़ नहीं पाता। वह गाँव के एक अन्य लड़के मगरी के साथ आया है। मगरी पहले से ही उस शहर में रसोई का काम करता है। मगरी के साथ लड़के को उसकी माँ ने इस आस से भेजा है कि वह भी शहर में नौकर लगकर किसी क़ाबिल बन जाए। उसे आशंका थी कि गाँव में वह बुरी संगत में पड़कर बिगड़ जाएगा। लड़का रेलगाड़ी में पहली बार बैठा है। वह छठी में दो बार फ़ेल है। शहर में मगरी के आश्वासन पर मालकिन ने उसे घरेलू काम पर रख लिया। उसका गाँव खारे पानी से भरा हुआ है। मीठा पानी उन्हें दो कोस दूर से लाना पड़ता है। बिल्कुल सँभल-सँभल कर चलना पड़ता है। बूँद भर पानी भी अगर घड़े से छलक जाए तो कई दिनों तक अफ़सोस होता है। सुबह से लेकर रात सोने तक बूँद-बूँद पानी की चिंता लगी रहती है। शहर में मालकिन के बड़े-से घर में मीठे पानी की इफ़रात देख वह आश्चर्य चकित हो जाता है। वह पानी की बर्बादी को रोकना चाहता है। उसकी समझ से किया गया हर सही काम मालकिन की नज़र में ग़लत हो जाता है। मालकिन नाराज़ हो जाती है। बरतन माँजते हुए लड़के की आँखों से खारा पानी निकलने लगता है। उसे लगता है कि उसके लिए फिर खारे पानी के दिन आ गए हैं। दरसल यह दो दुनियाओं की कहानी है जो एक दूसरे से सर्वथा भिन्न है। एक ग़रीबों की दुनिया और दूसरी अमीरों की दुनिया। अमीरों की दुनिया में मीठे पानी की इफ़रात है और ग़रीबों की दुनिया खारे पानी से भरी है।

'जंगल' एक ऐसे लड़के की कहानी है जो एक होटल में काम करता है। होटल के नज़दीक जंगल है। वह जंगल के शेर, चीता, भालू को देखने के लिए लालायित है। एक बार होटल में आने वाले शिकारियों के साथ वह उनके साथ जंगल में चला जाता है। ख़तरे की स्थिति में वे शहरी शिकारी उसे हिंस्र जंगली जानवरों के बीच छोड़कर भाग जाते हैं। जंगली लोग लड़के की देखभाल करते हैं और सुरक्षित शहर के लिए छोड़ जाते हैं। इस कहानी में शिकारियों की संवेदनहीनता और जंगली लोगों की संवेदनशीलता रेखांकित होती है।

'उलझते धागे' कहानी तलछट के वंचित वर्ग की कहानी है जो रेल यात्रा के दौरान देखे गए दृश्यों पर आधारित है। कहानी में नैरेटर इस सवाल से जूझती रहती है कि बच्चों को भीख देना सही या ग़लत। उन्हें भीख देना उनकी अकर्मण्यता को बढ़ावा देना तो नहीं।

'खुद्दार' कहानी यह स्थापित करने में कामयाब होती है कि चीज़ों को ज़बरदस्ती उठा लेना ख़रीदने की श्रेणी में नहीं लूटने की श्रेणी में आता है, और कोई खुद्दार व्यक्ति लूटी हुई वस्तु की क़ीमत पाकर ख़ुश नहीं होता। गाँव का एक ग़रीब धनी नैरेटर और उसके पति को एक झटका देता है कि हर चीज़ को ख़रीदा नहीं जा सकता।

संग्रह में सामाजिक सरोकारों से जुड़ी कुल जमा बारह कहानियाँ हैं। ये कहानियाँ जीवन के खारेपन की कहानियाँ हैं। आधी कहानियाँ स्त्री-शोषण पर केंद्रित हैं और आधी कहानियाँ समाज के हाशिए पर जीने वाले घरेलू नौकरों, ग़रीबों, भिखारियों के जीवन और देश के वर्तमान हालातों को उकेरती हैं। किताब का आवरण आकर्षक और अर्थपूर्ण है। दाम भी वाजिब है। आशा है पाठक इसे अवश्य पसंद करेंगे।

000

नई पुस्तक

ओ मारिया पिताशे

(यात्रा संस्मरण)

लेखक : प्रतिभा अधिकारी

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

यात्रा संस्मरण को लेकर पाठक हमेशा प्रतीक्षा में रहते हैं, कि कब कोई रोचक यात्रा संस्मरण पढ़ने को मिले। उस पर यदि यात्रा संस्मरण गोवा जैसे अत्यंत प्रसिद्ध पर्यटन स्थल का हो तो यह पाठक के लिए सोने पर सुहागे वाली बात हो जाती है। लेखक प्रतिभा अधिकारी का गोवा यात्रा का यह रोचक यात्रा संस्मरण शिवना प्रकाशन से हाल में ही प्रकाशित हो कर आया है। इस यात्रा संस्मरण की भूमिका में प्रतिभा अधिकारी लिखती हैं- बचपन में भूगोल की क़िताबों में पहले - पहल इन नामों की संज्ञा से अपना परिचय हुआ था - गोवा, दमन, दीव तब इन नामों को परीक्षाओं के लिए याद रखते थे, खोज, क्षेत्रफल आदि-आदि। तब सपने में भी नहीं सोचा था कि वास्को डी गामा की खोजी धरती भारत यानि गोवा को कभी देखने जाऊँगी। मुझे गहने बैंक बैलेंस से जरा भी मोह नहीं ! मैं सोचती हूँ इस संसार से चिर- विदा लेने से पहले इस प्यारी दुनिया को अपने नेत्रों में भर लूँ, अकेले प्रकृति को निहारूँ और स्वयं के होने का कारण खोजूँ।

000

पुस्तक समीक्षा

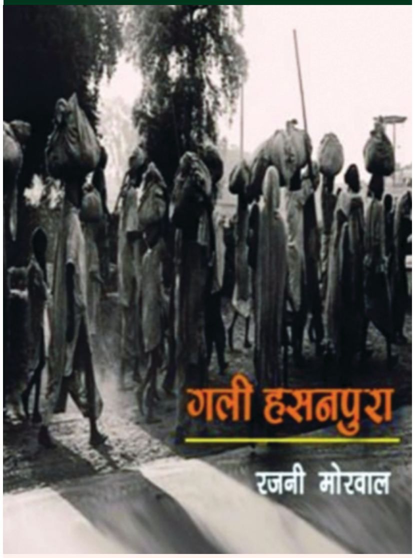

गली हसनपुरा
(उपन्यास)

समीक्षक : हरिराम मीणा

लेखक : रजनी मोरवाल

प्रकाशक : आधार प्रकाशन, पंचकूला

हरिराम मीणा
31, शिवशक्तिनगर
किंग्स रोड, अजमेर हाई-वे
जयपुर-302019
मोबाइल- 94141 24101
ईमेल- hrmbms@yahoo.co.in

रजनी मोरवाल का पहला उपन्यास हाल ही छपकर आया है, जिसका शीर्षक है 'गली हसनपुरा'। उनका पहला कहानी संकलन 'कुछ तो बाकी है' सन 2016 में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह की पर्याप्त चर्चा हुई और तभी से रजनी मोरवाल का नाम हिंदी साहित्य में उभरकर सामने आया। तत्पश्चात उनके दो कहानी संग्रह और प्रकाशित हुए, नमकसार और हवाओं से आगे। इसी दौरान उनकी अनेक कहानियाँ हंस, पाखी, वागर्थ, परिकथा, समकालीन भारतीय साहित्य जैसी पत्रिकाओं एवं राजस्थान पत्रिका व जनसत्ता जैसे दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित होती रहीं।

इस उपन्यास के केंद्र में कुंजड़ा समुदाय है, जो हिंदू व मुस्लिम दोनों तबकों में मिलता है। इस समुदाय का मुख्य धंधा गली-मोहल्लों, सड़क किनारे, फुटपाथों अथवा यहाँ वहाँ मुकर्रर स्थलों पर सब्ज़ी व फल बेचना है। कुछ लोग कबाड़ी का काम भी करते दिखाई दे सकते हैं। कथा की नायिका मीरकी नामक स्त्री है जो किशोरी से प्रौढ़ा तक की भूमिका में आती है। अन्य मुख्य पात्रों में स्त्री स्वर ही प्रमुखता के साथ उभरता हुआ दिखाई देता है। फिर भी कथा का विस्तार आगे तक होता चला जाता है जिसमें भारतीय समाज की वर्ण-व्यवस्था से पैदा होने वाली जाति-प्रणाली और पितृसत्तात्मक परंपरा का कुरूप चेहरा उघड़ता जाता है। इन दोनों प्रवृत्तियों ने भारतीय समाज व परिवार दोनों को बुरी तरह से प्रभावित किया है। इसी का दुष्परिणाम है कि समाज की क़रीब आधी मानव जाति स्त्री के रूप में पिछड़ी रह गई। उसी तरह जो वंचित मानवता है, उसे भी मनुष्य होने के मौलिक व प्राकृतिक अधिकार नहीं दिए गए। स्त्री सहित वंचित समाज में आज का दलित, आदिवासी, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक और घुमंतू तबकों का ऐसा बहुजन समाज है, मताधिकार की दृष्टि से बहुसंख्यक होते हुए भी लोकतंत्र में उसे पर्याप्त सम्मान व सुविधाएँ नहीं मिल रहीं। इसके विपरीत सवर्णों का एक छोटा सा वर्ग इस बहुजन पर हावी रहा है। राज, अर्थ, धर्म और ज्ञान की सत्ता पर हज़ारों सालों से इसी वर्ग का वर्चस्व व्यवस्था पर चला आ रहा है। विडंबना तो यह रही कि सवर्ण वर्ग की महिलाओं को भी उसका अपेक्षित सम्मान नहीं मिल सका। ब्राह्मण महिला को मठ का पिछवाड़ा, क्षत्रिय नारी को महल की ड्योढ़ी और वणिक स्त्री को हवेली के झरोखा से बाहर नहीं निकलने दिया। भारत की आज़ादी के बाद नए संविधान में वंचित व पिछड़े वर्गों के लिए विशेष व्यवस्था की गई। नारी शक्ति के सम्मान व उसके अधिकारों के लिए भी प्रावधान रखे गए और संविधान की भावना के अनुरूप कालांतर में भी वैधानिक, प्रशासनिक एवं नीतिगत निर्णय भी इस मानवता की बहतरी के लिए निर्मित होते गए, किंतु देश का यह दुर्भाग्य रहा कि इन सब का क्रियान्वयन ईमानदारी और सही ढंग से नहीं किया गया। यही एक बड़ा कारण रहा कि समाज की परंपरागत

यथास्थिति बनी रही। आज दलित, आदिवासी, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यकों और नारी पर अत्याचार कम नहीं हुए हैं, उल्टे कई मायनों और इलाकों में इन में वृद्धि पाई गई है। मीरकी के वृद्ध माँ-बाप, उसकी अपाहिज बहन, उसकी धर्मपुत्री सुरभि, उसके भाई-भाभी और इस समुदाय के अन्य लोग अपनी जड़ों से उखड़ी और विस्थापित हुई मानवता का प्रतिनिधित्व करते हैं। जीवनयापन के लिए भटकाव एवं दूसरे लोगों की दुत्कार-फटकार उसे सहन करनी पड़ती है। ये लोग अपमान का घूँट पीकर भी किसी तरह ज़िंदगी की गाड़ी को घसीटते हैं। फिर भी विकसित होते जा रहे लोगों को ये बर्दाश्त नहीं होते। विकास के नाम पर किसी न किसी बहाने इन्हें बेदखल करने की साजिश रची जाती रही है।

कुंजड़ों के बाड़ा की हालत ख़राब है। वहीं के मतदाताओं द्वारा निर्वाचित पार्षद भी इस समुदाय के लिए कोई राहत नहीं दे पाती। यह हमारी राजनीतिक व प्रशासनिक व्यवस्था का चरित्र है। एक वार्तालाप यहाँ देखने लायक है।

'पिछले गुरुवार तो पार्षद ही आई थी ना बापू! बाड़े का मुआयना करके गई है, बाड़े की तस्वीर भी खींची थी उसने अपने मोबाइल पर। शायद अब की बार इधर किस्मत खोल दे उसकी डइयां।' मीरकी अपनी आँखें फैलाती हुई बोली।

'हुम्म... पूरी पांच्छ हज्जार माँगे करम फूटी, लुगाई होके भी गरीबों पे दया नी आवे उसको।' बापू कोने में बैठी माँ की सहमति चाहते थे। माँ जो सारा क़िस्सा ख़ामोशी से सुन रही थी पर बापू द्वारा कहे गए लुगाई शब्द पे उनकी तंद्रा भंग हुई थी शायद।

'अरे...!सरकारी अफ़िसरों का क्या दान धर्म? क्या लुगाई और क्या मरद, वे तो बस्स...सब की एक ही जात होवे और वो है कड़क-कड़क नोट, सब रकम गिनना जाने हैं।' माँ, लुगाई शब्द का औचित्य साबित करने लगी थी।' (पृष्ठ सं-26)

नानी- दादियों द्वारा सुनाई जाती रही पारंपरिक कहानियों का इस कृति में बड़ा ख़ूबसूरत उपयोग किया गया है। इनमें से एक कहानी 'पानी की तलाश' है, जिसमें एक स्त्री पेयजल की तलाश में तपती मरुभूमि की दूरियाँ तय करती है, लेकिन फिर भी उसे पानी नसीब नहीं होता और नसीब भी होता है तो दुर्भाग्य द्वारा छीन लिया जाता है, चाहे वह चील के तेज़ झपट्टा के रूप में ही क्यों नहीं आता। चील का यह तेज़ झपट्टा फूलां नामक स्त्री के सर पर धरी जलभरी गगरी को नीचे गिराकर फोड़ देता है। परोक्ष रूप से चील का यह झपट्टा फूलां के दुर्भाग्य का प्रतीक है। इस लघु उपकथा की नायिका फूलां का यह वक्तव्य गौर करने लायक है-'लड़कियों का मायका जब छूटे, तो ससुराल उन पर टूटे, एक घर दे तो दूसरा सिर्फ वर दे।' (पृष्ठ-49-50) अर्थात स्त्री का पीहर उसका वह घर है जिसमें उसके माँ-बाप व भाई-बहन होते हैं और ससुराल में उसके लिए केवल पति से उम्मीद की जा सकती है, अन्यथा ससुराल वाले अन्य परिजन उसे पराई सी मानकर चलते हैं।

इतिहास में धीरे-धीरे विकसित होती गई सांप्रदायिकता आज हमारे देश की एक भयावह समस्या बन गई है। जब भी भारतीय समाज की बात की जाती है तो गाहे-ब-गाहे सांप्रदायिकता इन बातों में घुसपैठ करती हुई दिखाई देती है। इस कथा में भी यह समस्या उभर कर सामने आती है। कुंजड़ा समुदाय में हिंदू और मुस्लिम दोनों हैं। दोनों के बीच चलने वाली खटपट कई बार विकराल रूप धारण करने की संभावनाएँ बन जाती है। सत्तू और फत्तू की लुगाइयाँ लोधियों की औरतों से भिड जाती हैं, एक दूसरे को पूरी तरह नष्ट कर देने तक के श्राप देने की हद तक।

एक रात जब मीरकी और सतुनी सोने को होती हैं तो उनकी माँ एक और प्रचलित एक कहानी सुनाती है जो फ्यावरी पर बैठकर बांझड़ी जैसी दुष्ट स्त्री के रात में निकलने की किंवदंती है। वह रहस्यमयी बाँझ स्त्री मंत्र-तंत्र व जादू-टोना करती है। श्मशान से नवजात शिशुओं के शवों को निकालकर उनकी आत्मा को अपने कब्ज़ा में कर कच्चे कलवे सेती है। फ्यावरी भी एक काल्पनिक जंतु है जिसके मुख से रात्रि के समय आग निकला करती है। यह एक ऐसी कहानी है जो लड़कियों को अँधेरा होने के बाद घर से बाहर

नई पुस्तक

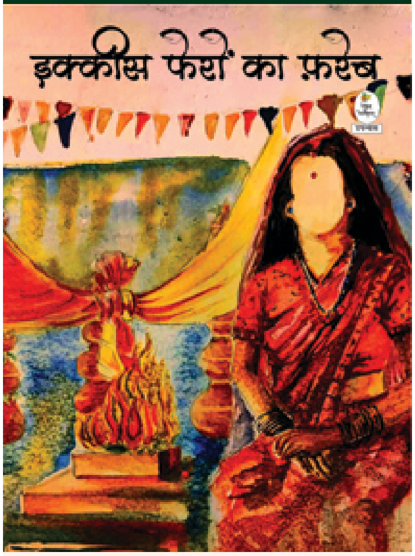

इक्कीस फेरों का फ़रेब

(उपन्यास)

लेखक : सुनीता पाठक

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

इक्कीस फेरों का फ़रेब नाम का यह उपन्यास शिवना प्रकाशन से अभी प्रकाशित होकर आया है। लेखक सुनीता पाठक ने इस उपन्यास में कई परतें खोलने का प्रयास किया है। जगदीश तोमर, पूर्व निदेशक प्रेमचंद सृजन पीठ इस उपन्यास के बारे में कहते हैं- उपन्यास की नायिका स्वाभिमानी अवश्य है, उसकी संघर्ष क्षमता भी अमोघ है, उसमें अपना प्रेम नीड़ बुनने-सजाने की कामना भी है, किन्तु वह न तो अनियंत्रित-अमर्यादित स्वाधीनता की आकांक्षी है और न ही उसमें किसी आवेग के वशीभूत हो एकाएक क्रांतिकारी होने का कोई संस्कार ही है। हाँ, उसे सतत धैर्यवान एवं सामंजस्यपूर्ण रहकर ऐसे प्रेम की आकांक्षा अवश्य है जो आत्मीय ऊष्मा से संजीवित हो और जिसमें अधिकाधिक देने की चाहना हो। सुनीता पाठक का यह उपन्यास 'नारी विमर्श' को उसकी आम अवधारणा से भिन्न एक नई दिशा में मोड़ता प्रतीत होता है।

000

निकलने पर पाबंदी की सीख देती है। फ्यावरी जानवर और उसके ऊपर सवारी करने वाली बाँझ व दुष्ट स्त्री समाज कंटकों का प्रतीक है, जो खासकर किशोरियों व युवतियों के लिए खतरा बनते रहे हैं। ऐसे तत्वों के रूप में समाज में झाला चौधरी जैसे खलनायक मौजूद हैं। झाला चौधरी इंसान के रूप में एक ख़तरनाक प्राणी है और उसी देर शाम वह सतुनी को अँधेरी गली में पकड़ कर उसके साथ दुष्कर्म कर देता है। सतुनी गर्भवती हो जाती है।

यहाँ एक प्रेम कहानी भी समानांतर चलती है, जिसके बीज मीरकी और बनवारी की नज़दीकियों की ज़मीन पर पल्लवित होते हैं, किंतु पुष्पित होने से पहले ही अपनी दिशा परिवर्तित कर लेते हैं। दोनों के मध्य एक ऐसा अलिखित समझौता हो जाता है जिसके तहत बनवारी मीरकी से शादी करने की बजाय उसकी लकवाग्रस्त बहन सतुनी से शादी करने का निर्णय ले लेता है। प्यार का यह एक अनोखा उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किया गया है। मीरकी नामक अपनी प्रेमिका को पारिवारिक दायित्व से मुक्त करने के लिए बनवारी अपनी प्रीत का त्याग करते हुए बलात्कार की शिकार व गर्भवती हो जाने के कटु सत्य की जानकारी के बावजूद मीरकी की बहन सतुनी से ब्याह कर लेता है।

विस्थापित लोगों की पुनर्वास की समस्या एक विकट समस्या रही है। ये लोग कभी फुटपाथ पर तो कभी शहर के हाशिए की ख़ाली ज़मीन पर अपनी झुग्गी-झोपड़ियाँ खड़ा कर देते हैं, लेकिन भू माफिया सरकार से मिलकर उस जगह को हथियाना चाहते हैं। किसी बहाने उन्हें वहाँ से बेदख़ल करने की योजना बना ली जाती है। औपचारिकतावश उनसे ज़मीन के कागज़ात माँगे जाते हैं, जबकि प्रशासन को पता है कि उनके पास इस तरह की कोई काग़ज़ नहीं है। यह प्रसंग भी मीरकी के पिता के माध्यम से इस पुस्तक में बख़ूबी उजागर हुआ है।

पुरुष वर्चस्व या पितृसत्तात्मक परिवार का एक नमूना यहाँ देखिये-'अब वही सूरज (मीरकी का भाई) इस पितृसत्तात्मक समाज की ठेकेदारी करने उसके मीर की समक्ष तन कर खड़े होने की कोशिश कर रहा था।' (पृष्ठ सं-124) ।.....मीरकी का मन वितृष्णा से भर गया था... वह सुरभि का हाथ पकड़कर सड़क के बीचों-बीच चली आई थी और अपने-आप को चुनौती देती हुई सी बोली थी-

'ऊँह, ये कागज़ के आदमी क्या जानेंगे सदियों से पीड़ा भोगती हाड़-मांस से बनी हम औरतों की जद्दोजहद को? धमकियाँ न चली तो इस विभीषण (सूरज) के जरिए षड्यंत्र करके मुझे झुकाने की कोशिश में लगे हैं?' (पृष्ठ-125)

सूरज को मीरकी के खिलाफ़ उकसाने वाला झाला चौधरी कथा का खलनायक है। वह नारी चेतना के खिलाफ़ है और कुंजड़ा जैसे दलित व शोषित समुदाय के उत्थान में बाधक बनता है। यह वही झाला है जो मीरकी की अपाहिज बहन सतुनी के साथ बलात्कार करता है जिससे वह गर्भवती हो जाती है। उसका जीवन बर्बादी के कगार पर पहुँच जाता है, किंतु समय पर मीरकी का प्रेमी बनवारी उसे सँभाल लेता है और उससे शादी कर लेता है। कृति की नायिका मीरकी एक स्त्री है, जो किशोरी से युवा और फिर प्रौढ़ावस्था तक की यात्रा पूरी करने तक नारी मुक्ति के लिए वह समर्पित है। उस जैसी एक कमज़ोर स्त्री हालात के थपेड़े खाकर मज़बूत होती चली जाती है। अपनी स्थानिकता में और अपने समुदाय की सीमाओं में वह जनप्रतिनिधि के रूप में निर्वाचित होती है।

जब मैं रजनी मोरवाल के इस उपन्यास के अंतिम पन्नों को पढ़ रहा था तो मुझे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे इस कथा का सुखद अंत होगा। मीरकी वार्ड मेंबर के रूप में अपनी भूमिका निभाते हुए कुंजड़ा समुदाय और स्त्री दोनों की मुक्ति का माध्यम बनेगी। लगता है अभी ऐसा वक्त नहीं आया है। भारतीय समाज एक ऐसी संक्रांतिकालीन दशा से गुज़र रहा है, जिसमें दलितों और नारी की मुक्ति दूर है। यही इस उपन्यास के अंत में सिद्ध होता है, जब इस कथा की नायिका मीरकी की निर्मम हत्या खलनायक झाला चौधरी के षड्यंत्र से मीरकी का सगा भाई सूरज कर देता है।

000

नई पुस्तक

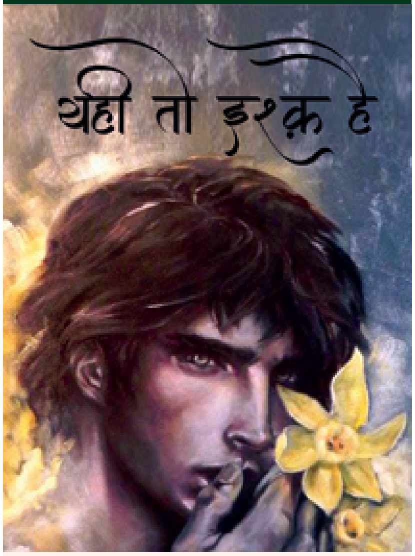

यही तो इश्क़ है

(ग़ज़ल संग्रह)

लेखक : पंकज सुबीर

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

पंकज सुबीर को वैसे कहानीकार के रूप में जाना जाता है, लेकिन हर लेखक के बहुत से पक्ष होते हैं, कुछ सामने आते हैं और कुछ सामने नहीं आते हैं। पंकज सुबीर कहानीकार होने के साथ-साथ ग़ज़लकार भी हैं। उनका एक ग़ज़ल संग्रह पूर्व में भी आ चुका है, तथा यह नया ग़ज़ल संग्रह शिवना प्रकाशन से हाल में ही प्रकाशित होकर आया है। इस संग्रह में सौ से भी अधिक ग़ज़लें संकलित की गई हैं। इन ग़ज़लों में लगभग सभी विषयों पर ग़ज़लें हैं, जहाँ एक तरफ़ शुद्ध प्रेम की ग़ज़लें हैं, तो वहीं व्यवस्था को कटघरे में खड़ी करने वाली ग़ज़लें भी हैं। इन ग़ज़लों में पंकज सुबीर ने ग़ज़लों की पारम्परिक तकनीक का उपयोग न करते हुए बिलकुल नए प्रयोग किए हैं। यह ग़ज़लें आम बोलचाल की भाषा में कही गई ग़ज़लें हैं। इन ग़ज़लों को पढ़ते हुए पाठक को शब्दकोश खोलने की ज़रूरत नहीं पड़ती है। बल्कि कई ग़ज़लों में तो लोक से भी शब्द उठाए गए हैं। यह ग़ज़ल संग्रह हिन्दी ग़ज़ल की परम्परा की ग़ज़लों को संकलित किए हुए है।

000

पुस्तक समीक्षा

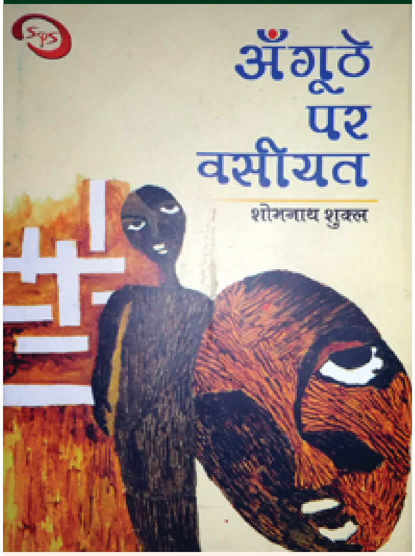

अंगूठे पर वसीयत

(उपन्यास)

समीक्षक : रमेश शर्मा

लेखक : शोभनाथ शुक्ल

प्रकाशक : साक्षी प्रकाशन संस्थान सुल्तानपुर

ग्रामीण समाज का ज़िक्र आते ही हमारे मनो-मस्तिष्क में रिश्तों की सहजता और लोगों का भोलापन सहज रूप से घर करने लगता है। यह कुछ हद तक सच के क़रीब भी है पर शहरीकरण और बाज़ार की घुसपैठ ने इस समाज में भी समय के साथ विकृतियाँ उत्पन्न की हैं। कथाकार शोभनाथ शुक्ल जी का नवीनतम उपन्यास 'अँगूठे पर वसीयत' ग्रामीण समाज के भीतर पसरती जा रहीं अनपेक्षित विकृतियों के अनेकानेक रंगों को घटनाओं के माध्यम से चलचित्र की भाँति रखता चला जाता है। ग्रामीण समाज में राजनीतिक और सामाजिक स्तर पर घटित होने वाली घटनाओं का विवरण कुछ इस तरह सिलसिलेवार मिलता है कि उपन्यास के साथ हम एक जिज्ञासु पाठक की हैसियत से जुड़ते हैं और फिर आगे बढ़ने लगते हैं। उपन्यास का केन्द्रीय पात्र 'रामबरन ग़रीब' समाज के उस आदमी का प्रतिनिधित्व करता है जो समाज में फैली विसंगतियों को लेकर चिंतातुर है। सामाजिक वर्ग भेद जैसी विसंगतियों से बाहर निकल समाज की बेहतरी जैसी सोच रखना, यूँ तो मानवीय चेतना से संपन्न व्यक्ति का गुण है जिसकी दुर्लभता से आज का समाज चिंतन के स्तर पर लगातार विपन्न होता जा रहा है ऐसे में 'रामबरन ग़रीब' जैसा चेतना संपन्न और चिन्तनशील पात्र पाठक के मन के भीतर जिज्ञासा की गति को बनाए रखने में बड़ी अहम् भूमिका निभाता है। इस उपन्यास को पढ़ते हुए महसूस होता है कि भाषा शिल्प और साहित्यिक लय की विरलता, कथ्य की एकरेखीय गति के बावजूद घटना प्रधान प्रसंगों की रोचकता के सहारे ही यह उपन्यास पाठक के मन के भीतर पाठकीय रुचि को अन्त तक जीवित किये रहता है।

ग्रामीण समाज में कुछ ऐसे पात्रों की उपस्थिति से भी यह उपन्यास हमें परिचित कराता है जिनकी करतूतों से ग्रामीण समाज की वह छवि जो हमारे मन में सदियों से बसी हुई है, उस छवि को आघात पहुँचता है। नोहरी चाचा नामक पात्र इनमें से ही एक पात्र है, जो वासना में डूबा हुआ है और अपने स्वयं की भतीजी को हवस का शिकार बनाने पर आमादा है। कई बार सच कल्पना की तरह महसूस होता है और कोई कल्पना सच की तरह लग सकता है। नोहरी चाचा जैसे पात्रों से जुड़े प्रसंग पाठकों के मन में कुछ इसी तरह के अनुभविक प्रश्न उत्पन्न कर सकते हैं कि कोई व्यक्ति अपनी बेटी समान भतीजी के साथ भी यह सब कुछ कैसे कर सकता है ? दरअसल यह उपन्यास ग्रामीण समाज में आये विचलन की कहानी को साफगोई से रख देने के लेखकीय दुस्साहस का एक दस्तावेज़ जैसा भी कुछ है जिसे पढ़ते-पढ़ते हम महसूस करने लगते हैं। इसी क्रम में चौधराइन भी एक ऐसी महिला पात्र है जो देह की भूख मिटाने को सारी वर्जनाएँ तोड़ती प्रतीत होती है। किशोरों के संग देह की भूख मिटाने की घटनाएँ ग्रामीण समाज के उसी विचलन की कथा सुनाती हैं जो अमूमन हमारे मन में कहीं नहीं है। लेखक ग्रामीण समाज की वर्तमान छवि को उसके सही रूप में इस उपन्यास के माध्यम से दिखाने की कोशिश करते हैं जो कि बहुत हद तक लोक मर्यादा के भय से ढँका-छुपा होता है। शहरों में जिस खुलेपन को हम महसूस करते हैं उस खुलेपन को आज भी ग्रामीण समाज में अस्वीकृति मिलती है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि ग्रामीण समाज बुराईयों से अछूता है। ग्रामीण समाज में भी वह सारी बुराईयाँ देर सवेर घर कर चुकी हैं जिसकी कल्पना वहाँ की सहजता को लेकर हम नहीं कर पाते। यह उपन्यास बाज़ार और राजनीति की घुसपैठ के चलते ग्रामीण समाज में पसरती जा रही तमाम बुराइयों की सूक्ष्म पड़ताल करता है। इसे हम लोक को उसके विचलन से आगाह करने के अर्थ में भी ले सकते हैं जो कि किसी कृति का बेहतर उद्देश्य हो सकता है।

रमेश शर्मा,
92 श्रीकुंज, बोईरदादर, रायगढ़
(छत्तीसगढ़)
मोबाइल- 9752685148, 7722975017
ईमेल- rameshbaba.2010@gmail.com

परधानिन बुआ जो कि एक विधवा स्त्री है और गाँव की सरपंच है उसके जीवन में आए उतार-चढाओं के माध्यम से भी ग्रामीण समाज में स्त्री की स्थिति को जाना समझा जा सकता है। चौबे नामक पुरुष के साथ उसके प्रेम और दैहिक संबंधों की कहानी, सरपंच चुनाव पूर्व से शुरू होकर सरपंच बनने के बाद भी किस तरह पितृ सत्तात्मक समाज के तंग रास्तों से होकर गुज़रने लगती है उसका एक चित्रण इस उपन्यास में मिलता है। पुरुष के लिए स्त्री देह आकर्षक ज़रूर है पर स्त्री को उसकी सम्पूर्णता में स्वीकार करने के लिए चौबे जैसे कायर पुरुष के पसीने छूटने लगते हैं। परधानिन बुआ जैसी स्त्री के संघर्ष के माध्यम से ग्रामीण समाज में एक नई चेतना के संचार का स्थापन संभव हो सकता है, उस संभावना को यह उपन्यास कुछ हद तक जन्म देने का एक लिखित दस्तावेज़ बन सकता है ऐसा हम कह सकते हैं।

आज बाज़ार की घुसपैठ ग्रामीण समाज में भी सघन हो चली है। बाज़ार जहाँ साधन समपन्न लोगों को प्रभावित करता है वहीं अभावग्रस्त लोगों को भी अपनी ओर आकर्षित करता है। यह उपन्यास ग्रामीण जीवन के उन जगहों की भी सैर कराता है जहाँ अभावग्रस्त लोग बुनियादी ज़रूरतों के साथ साथ बाज़ारू ज़रूरतों के आकर्षण में विकृतियों के शिकार होते चले जाते हैं।

इन तमाम पात्रों की कथाओं के संग चलते हुए यह उपन्यास अपने केंद्रीय पात्र रामबरन गरीब की कथा भी सुनाता है। यह कथा मनुष्य जीवन में आए भीषण संकट और रिश्तों की विकृतियों को हमारे सामने रखती है।

रामबरन ग़रीब जो एक चेतना संपन्न सीधा-साधा ग्रामीण किसान है, जो समाज की सामूहिक बेहतरी का सपना देखता है और जिस में राजनीतिक चेतना के साथ साथ अन्याय का विरोध करने का भी एक मानव सुलभ गुण मौजूद है वही रामबदन अपने बेटे बलराम की चालबाज़ियों का शिकार होता है। बलराम रामबदन ग़रीब का इकलौता बेटा है और शहर में रहकर सरकारी अफ़सर है। माँ-बाप की उपेक्षा करना उसकी आदत में शामिल है। वह कभी कभार माँ-बाप की बीमारी के बहाने गाँव आता रहता है और इस प्रतीक्षा में रहता है कि कब पिता की मृत्यु हो तो सारी संपत्ति उसके हाथ लगे। एक बार जब पिता रामबरन ग़रीब हस्पताल में मरणासन्न अवस्था में रहते हैं और उनकी मृत्यु जल्दी नहीं हो रही होती है तो झुँझलाकर उनसे वह जबरदस्ती वसीयत पर अँगूठे का निशान लगवाने की कोशिश करता है। बेटे के इस अमर्यादित और क्रूरता पूर्ण व्यवहार पर उसकी माँ झुँझला उठती है। पति के इस अपमान पर वह बेटे पर क्रोधित होकर चीख पड़ती है। पत्नी के इस दारुण चित्कार से कोमा में पड़े रामबरन ग़रीब की देह भी जैसे जीवंत हो उठती है। इस घटना का असर यह होता है कि हफ्तों से कोमा में पड़े रामबरन ग़रीब के बदन में हलचल होती है। वे उठ बैठते हैं और चीखते हुए वसीयत छीन कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर देते हैं। वे उन काग़ज़ के टुकड़ों पर थूकते हुए अपने इकलौते बेटे से कहते हैं -'जा आज से तू मेरे लिए मर गया। मैं तेरी इच्छा पूर्ति के लिए नहीं मरूँगा तो नहीं मरूँगा।' यह इस उपन्यास का सबसे विहंगम और द्रवित कर देने वाला दृश्य है जो समाज में दिनों दिन सघन रूप लेने लगा है।

पत्नी जसुमति के सहारे अपने कदमों पर चलते रामबरन ग़रीब भाई का अस्पताल से बाहर निकलना सचमुच हैरत में डालने वाला दृश्य है जो हमें भीतर से झकझोर देता है। हमारे आसपास फैले ग्रामीण पात्रों पर केंद्रित यह उपन्यास अपनी रोचक क़िस्सागोई के कारण पठनीय बन पड़ा है।

यद्यपि इस उपन्यास को पढ़ते हुए किसी साहित्यिक उपन्यास में समाहित विविध कलात्मक रसों का सम्पूर्ण आनंद हमें नहीं मिल पाता, इसके बावजूद हम कह सकते हैं कि लेखक ने विभिन्न घटनाओं को अपने स्तर पर जोड़कर उसे कथा का विस्तृत रूप देने का जो अथक प्रयास किया है, वह उल्लेखनीय है। इस उपन्यास को पढ़ते हुए, पाठक ग्रामीण समाज में घटित हो रहे विभिन्न रूपाकारों का, घटनाओं का आस्वादन ले सकते हैं।

000

नई पुस्तक

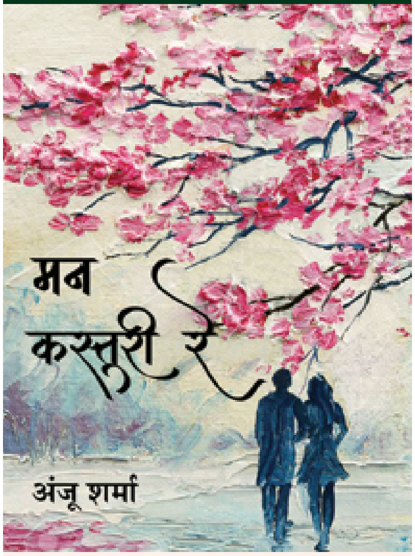

मन कस्तूरी रे

(उपन्यास)

लेखक : अंजू शर्मा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

हिन्दी की नई पीढ़ी के लेखकों में अंजू शर्मा का नाम अब किसी पहचान का मोहताज नहीं है। अंजू शर्मा ने अपनी कहानियों और उपन्यासों से अपनी पहचान स्थापित कर ली है। शिवना प्रकाशन से अंजू शर्मा का उपन्यास 'मन कस्तूरी रे' अभी हाल ही में प्रकाशित होकर आया है। यह उपन्यास युवा पीढ़ी की प्रेम को लेकर जो दृष्टि है उसके इर्द-गिर्द रचा गया उपन्यास है। यह प्रेम के बिलकुल नए चेहरे को पाठकों के सामने लाता है। इस उपन्यास को पढ़ते हुए महसूस होता है कि हिन्दी की नई पीढ़ी के रचनाकार अपने समय पर कितनी पैनी नज़र रखे हुए हैं। यह उपन्यास युवाओं की कहानी कहता है तथा उन्हीं की भाषा में कहता है। इस उपन्यास का पढ़ते हुए आप युवाओं की उस दुनिया में पहुँच जाते हैं, जहाँ प्रेम को लेकर नई परिभाषाएँ प्रचलन में आ चुकी हैं। अंजू शर्मा के पास एक अलग तरह की भाषा है, जो पाठक को अपने साथ जोड़कर प्रवाह में बहा ले जाती है। यह उपन्यास अपनी तरह का बिलकुल अलग उपन्यास है।

000

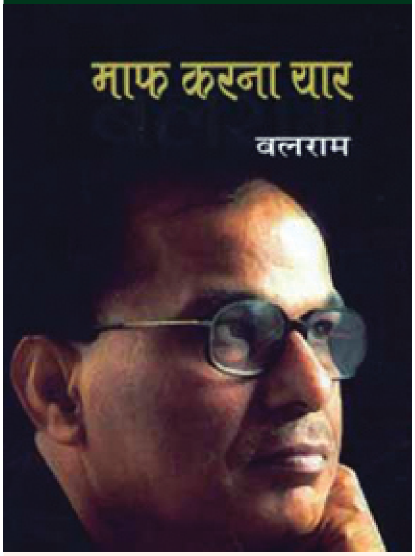

माफ़ करना यार

(संस्मरण)

समीक्षक : राकेश शर्मा

लेखक : बलराम

प्रकाशक : भावना प्रकाशन, दिल्ली

राकेश शर्मा
'वीणा' मासिक, एम-2
वीणा नगर,
इंदौर-452010
(म.प्र.)

बलराम के लेखन के कौशल से हिन्दी जगत् भली भाँति परिचित है। एक कहानीकार, आलोचक और पत्रकार के रूप में उन्होंने हिन्दी भाषा और साहित्य की बहुविध सेवा की है। जब कोई पत्रकार साहित्य रचता है, तब भाषा कैसे नर्तन करती है और शब्द किस सहज गरिमा के साथ पाठक के आगे आ खड़ा होता है, यह देखना हो तो बलराम का साहित्य पढ़ लीजिए। इसके विपरीत पांडित्य का चोला ओढ़कर साहित्य रचने वाले लेखकों के साहित्य को पढ़िए तो भाषा के प्रवाह और शब्दों की सहज संप्रेषणीयता के अवरोध का आडंबर सहज ही समझ में आ सकता है। जनता का दु:ख-दर्द जन भाषा में लिखना सहज काम नहीं है। गद्य लिखना और अच्छा लिखना कविता रचने से कम श्रम साध्य नहीं और बलराम ने यही किया है। बलराम की पुस्तक 'माफ़ करना यार' में भाषा का तेवर तो अन्य पुस्तकों जैसा ही है, मगर विषयवस्तु के आधार पर यह अन्य पुस्तकों से सर्वथा भिन्न है। लेखक ने इसे आत्मकथा के प्रारूप में लिखना चाहा था और यह है भी आत्मकथा ही, मगर अपनी भर नहीं, बहुतेरे समकालीनों की भी कथा है यह। जैसे इस पुस्तक का शीर्षक 'माफ़ करना यार' कौतूहलपूर्ण है, वैसे ही विषयवस्तु भी। बलराम की पुस्तकों के नाम पाठक को पढ़ने का आमंत्रण दे देते हैं। जैसे समाचारों को पढ़ने के लिए 'इंट्रो' बनाया जाता है, जिसे पढ़कर पाठक पूरा समाचार पढ़ने के लिए उत्प्रेरित हो जाता है। वही काम बलराम की पुस्तकों के नाम करते हैं। यह गुण उन्हें पत्रकार जीवन से मिला है।

यह पुस्तक किस विधा में रची गई है, खुद लेखक के शब्दों में पढ़िए- 'बैठे तो थे आत्मकथा लिखने, लेकिन पता नहीं ये क्या लिख बैठे, शायद संस्मरण या फिर इन्हें आत्मकथात्मक संस्मरण कह लीजिए, लेकिन इस पोथे में हम तो माध्यम भर बनकर रह गए, क्योंकि इसका कथावृत्त तो हमारा है, लेकिन साठ से अधिक लोगों ने अपना विरुद्ध लिखवाकर हमें कहीं का न छोड़ा।' इन प्रारंभिक पंक्तियों में ही लेखक ने संकेत दे दिए हैं कि पुस्तक की विषयवस्तु क्या है? वे साठ लोग कौन हैं, यह जानने की उत्कंठा पैदा होती है। बलराम के लेखक मन के पास वह कौशल है, जो पहले प्रश्न उठाता है और फिर उनके उत्तर देता है। इस प्रश्नोत्तर यात्रा में पाठक बहुत दूर तक लेखक के साथ चलता चला जाता है। इस आनंददायी पठन यात्रा में जब पाठक किनारे पहुँचता है तो उसके पास होती हैं अनेक सूचनाएँ और बीते समय की पग ध्वनियों की अनुगूँजें। एक लेखक अंततः अपने समय का मुंशी भी होता है, जो अपने समकाल के लक्षित और अलक्षित समय को शब्दों में रेकॉर्ड करता है। बलराम की इस पुस्तक में साठ से अधिक जिन लोगों का वर्णन हुआ है, उनमें से अधिकतर बहुश्रुत हैं और कुछ वे लोग भी हैं, जिन्होंने लेखक के जीवन को अपने कारनामों से प्रभावित किया। लेखक ने बड़ी ईमानदारी और साहस से उन सबका उल्लेख किया है। इनमें जैनेन्द्र, अज्ञेय, यशपाल, नागार्जुन, त्रिलोचन, शमशेर, शानी, कमलेश्वर, नामवर सिंह, राजेन्द्र यादव, प्रभाकर श्रोत्रिय, अशोक वाजपेयी, मंगलेश डबराल, विद्यानिवास मिश्र, धर्मवीर भारती, केदारनाथ सिंह, रमेशचंद्र शाह, विजयमोहन सिंह, कामतानाथ, विश्वनाथ त्रिपाठी, विभूतिनारायण राय, अजित कुमार, रवीन्द्र कालिया, काशीनाथ सिंह, चित्रा मुद्गल, कृष्णदत्त पालीवाल, राजेन्द्र माथुर, सुरेंद्रप्रताप सिंह, कन्हैयालाल नंदन, आलोक मेहता, शशि शेखर, विष्णु खरे, विश्वनाथ सचदेव, सुधीश पचौरी, ओम थानवी, राजकिशोर, राजेन्द्र राव, सूर्यकांत बाली, संजीव, विनोद दास, शिवनारायण, ज्ञानरंजन, प्रेम जनमेजय, उदय प्रकाश, पुरुषोत्तम अग्रवाल, केशव, दामोदर खड़से, शिवमूर्ति, संतोष तिवारी, महेश दर्पण, गीताश्री, अशोक चक्रधर, विश्वरंजन, राज कमल, सूर्यकांत नागर, गोविन्द सिंह, राजकुमार गौतम, धीरेन्द्र अस्थाना और ईशमधु तलवार आदि के नाम हैं, जिन्होंने अपने समकाल में हस्तक्षेप करने का साहस किया है। वह बलराम का ही व्यवहार कौशल है कि वे

भिन्न-भिन्न विचारधाराओं के रचनाकारों को एक ही दृष्टि से देखते रहे। उनकी विचारधाराओं में बहके नहीं। यह उल्लेखनीय काम है। चूँकि यहाँ बलराम का परिक्षेत्र साहित्य और पत्रकारिता की अतियों को छूता है। इसलिए इन नामों में इतने पत्रकारों और साहित्यकारों की उपस्थिति एक साथ संभव हो सकी। लेखक ने इस तथ्य की ओर पाठक का ध्यान खींचा है- 'घर संसार से उखाड़े जाने के बाद 'शब्द संसार' में जिए-भोगे गए हमारे सुखी-दु:खी जीवन के इस वृत्तांत को 'आत्मकथा' माना जाए, संस्मरण अथवा कुछ और, पढ़कर शायद आप ही बता सकें कि यह पोथा आख़िर बना क्या है? कुछ बना भी है या आत्मकथा और संस्मरण के बने-बनाये ढाँचे-साँचे तोड़-फोड़ देने का हमसे कोई गुनाह हो गया! कहते हैं कि कुछ बनाना हो तो तोड़-फोड़ होती ही है। विश्वास न हो तो 'नंगातलाई का गाँव' लिखने वाले पंडित जी और अस्सी वाले काशी को फ़ोन कर पूछ लो, लेकिन बहुत संभव है कि वे भी आपको टका-सा जवाब दे दें- 'अपना रास्ता लो बाबा'। इससे तो बेहतर होगा कि थोड़ा-सा समय निकालकर इस पोथे को पढ़ जाइए और बता डालिए कि आख़िर यह बना क्या है, कुछ बना भी है या हमने यों ही इतने काग़ज़ काले कर दिए।' इन पंक्तियों में बलराम अपनी बात कहते और पाठक को पुस्तक पढ़ने का आमंत्रण भी दे देते हैं। यह सच है कि लेखक ने आत्मकथा लेखन की परंपरागत शैली और ढाँचे को तोड़ा है और एक नया प्रारूप सामने रखा है। इस प्रारूप में आत्मकथा लिखना कोई सरल काम नहीं है। आप इस कृति को औपन्यासिक आत्मकथा कह सकते हैं। सीधा प्रसारण भी। घटनाएँ और लोग एक-दूसरे से गुँथे हुए हैं। लोगों और घटनाओं के बीच लेखक महाभारत के संजय की तरह कथा कह रहा है, अपनी और दूसरों की भी। बिना तोड़-फोड़ के मौलिक नहीं रचा जा सकता और मौलिकता ही नवीनता का दूसरा नाम है।

'माफ़ करना यार' में पंद्रह अध्याय हैं और हर अध्याय कौतूहलपूर्ण शीर्षक से शुरू होता है। जैसे-'तब बाबा के संग वो सोयी सारी रात'। अब इस पंक्ति को पढ़कर पाठक के मन में यह जानने की लालसा ज़रूर जागेगी कि बाबा कौन और उनके साथ रातभर सोने वाली कौन? इसी तरह पुस्तक में ऐसे अनेक प्रसंग हैं, जिनमें लेखक मानव मनोविज्ञान का सहारा लेता है। पहले पाठक को घटना के अति संवेदनशील सूत्र को पाठक को पकड़ाता है और फिर पूरी कथा पढ़वाकर ही दम लेता है। सूत्र का मंतव्य क्या है और इसका अंतिम सिरा कहाँ है, यह सब पूरा विवरण पढ़ने के बाद ही पता चलता है। लेखन के क्षेत्र में बड़ी तपस्या करने के बाद ही लोग यह हुनर कमा पाते हैं और बलराम ने यह हुनर कमा लिया है।

बलराम ने 'माफ़ करना यार' में अपने लेखक बनने की कहानी, शैक्षणिक जीवन, प्रेम प्रसंग, दांपत्य जीवन, बच्चे का जन्म-मरण और पत्रकारीय जीवन के अनेक छल-छद्म खुलकर बेपर्दा किए हैं। यह सब लेखक का निजी है, परंतु वह पाठक को बता देता है कि इस संसार में यह या ऐसा ही कुछ उसके साथ या समाज में बहुत से लोगों के साथ घट रहा है। इसलिए यह वर्णन वैयक्तिक होते हुए भी सबका हो जाता है। लेखन कर्म तभी सफल माना जाता है, जब वह बहुजन हिताय हो। यहाँ ऐसा ही है। लेखक अपने समय का प्रामाणिक वक्ता भी होता है।

पहले अध्याय 'दे के अश्क आँख में शख्स जो चले गए' में जैनेंद्र कुमार, अज्ञेय, शमशेर, उदय प्रकाश और विश्वरंजन के साथ कार्य व्यापार का वर्णन है। गौरवपूर्ण दिखने वाले लोग समीप से देखने पर कितने बेचारे होते हैं, यह सब इन प्रसंगों में देखा जा सकता है। 'वे जान ही नहीं पाए अपनी अहमियत' अध्याय में नामवर सिंह, ज्ञानरंजन, केदारनाथ सिंह और शिवनारायण के साथ लेखक के जीवन व्यापार का जीवंत वर्णन है। 'प्रश्नों के उनके प्रजातंत्र में कैसे-कैसे लोग' अध्याय में कमलेश्वर, मन्नू भंडारी और केशव का वर्णन है। 'उन्हें सितमजरीफ मान लेने का मन नहीं' प्रसंग में राजेन्द्र यादव, प्रभाकर श्रोत्रिय, मंगलेश डबराल और सूर्यकांत नागर का उल्लेख है। 'नहीं देख सके फिर उनकी वैसी हँसी' में शानी, अवधनारायण मुद्गल और सूर्यकांत बाली के जीवन प्रसंगों पर चर्चाएँ हैं। 'जाते-जाते ऐसी बात क्यों कह गए सुरेन्द्र' में लेखक ने प्रसिद्ध पत्रकार सुरेन्द्रप्रताप सिंह, राजेंद्र माथुर और विष्णु खरे के साथ मधुर और कटु अनुभवों को लिखा है। कन्हैयालाल नंदन, आलोक मेहता, अशोक चक्रधर, कृष्णदत्त पालीवाल के संस्मरण 'उन्होंने कभी जिसका ढिंढोरा नहीं पीटा' अध्याय में हैं। 'ऐसी किसी किताब का क्यों हो पाठ-कुपाठ' में अल्बेयर कामू, लोठार लुत्से, रमेशचंद्र शाह और फ्रैंज काफ्का के जीवन प्रसंग हैं। 'काशी के महाविद्यालय' अध्याय में काशीनाथ सिंह, अजित कुमार और विभूतिनारायण राय की बातें हैं। 'किसी की जान लेकर ही जैसे छूटती शराब' में रवीन्द्र कालिया, राज कमल, विनोद अग्निहोत्री और गीताश्री के विवरण हैं। 'इस तरह हासिल हुई इतनी जगह हमें' में कामतानाथ, राजेंद्र राव और संतोष तिवारी के जीवन प्रसंगों पर चर्चा है। 'दोस्ती की देहरी पर बिलम गए जो पाँव' में संजीव, शिवमूर्ति, राजकुमार गौतम और धीरेन्द्र अस्थाना के वृत्तांत हैं। 'सभ्यता के उस विरासत के दावेदार हम' में ओम थानवी, शशि शेखर, पुरुषोत्तम अग्रवाल, राजकिशोर के जीवन प्रसंगों को स्थान मिला है। 'कितने सितारे शेष हैं हिन्दी के आसमान में' नाम के अंतिम अध्याय में चित्रा मुद्गल, विश्वनाथ सचदेव, दामोदर खड़से, विनोद दास और ईशमधु तलवार को बलराम ने याद किया है। इन शीर्षकों में उन्हें ही रखा गया है, जिनके जीवन चरित वहाँ रखने योग्य हैं। इन्हें पढ़कर कोई यह शिकायत नहीं कर सकता कि किसी के साथ अन्याय हुआ है।

अगर आप किसी उपन्यास को पढ़ें तो उसमें उसके औपन्यासिक कौशल को देखेंगे। ऐसा ही अन्य विधाओं को पढ़ते हुए होता है, मगर 'माफ़ करना यार' पढ़ते हुए पाएँगे कि इस पोथे के लेखक के पास उपन्यासकार, कथाकार, पत्रकार और मनोविश्लेषक तक, सब का कौशल है। यही कारण है कि 'माफ़ करना यार' को एक बार पढ़ना शुरू करने के बाद पाठक अंत तक पढ़े बिना रह नहीं पाता।

000

पुस्तक समीक्षा

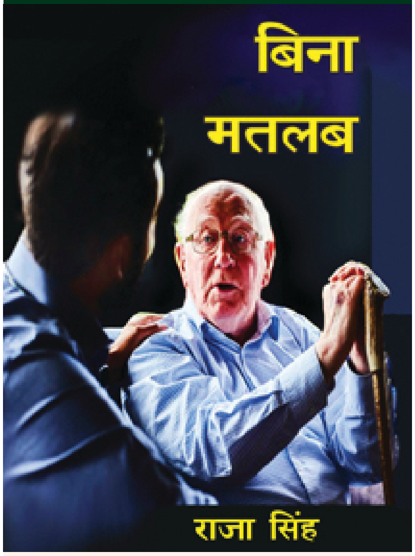

बिना मतलब

(कहानी संग्रह)

समीक्षक : संदीप वर्मा

लेखक : राजासिंह

प्रकाशक : अकादमिक बुक्स इंडिया, दिल्ली

संदीप वर्मा
1285, सेक्टर-आई,
एल.डी.ए. कॉलोनी,
कानपुर रोड, लखनऊ-226012
उप्र

राजा सिंह की कहानियों में यथार्थ और समाज में बेहतर एकरूपता परिलक्षित होती है। ज़्यादातर शहरी जीवन की कहानियाँ है। १३ कहानियों में कथ्य की प्रधानता और प्रवाहमयता है। एक बार प्रारम्भ करने के उपरांत कहानियाँ अंत तक पढ़ने को बाध्य करती हैं।

भूमिका में लिखी गई उनकी कहानियों में यह बात उचित प्रतीत होती है कि, "कहानी हमारे जीवन का सत्य उद्घाटित करती हैं। कहानी में व्यक्ति समाज और यथार्थ के अंतर्संघर्ष, अंतर्विरोध, अंतरद्वंद्व को उघाड़कर समाने आया कटु सत्य ही कहानी को जीवंत प्रवाहमय और प्रभावोत्पादक बनाता है।"

इस संकलन को पढ़ते हुए लगा की लेखक की कथानायिकाएँ-इन स्त्रियों की मर्मस्पर्शी वेदना को पाठकों की अनुभूति प्रत्यक्ष में परिणिति करने की कला में भी वह सिद्धहस्त मालूम पड़ती हैं। यह ठीक है कि औरतों की ये ज़िंदगी रचनाकार के मानस मन की कल्पनाएँ नहीं है। इन कहानियों की नायिकाएँ निष्काम कर्मयोगी हैं। उनकी कर्मनिष्ठा और पुरुषार्थ के आगे नायक बौने दिखाई देते हैं। शुरूआत, छल, हिसाब किताब-बराबर, रिश्तों की कैद, सफ़ेद परी। कितनी ही अग्नि परीक्षाओं का स्वेच्छा-सहजता से सामना करती हुई वे सोने सी चमकती हैं। जीवन सफ़र पर परित्यक्त हो जाने पर भी वे हिम्मत नहीं हारतीं। पुन:, रिश्तों की क़ैद, अपवाद स्वरूप, आवरण, बिना मतलब, असफल और पुन:।

आज सर्वत्र स्त्री और दलित विमर्श के बहाने उसकी अस्मिता, स्वतंत्रता पर बहस छिड़ी हुई है, किन्तु इन कहानियों ने साबित किया है कि वह अबला नहीं है, सफ़ेद परी, आवरण या छल की स्त्री ...यहाँ तक कि वह मर कर भी वह अपनी अस्मिता का बदला लेकर रहती है। हिसाब किताब बराबर।

आज स्त्री-पुरुष की समानता की बातें करने वाली आधुनिकाएँ भी कम नहीं है। उसके दुष्परिणाम भी अलगाव के रूप में सामने आते हैं परन्तु आवरण की नायिका बड़ी ख़ूबसूरती एवं बुद्धिमानी से अपने घर को टूटने से बचाती है। और पुन: की नायिका त्रिशा, अहम् की वेदी पर भेट चढने जा रहे अपनी बच्ची और अपने स्वयं के प्यार को भी बचाती है और पुन: सफल दाम्पत्य जीवन की ओर प्रवेश करती है। वे प्रेम की एक नई परिभाषा गढ़ती हैं। उनमें प्रेम पनपता है, प्रेम विवाह होता है, प्रेम में तलाक भी हो जाता है और तलाक के बाद पुन: मिल जाते हैं। किन्तु उनमे किसी भी स्तर पर एक दूसरे के प्रति कटुता नहीं होती है। यहाँ तक कि तलाक के समय भी वे एक दुसरे पर कोई आरोप-प्रत्यारोप नहीं लगाते हैं।

स्त्री के अस्तित्व के लिए पारिवारिक पृष्ठभूमियाँ उतना असर नहीं डालती, जितनी की उनकी अपनी सोच। जिसकी परिणिति विमर्श समग्रता में अभिव्यक्ति होती है। राजा सिंह की

स्त्रियाँ विवेकशील हैं। चाहे आवरण की अणीमा हो या नियति की जिया परवीन या पुन: की त्रिशा हो। वे जीवन की वास्तविकता को पहचानती हैं, और तदनुरूप उनका प्यार, समर्पण, व्यवहार, कृत्य परिलक्षित होता है। वे अपनी इच्छाओं का त्याग सम्पूर्णता के साथ अभिष्टता के अनुरूप करती हैं, और अनुत्तरित प्रश्नों को दरकिनार करते हुए वे प्रेमी/पति की कमज़ोरियों और बदमिजाज़ी को भाँप कर समाजिक लांछना से मुक्त हो जाना चाहती है। विशेष का मूड, इगो, बच्चों की जबावदेही, मेहमानवाज़ी, नौकरी की दुहरी तिहरी भूमिका निभाते हुए उसकी स्त्री अंत तक कोशिश करती है, हार नहीं मानती है। आवरण-वरदहस्त और पुन:।

भावाभिव्यक्ति में उन्होंने भाषिक अधिकार सामर्थ का यथोचित परिचय दिया है और अंचल, आयु, पात्र का ध्यान रखते हुए बड़ी सजगता से कथन कहे हैं- "छटांक भर की लड़की और जबान हाथ भर की।" "स्साली ! एक तो काम नहीं करेगी, ऊपर से ज़बान लड़ाती है..हरामज़ादी..नासपीटी..! आज इसका पढ़ाई का भूत भगाते हैं।"..और पढ़ाई के लिए हर कष्ट सहने को तत्पर सपना का प्रतिउत्तर, "हाँ, नहीं करूँगी काम, मुझे पढ़ना है। सब बच्चे पढ़ते हैं। जल्लाद हो..बच्चों से काम करवाती हो और खुद मौज करती हो।" वह बड़ी ढिठाई से चिल्लाई।(शुरूआत)।

कहानियों में परिवेश-परिस्थितियाँ का विश्लेषण भी सूक्ष्म एवं यथार्थ से भरा है भाषा में, शब्दों में जीवन्तता है। कितने ही शब्द पाठक के लिये बेहद संजीदा और अर्थगर्भित हैं। जीवन संस्कृति के जिन प्रसंगों को उद्घाटित किया है वे बेहद रंगीन हैं। किसी को अपना बनाने या किसी का होने के लिए किसी साक्ष्य, किसी तर्क की ज़रूरत नहीं होती है। यह बात असफल की किशोर-लड़की, नियति की जिया परवीन और उद्भ्रांत के प्रेम प्रसंग पूर्णरूप से साबित करते हैं। किन्तु यह देखते हुए कि उनका मिलना सांप्रदायिक उन्माद का वातावरण/माहौल बना देगा। वे निर्णय पर पहुँचते हैं कि अपने प्रेम और अधिकार की लड़ाई का कोई औचित्य नहीं है और उनका प्रेम कुरबान हो जाता है। परन्तु उनमें कटुता किसी भी तरह से किसी के प्रति नहीं पनपती है न अपने प्रति, न समाज और धर्म के प्रति। वे अपने निष्कलुष, देदीप्यमान प्रेम से परितृप्त होकर निहाल रहे।

दलित विमर्श को बेहद संजीदा तरीके से अभिव्यक्ति कराती है कहानी, "हिसाब किताब बराबर" इसमें दलित लड़की अपना कार्य करते हुए भी किसी से झेंपती या दबती नहीं है और लालच के किसी भी झाँसे में नहीं आती है। षड्यंत्र का शिकार होती है परन्तु अपनी सामर्थ्य भर प्रतिरोध करती है और मरने के बाद भी बदला लेती है अपने प्रेमी के सहयोग से। यहाँ तक अपने प्रेमी को भी नहीं बख्शती..जब उसका प्रेमी कहता है कि, "मुझसे शादी करोगी?" वह झुँझला कर तमक कर बोलती है, "बनिया-बक्काल मुझ मेहतर से शादी करोगे? सिर्फ अपना मतलब निकालना जानते हो।" प्रबंधन एक अलग तरह की कहानी है जिसमें आदमीयत नदारद है। इसमें कंपनी का बॉस तरह तरह के हथकंडे अपनाकर सम्पूर्ण स्टाफ को प्रताड़ित करते रहने की आदत से अभिशप्त है। जिससे कि वह अपना काम निकाल सके। उसे किसी की भी परवाह नहीं है। और वह बिना किसी अपराध भाव के ये सब करते रहते हैं निरपेक्ष ढंग से। और किसी भी समय उसके माथे पर शिकन नहीं आती है अपने किसी कृत्य को लेकर।

देश में निम्न वर्ग निम्न-मध्यवर्ग की आवश्कताएँ बेहद सीमित हैं और वह थोड़े से ही संतुष्ट हो जाने वाला जीव है। कामरेड बलदेव जब अपनी पत्नी पार्वती को मिल में वेतनवृद्धि के लिए हड़ताल के विषय में बताता है, तो वह हड़ताल का प्रतिरोध करती है, "अरे! ठीक-ठाक पैसा तो मिलत है। चार बच्चन और हम दुए मनई कुल छई जने का काम चल जावत है और हर महीना कुछ ना कुछ बिपदा भरे बच ही जावत है।" उसके प्रति उत्तर में कामरेड कहता है, "नहीं यह लूट है लूट। वे सब मक्खन मलाई खाते हैं और हम सबका सूखी रोटी। उन सबका बच्चा कान्वेंट में पढ़त है और हम सबका सरकारी सड़ियल स्कूल मा। यह अन्याय है,अत्याचार है।" अति अनावश्यक यूनियन की दखलंदाज़ी किसी भी चलते व्यवसाय एवं उद्योग को चौपट कर देती है, जिसके परिणामस्वरूप-बरबादी, बेरोज़गारी और मज़दूरों कर्मचारियों को भुखमरी और उन्हें मौत या मौत से भी बदतर ज़िंदगी की ओर धकेल देना होता है। मार्मिक और बेहद संवेदन शील कहानी है,"कामरेड का मकान"। एक कामरेड बलदेव और उन जैसे कितनों की पूरी कहानी दर्ज कराती है यह कहानी।

मुख्य शीर्षक कहानी "बिना मतलब" एक साहित्य समालोचक की वृद्धावस्था की कथा है। कहानी उनके एकाकीपन के संत्रास का वास्तविक चित्रण कराती है। अपनों का विछोह उनमें ठंडेपन के भाव उत्पन्न करता है। साहित्य के इस दौर में हर कोई आगे प्रचारित, प्रसंशित होना और छा जाना चाहता है। वहाँ तत्कालीन समय में साहित्यिक सक्रियता शिथिल होते ही अपेक्षाएँ पालने वाले रचना धर्मी व्यक्ति दूर हो जाते हैं। यह उनमें उदासीनता के भाव भरता है। कथा का समापन सुखद है उसके भीतर दबी हुई इच्छा तब मूर्त लेती है, जब उसके बेटे के सहपाठी के प्रयास से साहित्यिक पत्रिकाओं में प्रकाशित उनके लेखों का पुस्तकाकार प्रकाशन होता है। यह प्रयास उनमें नए सिरे से जिजीविषा का संचार करती है और उसके साथ पाठक भी जीवन के अंतिम पलों तक आशान्वित होने की अनुभूतियों से गुज़रता है। लेखकीय समाज के लिए समालोचक की स्थिति को गहरे से पड़ताल कराती है यह कहानी।

इस संकलन की कहानियाँ जीवन के विविध रंगों, अहसासों, संवेदनाओं से गुज़रते हुए यथार्थपरक सत्य को उद्घाटित करती हैं। साहित्य प्रेमियों के लिए यह पुस्तक एक तरह का आईना है जो भारतीय समाज को भीतर से देखने और समझने का। अंत में इस संकलन की उत्कृष्ट कथा सृष्टि, दृष्टि एवं भाषा शैली के लिए अनेकानेक शुभकामनाएँ।

000

पुस्तक समीक्षा

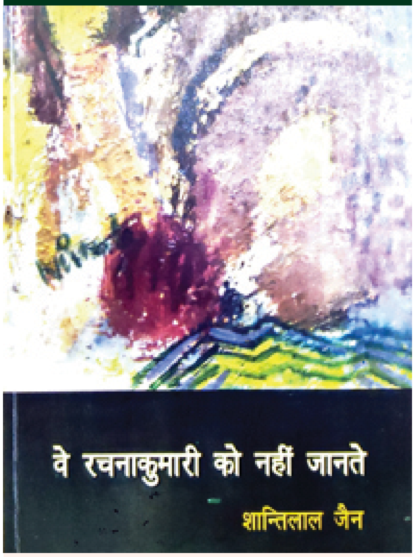

वे रचना कुमारी को नहीं जानते

(व्यंग्य संग्रह)

समीक्षक : कमलेश पाण्डेय

लेखक : शांति लाल जैन

प्रकाशक : आइसैक्ट प्रकाशन, भोपाल

कमलेश पांडेय
बी-260, पॉकेट-2
केंद्रीय विहार, सेक्टर- 82
नोएडा, उप्र 201304
मोबाइल- 9868380502
ईमेल– kamleshpande@gmail.com

मुझे लगता है व्यंग्य लिखने के लिए एक करुणा से भीगा मन, एक सचेत दिमाग़, अनुभव और ज़रूरी ज्ञान से लैस याददाश्त और एक बेलौस, बैरागी-सा मस्ती भरा मूड चाहिए। कबीर जैसा? - कह सकते हैं। शायद इस दौर के कबीर की वाणी में थोड़ा और नटखटपन और अपनी उलटबासियों में कुछ और आड़ा-तिरछापन ही नहीं, दुरूहता भी हो सकती थी। इन दिनों अपने लिखे से जो पाठक के मन में ऐसी छवि उभारते हैं- वही शांतिलाल जैन हैं।

इन दिनों हिन्दी साहित्य जगत में व्यंग्य का एक रेला-सा आया हुआ है। व्यंग्य पर लिखने-पढ़ने-सुनने-छपने और तालियाँ बजा कर बधाई देने का बाज़ार इतना गरम है कि शोर और सक्रियता मछली बाज़ार स्तर तक पहुँची हुई है। कुछ लिख डाला- न सूझा कि ये क्या है तो उसे व्यंग्य कह दिया और व्यंग्यकारों की कतार में जा खड़े हुए। ये कतार इतनी लंबी हो चुकी है किसी को कोई नहीं दिखाई देता। संतोष का विषय है कि ये सभी सुप्रसिद्ध लेखक हैं जो या तो उत्कृष्ट, चुनिंदा या श्रेष्ठ रच रहे हैं या फिर सर्वश्रेष्ठ। व्यंग्य के इस अंबार में अगर कोई पढ़ने पर उतारू हो ही जाए तो व्यंग्य है क्या बला- इसका कयास ही लगाता रह जाए। ऐसे हालात में ये समझने के लिए कि व्यंग्य क्या है? उसका स्वरूप कैसा है और उसकी प्रभावोत्पादकता कैसी होती है - हमें शांतिलाल जैन को पढ़ना पड़ता है। "वे रचनाकुमारी को नहीं जानते" शीर्षक से आई उनकी पुस्तक में न केवल व्यंग्य लेखन की जगमगाती परंपरा की रश्मि छिटकती हैं बाक़ी नए-नवेले प्रयोगों, विविधाओं और आधुनिक प्रवृत्तियों के विश्लेषण का एक सुस्पष्ट आलोकित पथ भी दिखता है। ऐसा कि व्यंग्य के पाठक /विद्यार्थी के मन में कोई संशय न रहे कि अरे ! वहाँ तो वैसे, न जाने कैसे लिखे हुए को व्यंग्य कहा गया जो कहीं से भी व्यंग्य तो क्या, कुछ भी नहीं लग रहा था। "वे रचनाकुमारी को नहीं जानते" में कई व्यंग्य एक मानक-सा पेश

करते हैं - व्यंग्य हो तो ऐसा हो- वरना न हो।

डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी ने किताब की भूमिका में उन्हें एक बेचैन लेखक बताते हुए उनकी रचना-यात्रा पर बहुत विस्तार से लिखा है। एक तरह से कोई भी समीक्षा करते हुए जो और जितना कुछ कहना चाहता, सब कह दिया है। दोहराव से न डरते हुए मैं कहूँगा कि हम जो लोग इस दौर में ज्ञानजी की परंपरा में ही लिखने की कोशिश कर रहे हैं उनमें शांति भाई बेजोड़ हैं। जिस तरह पिछले दशकों में विसंगतियाँ म्यूटेट हुई हैं उन पर आघात करने के लिए अब कुछ अलग तरह के, टेढ़े-मेढ़े और इमप्रोवाइज़्ड नश्तर चाहिए। शांति लाल जी उर्फ सांतिभिया के पास तो पूरा शस्त्रागार है। "किस्सा-कोताह" से लेकर "पेलवान" प्रसंग तक। जैसा ज़ख्म-वैसा नश्तर इस्तेमाल करते हुए वे भाषा-शैली, मुहावरे, अंदाज़ सब का एक अलग सेट ले आते हैं। जैसी विकट विसंगति वैसा ही यूनिक प्रहार। एकदम सटीक विसंगति के मर्म पर। शांति भाई कभी कोताही नहीं करते, कभी नहीं चूकते, एक दशक से ज़्यादा वक़्त से उन्हें पढ़ रहा हूँ। बल्कि जैसा ज्ञान जी ने इशारा किया है, कभी-कभी विसंगति की खटिया खड़ी करने के उद्वेग में अबूझ भी हो जाते हैं। पर मैं मुरीद हूँ उनके एकदम सहज विट का जो उनके कहन में एक शिष्ट और मिष्ट (मीठा) सा हास्य सृजित कर अपनी बात को पाठक की संवेदना तक पहुँचा देता है। हास्य और व्यंग्य के फ़र्क़ या दोनों के परस्पर संबंध पर चली आ रही अंतहीन बहस एक झटके में हल हो जाती है, जब पाठक मुस्कराते हुए तिलमिलाता है और आक्रोश से भरते हुए एक दम हँस देता है। व्यंग्य अपना लक्ष्य पा लेता है।

शांतिलाल जैन के पास हैरान कर देने वाले औज़ारों का सेट है तभी कर पाते हैं वे एक दम नए ज़माने के युवाओं के अंदाज़ में उनकी जीवन-शैली की विडंबनाओं की ओर इशारा और महिलाओं के ड्रेसिंग रूम की शब्दावली में अद्भुत कटाक्ष करने का साहस। मॉम है कि मानती नहीं, फेड एण्ड टेम्पर.., इकॉनोसेव मोड में.. जैसी रचनाएँ न केवल सूक्ष्म पर्यवेक्षण बल्कि व्यंग्यकार की असीमित दृष्टि सीमा का परिचय देती हैं और कोई भी विषय चुन कर उसे कैसी भाषा, शैली और संवेदना के साथ बरतना है, ये भी सिखाती हैं। (एकाध पैरा यहाँ उद्धृत करने का कोई फायदा नहीं, शांति भाई हर वाक्य नायाब रचते हैं)

पर सबसे बढ़ कर शांति भाई की व्यंग्य रचनाओं में एक मानवीय-मूल्यों को छूता विचार तत्व प्रवाहित होता है, जिससे पाठक को रचना के अंत तक पहुँचते-पहुँचते उस करुणा से संस्पर्श होता है जो किसी भी रचना का अभीष्ट है। और ये शांति भाई इतनी सहजता से करते हैं कि लगता है ये ऐसे ही हो सकता था, या ऐसा ही होना सच है। कोई एक युगसत्य उद्घाटित करना हर व्यंग्य का अनिवार्य उद्देश्य न हो शायद पर हर युग की तात्कालिक प्रवृतियों का शाश्वतता से जो जुड़ाव होता है, अच्छा व्यंग्य अपनी परतों में करुणा के साथ उसे भी ज़रूर छुपाए रखता है। शांति लाल जैन अपने समय को ऐसे लिख रहे हैं जैसे कभी कबीर ने और आगे भारतेन्दु, प्रेमचंद ने लिखा। फिर परसाई और शरद जोशी ने व्यंग्य शैली को विधा में ढाल कर अपने दौर की हर विसंगति की ख़बर ली। ज्ञानजी हमारे दौर तक उस धारा को ले कर आए हैं और जो लेखक अपने गंभीर और सोद्देश्य व्यंग्य लेखन से इस परंपरा को आगे ले जाने को उत्सुक दिखते हैं उनमें शांति लाल जैन बेहद महत्त्वपूर्ण हैं। वे शरद जोशी की तरह अद्भुत तौर पर पठनीय भी हैं। आत्मप्रचार और सोशलमीडिया पर आज के शोरशराबे भरे साहित्यिक कर्मकांडों से दूर रहने वाले शांति भाई को पढ़ कर ही जाना जा सकता है कि अच्छा सच्चा व्यंग्य कैसा होता है।

आप से मेरा अनुरोध है कि न केवल "वे रचनाकुमारी को नहीं जानते" पढ़ें बल्कि खोज कर उनके पिछले नायाब व्यंग्य संग्रहों "न आना इस देश" और "मार्जिन में पीटता आदमी" का भी लुत्फ लें। हिन्दी व्यंग्य के प्रति आपका नज़रिया न बदल जाए तो कहिएगा।

000

नई पुस्तक

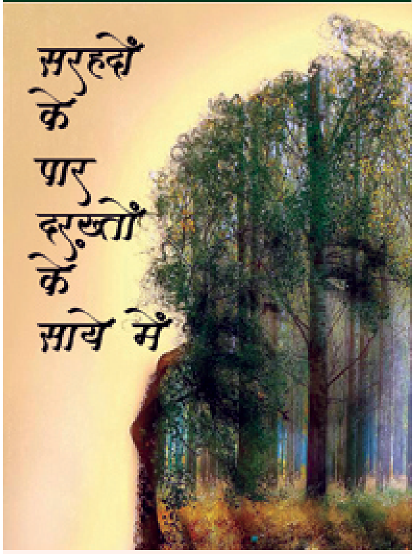

सरहदों के पार दरख़्तों के साये में

(कविता संग्रह)

लेखक : रेखा भाटिया

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

अमेरिका में रहने वाली कवि रेखा भाटिया का यह पहला काव्य संग्रह है जो शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर सामने आया है। इस संग्रह में 72 कविताएँ संकलित हैं। यह कविताएँ अलग-अलग विषयों पर लिखी गई कविताएँ हैं। इनको पढ़ते समय पाठक विषयों के बीच यात्रा करता रहता है। स्वयं रेखा भाटिया अपने लेखन के बारे में कहती हैं- अमेरिका में प्रवास के दौरान मैंने कई सांस्कृतिक और रेडियो कार्यक्रमों में हिस्सा लेना शुरू किया, हिन्दी में स्क्रिप्ट लिखने की ज़िम्मेदारी निभाते-निभाते मेरी लेखनी ने पुर्नजन्म लिया। इस दौर में एक सुनहरे अध्याय की मेरे जीवन में शुरूआत हुई जब कुछ प्रेरणादायक व्यक्तित्वों ने मेरे जीवन में प्रवेश किया। इस कविता संग्रह में अभिव्यक्त प्रत्येक कविता में व्यक्त संवेदनाएँ, अनुभूतियाँ मेरे बहुत करीब हैं, जिन्हें मैंने अगल-अगल परिस्थितियों में महसूस कर कविता रूप दिया।

000

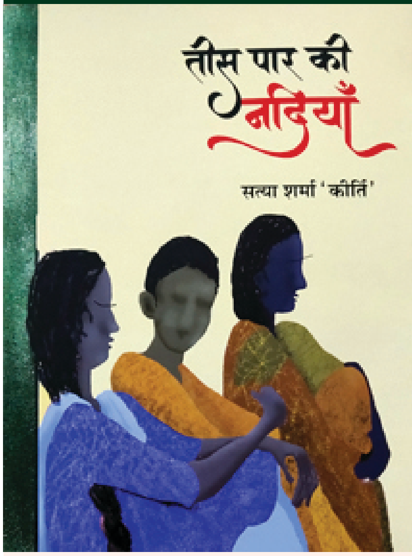

तीस पार की नदियाँ

(कविता संग्रह)

समीक्षक : डॉ. नीलोत्पल रमेश

लेखक : सत्या शर्मा 'कीर्ति'

प्रकाशक : बोधि प्रकाशन, जयपुर

डॉ. नीलोत्पल रमेश
पुराना शिव मंदिर, बुध बाज़ार
गिद्दी –ए, जिला – हज़ारीबाग
झारखंड – 829108
मोबाइल– 09931117537, 08709791120
ईमेल– neelotpalramesh@gmail.com

'तीस पार की नदियाँ' युवा कवयित्री सत्या शर्मा 'कीर्ति' का पहला कविता-सँग्रह है, जो हाल में ही प्रकाशित हो कर आया है। इसमें कवयित्री की ५७ कविताएँ संकलित हैं। इस सँग्रह की अधिकांश कविताएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो कर प्रशंसित हो चुकी हैं।

हाल के वर्षों में जिन युवा कवयित्रियों ने अपनी कविता के माध्यम से उपस्थिति दर्ज की हैं, उसमें से एक सत्या शर्मा 'कीर्ति' भी हैं। इनकी कविताएँ स्त्री-मन की पीड़ा, बेचैनी, दुख-दर्द, सोच को अभिव्यक्त करने में पूरी तरह सफल हुई हैं।

इसके साथ-ही-साथ कवयित्री ने अपने आसपास जो कुछ देखा है, महसूस किया है, उसे भी कविता की शक्ल में पिरो कर पाठकों के सामने प्रस्तुत कर दिया है। कवयित्री का मन वहाँ भी गया है, जहाँ अक्सर लोगों का ध्यान नहीं जाता है। सहज, सरल और आम बोलचाल की भाषा में कवयित्री की कविताएँ पाठकों को अनायास ही अपना बना लेती हैं।

'तीस पार की नदियाँ' शीर्षक नामित कविता से ही अपनी बात शुरू करना चाहूँगा। इस कविता के माध्यम से कवयित्री ने तीस पार की युवतियों की भावनाओं को व्यक्त किया है। 'नदियाँ' यानी युवतियाँ, जो इस उम्र से गुज़र रही होती हैं, वे विभिन्न तरह की मानसिक समस्यायों से जूझती रहती हैं, जिसे कवयित्री ने अपने आसपास महसूस किया है और उस पीड़ा को अपनी लेखनी के माध्यम से प्रस्तुत किया है। इसे कवयित्री ने इस प्रकार व्यक्त किया है - "अपने जीवन के समुद्र में / विलीन हो जाने के पहले / वो करती है इंतज़ार / उस अनाम तट का / जहाँ तीस पार होती / लड़कियों के लिए / होता है / संगम का मोक्ष द्वार।"

'काश! मैं हो जाती पिता' कविता के माध्यम से कवयित्री ने पिता के दुख-दर्द को महसूसने की कोशिश की है। पिता अनेक मुसीबतों का सामना करते हुए भी, वे खुद मुस्कुराते रहते हैं। कवयित्री उन मुसीबतों से सामना करना चाहती हैं। यानी पिता के दिल को पाकर वह एक पिता के एहसासों को अपने अंदर आत्मसात् करना चाहती हैं। वह यह भी जानने की चाह में है कि पिता कैसे अपनी बेटियों को अजनबी हाथों में सौंप देते हैं, फिर भी उनके चेहरे पर शिकन का एहसास तक नहीं होता है। कवयित्री ने लिखा है - "मैं भी कभी पिता बन / पिता होने के उस एहसास / को पाना चाहती हूँ / कि कैसे रोक लेते हैं पिता / आँसुओं की नदी और / फिर बन जाते हैं वो / खुद ही समंदर।"

'मैं माँ होना चाहती हूँ' कविता के माध्यम से कवयित्री ने उस स्त्री की पीड़ा को वाणी देने की कोशिश की है, जो माँ नहीं बन सकती है। स्त्री-जीवन का सबसे बड़ा सुख है - मातृत्व सुख। अगर स्त्री माँ नहीं बन पाती है तो उसके जीवन में अँधेरा ही अँधेरा नज़र आता है। स्त्री वह सब कुछ अनुभूत करती रहती है, बाँझ होने के बाबजूद जो एक मातृत्व का सुख भोगती स्त्री महसूसती है।

कवयित्री ने इसे इस प्रकार अभिव्यक्त किया है - "क्या करूँ उर्वरक नहीं है मेरी कोख / पर बच्चे के नन्हें कोमल स्पर्श / अपने मन,अपनी आत्मा / अपने शरीर पर महसूस करना चाहती हूँ / मैं माँ नहीं हूँ / पर माँ होना चाहती हूँ।"

'मैं बुद्ध होना चाहती हूँ' कविता के माध्यम से कवयित्री ने बुद्ध के बुद्धत्व के रहस्यों को पाने की कोशिश की है। कवयित्री का मन सत्य, अहिंसा, शील, ज्ञान के साथ-साथ जन्म-मृत्यु के अर्थ को समझना चाहता है। वह जरा-मरण के साथ-साथ बचपन, यौवन और बुढ़ापे के रहस्यों को भी जानने को उत्सुक है। यही नहीं, वह साँसारिक मृगतृष्णा में भटकते रह जाती है। वह बुद्ध नहीं है, पर वह बुद्ध होना चाहती है। कवयित्री ने लिखा है - "जानना चाहती हूँ / सत्य, अहिंसा, शील / ज्ञान की असीमित सी बातें / जन्म- मृत्यु के रहस्यों की / ज्ञानमयी बातें /

जरा-मरण के चक्र से परे की / अनगिनत बातें महसूस करना चाहती हूँ / बचपन, यौवन, बुढ़ापे के / चक्र को समझना चाहती हूँ / मैं बुद्ध नहीं हूँ / पर बुद्ध होना चाहती हूँ।"

'चलो अब लौट आती हूँ' कविता के माध्यम से कवयित्री ने अपने प्रिय को याद किया है। कवयित्री जब अपने प्रिय के पास नहीं है, तब वह अनेक रूपों में अपने प्रिय की स्मृतियों को आत्मसात कर लेना चाहती है। इसके बाद वह रह नहीं पाती है, उसकी बेचैनी और तड़प जब बढ़ जाती है तो वह पुन: अपने प्रिय के पास लौट जाना चाहती है, ताकि रिश्तों की गर्मी ज्यों-की-त्यों बनी रहे।

कवयित्री ने इस प्रकार लिखा है - "कि हाँ, अब सोचती हूँ / लौट भी आऊँ / कि इस बार की सर्दी में / बर्फ न बन जाए / हमारे रिश्तों की गुनगुनी सी गर्माहट।"

'मेरा लौटना पसन्द न आया' कविता के माध्यम से कवयित्री ने कोरोना के बाद मज़दूरों के पलायन की पीड़ा को अभिव्यक्त किया है। जो मज़दूर वर्षों पहले अपने घर-परिवार को छोड़कर चले गए थे, रोज़ी-रोज़गार की तलाश में, वे ही कोरोना के कारण अपने गाँव लौट आए हैं। इनके लौटने से गाँव में जो स्थिति उत्पन्न हुई है, उसकी मार्मिक अभिव्यक्ति करने में कवयित्री पूरी तरह से सफल हुई हैं। इसे इस प्रकार कवयित्री ने लिखा है- "पर अब / जब एक वायरस के प्रकोप से / बेरोज़गारी का बोझ / अपने कंधे पर लिए / लौट रहा हूँ / अपने उसी गाँव और आँगन के पास / जिसे अपनी दो हाथ की / खोली में रोज़ ढूँढ़ता था मैं / तो मेरे गाँव, मेरे आँगन को / नहीं सुहा रहा मेरा लौटना / नहीं सुहा रहा मुठ्ठी भर खेतों को / पाँच भाइयों में बँटना / घर की कोठरियों को भी / बँटवारे पसंद नहीं आ रहे।"

'जन्म लेना कविता का' कविता के माध्यम से कवयित्री ने सृजन की पीड़ा को वाणी देने की कोशिश की है। कवि भी सृजन प्रक्रिया के दौरान अनेक यातनाओं से होकर गुज़रता है। तब कविता शब्दों के माध्यम से अपना आकार ग्रहण करती है। वही आकार-प्रकार पाठकों के ज़ेहन में बैठ जाती है। कविता भी ऐसे भावुक कोख की तलाश में रहती है, जहाँ वह जन्म ले सके। यानी कवयित्री ने कवि-कर्म को इस कविता के जरिये समझाने की कोशिश की है। इसे देखा जाए - "हाँ, कविता / तलाशती रहती है / किसी भावुक,अशांत / और एकांत हृदय की कोख / जहाँ बार-बार / अनवरत जन्म लेती रहे कविता।"

' सेल्समैन' कविता के माध्यम से कवयित्री ने सेल्समैन की मजबूरी का ज़िक्र किया है। सेल्समैन बेचने वाले सभी समानों के गुण-धर्म से पूरी तरह से वाकिफ़ रहता है फिर भी वह उस समान की तारीफ़ ही करता है, ताकि वह अपने मालिक के सड़े-गले समान बेच सके। वह उसके तारीफ़ में लगातार कसीदे काढ़ता रहता है, ताकि ग्राहक उसे ख़रीद सके। इसे कवयित्री ने इस प्रकार लिखा है - "ये तो नौकरी की और / उसे निभाने की जद्दोजहद है / कि भागता-फिरता हूँ / दिन - प्रतिदिन / बेवजह इस घर से उस घर तक / कि बेच दूँ / मालिक के सारे सड़े-गले समान / जबकि मैं जानता हूँ / उसकी गुणवत्ता / पर बाँधता हूँ तारीफों के पुल / और गिनाता हूँ /अनगिनत फायदे।"

'गौरैया तुम फिर आना' कविता के माध्यम से कवयित्री ने पेड़-पौधों को काटकर उसके स्थान पर बन रहे आपर्टमेंट की ओर पाठकों का ध्यान दिलाया है। जंगल काटकर लगातार आपर्टमेंट बनाये जा रहे हैं। पक्षियों के घर-संसार उजड़ते जा रहे हैं। कवयित्री का मन अबोध पक्षियों की पीड़ा को महसूसता है और उससे पाठकों को जोड़ने की कोशिश करता है। कवयित्री ने लिखा है - "वो ढूँढ़ रही थी / आँगन में अपना फुदकना, / कटी नीम की डालों के बीच / अपनी अठखेलियाँ, / छत पर बिखरे ईंट-पत्थरों में / अपना चहचहाना, / घर से आपर्टमेंट बनने के बीच / कई बार आती रही गौरैया / खोजती रही तुलसी-चौरे को, / चावल के बिखरे टुकड़े को / पानी के कटोरे को।"

'तीस पार की नदियाँ' कविता सँग्रह की कविताओं को कवयित्री ने सात खण्डों में विभक्त किया है। वे खण्ड हैं - 'मायके की चौखट', 'स्त्रियाँ गढ़ती है खाली पलों में भविष्य के सुनहरे सपने','बुद्ध हो जाना कहाँ सरल है', 'तुम्हारे मन के किवाड़ पर दस्तक होती होगी ना','जन्म लेना कविता का युगों के गुज़र जाने सा होता है', 'अब रातें भी पूछती है नींद बेचनी तो नहीं' और 'एक बार फिर आई थी गौरैया'। इन्हीं खण्डों के अंतर्गत कवयित्री की कविताएँ शामिल हैं। इन कविताओं के माध्यम से कवयित्री सत्या शर्मा 'कीर्ति' ने सृजन-प्रदेश से कुछ नया ढूँढ़ कर लाने की कोशिश की है। यही कोशिश कवयित्री को अन्य कवयित्रियों से अलग करती है। सत्या शर्मा 'कीर्ति' जी को इन कविताओं के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ!

000

पुस्तक समीक्षा

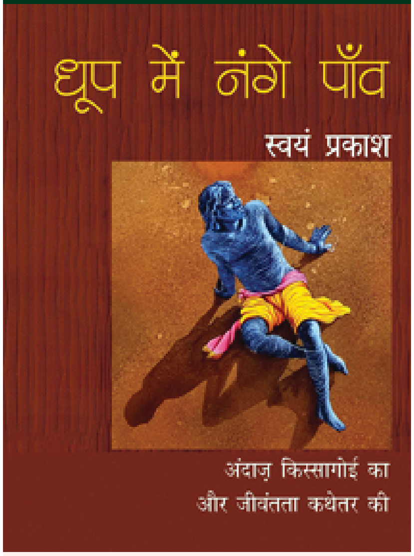

धूप में नंगे पाँव

(संस्मरण)

समीक्षक : योगेन्द्र शर्मा

लेखक : स्वयं प्रकाश

प्रकाशक : राजपाल एंड संस, नई दिल्ली

योगेन्द्र शर्मा
द्वारा अनिल कुमार कुलदीप, 86,
खजियान, बिजनौर 246701 उप्र
मोबाइल- 9897410320
7017206371

एक था, स्वयं प्रकाश, जिसके जीवन में अनेक ऐसी घटनाएँ हुईं, जिन्हें याद करके आज भी वह अकेले में ठठाकर हँस पड़ता था, या तकिये में मुँह घुसेड़ कर सिसकने लगता था। अच्छा, बताइए, कि यह बन्दा मोटी खाल वाला नहीं, संवेदनशील था या नहीं ? मूलत: वह कहानीकार था, परन्तु इस बार उसने परम्परागत कहानी की राह चुनकर, कथेतर विधा को अपनाया। माता-पिता का स्नेह तो उसकी झोली में अधिक नहीं समाया, परन्तु सारे रिश्ते-नातों से बढ़कर, उसे इंसानियत से इश्क़ था। अस्तु दोस्तियाँ ख़ूब परवान चढ़ीं, और रूमानियत की दिल फ़रेब वादियों में ले जाती मुहब्बतें भी थीं।

सन् १९६५ में भारत-पाक युद्ध के बाद सरकार ने सारे संसाधन रक्षा-व्यवस्था में झोंक दिए, फलत: जिन्हें नेहरु जी "राष्ट्र निर्माता" कहते थे, वह इंजीनियर, बेरोज़गार हो गए। मैकेनिकल इंजीनियरिंग का डिप्लोमाधारी होते हुए भी काफी भटकने के बाद, पहली नौकरी भारतीय नौसेना में मिली। बम्बई में आई.एन.एस आँग्रे में हुई ट्रेनिंग का अति-अनुशासन उसे रास नहीं आया। तमाम अपमान सहकर भी वह, वहाँ से भाग छूटा। आपको पता है आवारा बादल, आज़ाद परिन्दे, आकाश की सीमाएँ नापना पसंद करते हैं। उन्हें भाता है, स्वअनुशासन।

नौकरी से पहले उसे एक दोस्त मिला था, आज़ाद, । जिसने परीक्षा की अंतिम तिथि को घरवालों की अनुपस्थिति में, माँ के बक्से का ताला तोड़कर, उसे सैंतीस रुपये दिये थे। लेखक उन रुपयों का एहसान ताज़िंदगी मानता रहा। इंजीनियरिंग कॉलेज के दौरान उसे एक और प्यारा दोस्त मिला, कैलाश निगम। डिप्लोमाधारियों के उधार खातों से परेशान हो कर, ढाबे वालों ने खाना खिलाना बन्द कर दिया था। शहीद भगत सिंह की जेल में तीस दिन की भूख हड़ताल से प्रेरित होकर उसने भी भूखे रहने का फ़ैसला किया। नवें दिन उस की हालत बिगड़ गई। कैलाश को पता चला तो तुरन्त साइकिल पर बैठा कर, घर ले गया। खाना खिलाया, उसने और उसकी माँ ने दोबारा ऐसा न करने का वचन लिया।

दिल में बेपनाह मुहब्बत लिए वहा जहाँ भी जाता था, दोस्ती दोनों हाथ पसारे उसे गले लगाती थी। मुम्बई में उसे एक और जिगरी दोस्त मिला, मदन। जिसने न केवल अपनी खोली में, उसे जगह दी, अपितु, फिल्म स्टूडियो में छोटे-मोटे काम दिलाता रहा। "कभी घी घना, कभी दो मुठ्ठी चना, कभी वो भी मना"। लेखक ने ज़िंदगी का हर रंग देखा, बम्बई में। कमाल स्टूडियो में राजेन्द्र सिंह बेदी की "दस्तक" फिल्म में स्पाट बॉय रहा। अख़बार बिछाकर प्लेटफार्म पर सोया, कभी नल का पानी पीकर सो गया। फिल्मी-दुनिया उसकी नज़र में एक घमंडी लालची, नकलची दुनिया थी, जो केवल सात रुपये रोज़ कमाने के लिए थी। परन्तु इंसानियत तो वहाँ पर भी ज़िंदा थी। ख़ुद बेदी जी, संजीव कुमार, फिरोज़ खान जैसे दरियादिल कलाकार भी थे। दिहाड़ी के कामों में खटते, ईरानी होटल में रोटी और पाये खाते, नौटाँक (शराब) पीते-पीते उसे पीलिया हो गया। आख़िर दोस्त ही काम आये, चार-पाँच यारों ने "टंगा डोली" करके, उसे अजमेर वाली गाड़ी में बैठा गए।

अगली नौकरी उसे डाक तार विभाग में मिली, और उसे ट्रेनिंग के लिए मद्रास जाना था। मित्र मंडली उसने वहाँ भी बना ली, परन्तु उत्तर भारतीयों की, क्योंकि स्थानीय लोग उत्तर भारतीयों व हिन्दी भाषियों से घृणा करते थे। अंग्रेज़ भले ही चले गए परन्तु छोड़ गए, अपने पीछे अंग्रेज़ियत के साथ, बाँटो और राज करो, की नीति भी। दक्षिण भारत के लगभग सभी राजनेता "हिन्दी विरोध", "उत्तर भारत के विरोध" की आँच पर राजनैतिक रोटियाँ सेंकते रहे। डी.एम.के. के एक जुलूस में भगवान राम के चित्र पर चप्पल फेंकी गई। फिर भी लेखक एम.जी.आर. का समर्थक है, क्योंकि उनके शासन काल में हाथ वाली रिक्शा चलाने वालों को हाथों-हाथ आटो

रिक्शा दिये जा रहे थे। जबकि पश्चिम बंगाल की साम्यवादी सरकार पिछले तीन वर्षों में भी ऐसा नहीं कर पाई। लेखक मौजूदा व्यवस्था पर तंज कसता है, कि उद्योगपतियों को अरबों की सब्सिडी देने वाली सरकारें, यदि ऐसे छोटे-मोटे काम कर दें, तो साधारण लोगों की आजीविका कैसी सुगम हो जाय, परन्तु अफसोस कि आम आदमी की फ़िक्र सरकार को पाँच साल, में कुछ दिनों होती है, फिर वह राग-रंग में मस्त हो जाती है।

लेखक दक्षिण भारत में उत्तर भारतीयों के प्रति इस घृणा से अत्यंत व्यथित था। वह अपने मित्रों के साथ कासिचेट्टी स्ट्रीट में होली नमा रहा था, तभी बीस-तीस तमिल गुंडे, डंडे और स्टिक लिये आये, और उसे बुरी तरह पीट गए। उसका गुनाह यह था, कि वह तमिल नहीं बोलता था, वह उत्तर भारत में पैदा हुआ था, उसका यह गुनाह था। हमारे उत्तर भारत के नेता भी इस द्वेष के लिए दोषी थे। उन्होंने दक्षिण-भारत पर राज तो किया, लेकिन उसे अपने साथ नहीं लिया। सत्ता में सम्यक हिस्सेदारी मिलती तो, शायद ऐसा न होता। इसी वैमनस्य के कारण ही तो करुणानिधि ने अलग झंडे की माँग कर डाली थी।

वह यारों का यार था, यारबाश था। तभी तो वह जहाँ भी जाता दूध में शक्कर की तरह घुल जाता। ट्रेनिंग के बाद उसकी तैनाती भीनमाल नामक क़स्बे में हुई, जहाँ उसने विभाग का कार्य करते हुए, क्यों नामक पत्रिका का संपादन किया, कई कहानियाँ, नाटक, नृत्य नाटिका लिखीं, कवि सम्मेलन, काव्यगोष्ठियों में भाग लिया। लेखक इतना व्यस्त होते हुए भी, निरन्तर समाज सेवा को प्रयत्नशील रहा, उसने ग़रीब बच्चों की फ्री कोचिंग की। यहाँ वह साम्यवाद में दीक्षित हुआ, इन्दिरा जी ने "इमरजेन्सी" की हथकड़ी पहना दी देश को।

राजस्थान के इलाके सुमेरपुर और जैसलमेर, जहाँ रेत का निष्कंटक साम्राज्य था, उसके विभाग ने उसे ला पटका। परन्तु अपनी परिस्थितियों से जूझने की अद्भुत क्षमता थी, उसमें। जैसे, वह जैसलमेर वाली ट्रेन में बिना सुराही के बैठ गया। रास्ते में प्यास ने सताया, तो प्लेटफार्म के पास एक झोंपड़ी में रखे आठ घड़े थे, जो ख़ाली थे। प्यास मिटाने का जुगाड़ लगाया, उसने चमचम खाकर। वहाँ के निवासी बड़े जीवट के थे। धूलभरी आँधी "जाँख" पीले, काले, लाल व सफेद रंग की होती थी, और अघोषित कर्फ्यू अपने साथ लाती थी, और कुछ घंटों से लेकर, दो से लेकर सात दिन तक, चलती थी। उन दिनों लोग केवल खिचड़ी खाते, वह भी कंबल ओढ़कर। लकड़ी की भयंकर कमी के कारण कुछ क्षेत्रों में हिन्दुओं की लाशें भी दफना दी जाती थीं। यहाँ उसकी मित्र सूची में स्थानीय कवि मोहन सिंह भाटी जुड़े, वहाँ के एक लोकप्रिय व्यक्ति भाऊस, जो पार्टीशन के दौरान अपनी सारी जायदाद वहाँ बेच आये थे, और ले आये थे, एक अदद हार्मोनियम, और बहुत सा दर्द। हार्मोनियम जो उन्हें जान से भी प्यारा था, हार्मोनियम, जिससे "सब कुछ खोने का दर्द" सुर के रूप में उभरता था।

लेखक की सुहृदयता का यह आलम था, कि टेलीफ़ोन एक्सचेंज में रात की ड्यूटी स्वेच्छा से सँभाल ली। क्योंकि बाकी कर्मियों के साथ उनके परिवार थे। कोई वी.आई.पी. हो या आम आदमी, मूल्यांकन का उसका अपना तरीका था। एक बार जैसलमेर के क़िले में उनकी भेंट प्रसिद्ध निर्देशक सत्यजितराय से हो गई, जो अपनी फिल्म "सोनार केल्ला" की शूटिंग को आये हुए थे। दरअसल, उन्हें यहाँ का सूर्योदय और सूर्यास्त दृश्य बहुत पसंद था। एक आकर्षक व्यक्तित्व के मालिक, श्री राय, परंतु वह यह जानकर आहत हुआ कि हिन्दी को वह दोयम दर्जे की भाषा समझाते थे। उसके बाद वह राय साहब से नहीं मिला।

वह भारतीय संस्कृति के मानव मूल्यों को समझता था, उनसे प्यार करता था। जैसलमेर में एक गोरी, परमसुन्दरी हिल्डा के साथ उसकी प्रणय कहानी प्रारम्भ ही होने वाली थी, कि एक छोटी सी घटना ने उसका दिल चकनाचूर कर दिया। किस्सा कोताह यह, कि हिल्डा की गर्म साँसें वह अपने गालों पर महसूस करता हुआ, फूल कर कुप्पा हो गया था, तभी उसे दो लगातार छींक आँयी। फिर उसने पर्स में रूमाल ढूँढ़ा जो नहीं मिलने पर, उसने घर से आई, भाई या बहन की चिट्ठी से अपनी नाक पोंछी, और उसे गड़सीवर में बहा दिया। रिश्तों की कद्र ये विदेशी क्या जानें ? सोचकर उसका स्वप्नभंग हो गया। आकर्षण के गुब्बारे में पिन सा चुभ गया, और वह फिर हिल्डा से नहीं मिला। कभी वह मगजी होटल में खाना खाता था। होटल मालिक की जवान बेटी जिसकी आँख में फूली थी, उसे बहुत सुन्दर प्रतीत होती थी। सत्य कहा है beauty lies in the eyes of the beholder वह आँख एक कलाकार की आँख ही एक सौन्दर्य प्रेमी रचनाधर्मी की आँख थी। वह तो कमरे में फुदकती, दर्पण में अपने प्रतिबिम्ब से चोंच-युद्ध लड़ती, एक नन्हीं गौरैया पर भी मोहित था, वह उसे भुला नहीं पाया था।

उसने राजस्थान में रेतीले इलाकों की पूर्ण पैमाइश कर दी थी। पाक बार्डर पर बी.एस.एफ. की आख़िरी तंज़ोर चौकी के आस-पास "रेत के टीलों की बस्ती" देख आया था। वहाँ कोई मर जाय, तो कोई गिद्ध, चील, कुत्ता उसे नहीं खाएगा, चुपचाप रेत में दफन हो जाएगा। इस प्रकार से लेखक सीमा पर तैनात जवानों के दुख-दर्द में शरीक हुआ। दुसह परिस्थितियों से जूझते हुए, सुरक्षा-कर्मियों, और स्थानीय निवासियों की जिजीविषा को लेखक सलाम करता प्रतीत होता है। वहाँ के बाशिन्दों का प्रकृति के इस उग्र रूप के साथ सामंजस्य स्थापित कर लेने का भी वह प्रशंसक था।

सुगन्ध को मुट्ठी में बाँधना असंभव होता है, अस्तु वह आजीवन अपनी नौकरियाँ, वस्त्रों की तरह बदलता रहा। टेलीफ़ोन विभाग के बाद वह हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड में राजभाषा अधिकारी नियुक्त हुआ। उसके लिए सर्गी पिल्ली की यात्रा के दौरान उसने हमें अपने अद्भुत जीवन से परिचित कराया। पत्नी, बहनों और बच्चों सहित जिस जीप में था, वह इच्छा नाले में फँस गई। जीप पैंतालीस डिग्री पर आगे को झुक गई। जीप में तेज़ी से पानी भरने लगा, सभी लोग डूब जाते। परन्तु उसने हार नहीं मानी संघर्ष शीलता का परिचय देते हुए स्वयं व परिवार को सुरक्षित निकाल

लिया। जो अपनी सहायता करता है, ईश्वर और प्रकृति भी इसकी सहायता स्वयं करती है। वहाँ फिर देवदूत बनकर महापात्र बाबू आये, जिन्होंने उनकी हर संभव सहायता की। आजकल तो सन्तान, माता-पिता, व गुरु तक के उपकारों का शुक्र नहीं मनाती। परन्तु वह नाशुक्रा नहीं था, जिसने भी उपकार किया, तो धन्यवाद देना नहीं भूला। महापात्र बाबू की प्रशस्ति में उसने कहा कि अगर इस दुनिया में सौ, दो सौ महापात्र बाबू हैं, तो इससे अच्छी जगह कोई नहीं हो सकती।

गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं, कि धीरज, धर्म, मित्र और नारी की परख, अपातकाल में ही होती है। वह तक चन्देरिया, रामपुरा और नागौर की खानों का सर्तकता अधिकारी था। एक दिन उसकी मोटरसाइकिल डिवाइडर से टकरा गई और उसकी दोनों कलाइयों में "मल्टीपिल फ्रैक्चर" हो गए थे। यहाँ उसके मित्र भाटी जी रोज़ दवाई और फल लाते रहे, सेवा करते रहे। यहाँ तक कि वह सिगरेट जलाकर लेखक के होंठों पर लगा देते और "अलबेला धूम्रपान" सम्पूर्ण होता। अपने इस मित्र पर भी वह जान छिड़कता था। इसी अस्पताल में एक सुन्दर नर्स ने भी उसकी बहुत सेवा की। उस ममतामयी को याद करते हुए, उसने कहा कि चाहें आप दुनिया के बीस चक्कर लगा लें, करोड़ों-अरबों कमा लें, खूब तरक्की कर लें, लेकिन अन्तत: आप का शरीर एक करुणामयी नर्स के हवाले हो जाता है। संभवत लेखक की यह स्वीकारोक्ति पुरुष की स्त्री के प्रति निर्भरता उद्घाटित करती है। यों प्रकृति ने स्त्री-पुरुष एक दूसरे के पूरक बनाये हैं।

लेखक मार्क्सवादी था, ईमानदार था, और अपने साथ प्रेम-प्यार की भागीरथी लिये फिरता था, अस्तु उसे स्थानीय यूनियन के प्रान्तीय सचिव के पद का ऑफर दिया गया। खानों की यूनियनों के कार्यकलाप व व्यवहार को करीब से देखने का अवसर मिला, उसे। अन्दर की कई बातें उजागर हुई। पटेल नामक यूनियन लीडर, बहुत बड़ा कामचोर था, और दूसरे कामचारों का हिमायती था। श्रमिक नेता नहीं, वह मैनेजमेन्ट का दलाल था। उनका आचरण सीधे-सीधे मध्यवर्गीय दल्लागिरी, जो ट्रेड यूनियन के नाम पर देश में चली है, और जिन्होंने जनता के धन से खड़े प्रतिष्ठानों में "श्रम संस्कृति" का सत्यानाश किया है। उन दिनों एल.टी.सी में संबंधित घपले चल रहे थे। राणावत जी से मित्रता हुई, और वह उनके और अन्य कर्मचारियों के साथ एल.टी.सी. को चल दिये। यात्रा के दौरान वह वैष्णोदेवी, हिडम्बा मंदिर में नास्तिक होने के कारण नहीं गया। साथी यह देखकर, उससे दूर हो गए थे। लेखक स्वयं से प्रश्न करता है, कि क्या एक कहानीकार को देश के सामान्य नागरिक के स्वभाव से परिचित नहीं होना चाहिए ? क्यों बंगाली कामरेड छुप-छुप कर काली पूजा करते हैं ? अपने साथियों के ढोंग से विक्षुब्ध लेखक लिखता है, कि हर देश की जनता को वैसी ही सरकार मिलती है, जिसके वह लायक होती है। लाख टके की बात कहता है, कि "सत्ता हमें भ्रष्ट करती है और चरमसत्ता, चरम भ्रष्ट"।

एक बार लेखक ने सांस्कृतिक गतिविधियों के अन्तर्गत शिव-पार्वती विवाह का मंचन करवाया। एक लम्बे-चौड़े, सुन्दर ईसाई युवक को शिव और बाहरवीं की एक छात्रा को पार्वती का रोल मिला था। लेकिन देखिये किस्मत की खूबी कि दोनों में इश्क़ हो गया, और दोनों ने भागकर शादी कर ली। इस बात पर टिप्पणी के रूप में एक और सूक्त वाक्य लेखक की कलम से, कि स्टेयरिंग पर कंट्रोल न हो, तो ड्राइवर सीट पर मत बैठो।

कबीर की तरह मस्तमलंग, घुमक्कड़ नंबर एक था, लेखक। फ़र्क बस इतना था कि कबीर आस्तिक थे, और उन्होंने जुलाहे का पेशा आजीवन निभाया, जबकि लेखक नास्तिक था, और उसने अपने पेशे कपड़ों की तरह बदले थे। तो चित्तौड़गढ़ क़िले पहुँचने पर लेखक के ज़ेहन में प्रश्न उभरा कि क्या बीस हजार छत्राणियों ने रानी पद्मिनी संग जौहर किया था ? यदि इतनी संख्या में छत्राणियाँ ख़ाली हाथ भी दुश्मनों पर टूट पड़तीं, तो बहुत कुछ कर सकती थीं ? दरअसल, यह राजपूतों का एक हताशा भरा क़दम था। एक सवाल और कि क्या हल्दीघाटी युद्ध केवल डेढ़ घण्टे में समाप्त हो गया था ? हल्दीघाटी और राणा प्रताप को महिमंडित करना, क्या इसी कारण था ?

देश के लोकतंत्र में हल्ला मचा, कि सार्वजनिक क्षेत्र का प्रबंधन अकुशल है। सरकार ने बाकायदा एक "विनिवेश मंत्रालय" बना दिया। बिडम्बना यह, कि हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड का आर्थिक मूल्याँकन करने के लिए, देशी नहीं विदेशी (पैरिस की) कम्पनी को ठेका दिया गया, और इस प्रकार जनता के खून-पसीने की कमाई से बनी, एक गौरवशाली कम्पनी मिट्टी के मोल बेच दी गई। कम्पनी से वी.आर.एस लेते समय लेखक का हताश स्वर था, कि पच्चीस साल पुरानी, एक कमाऊ कम्पनी दिन दहाड़े लूट ली गई, जिस तत्कालीन बी.जे.पी. सरकार को वामपंथियों और काँग्रेसियों का मूक समर्थन था, तीनों इस लूट में हिस्सेदार थे। यक़ीनन, यह एक बड़ा खुलासा था। बड़ा और कष्टप्रद भी।

अन्तत: वह सारी व्यवस्था पर एक निर्णायक, घातक प्रहार करता है, कि विचारधाराओं की व्यवहारिक राजनीति में कोई प्रासंगिकता नहीं रही है। दक्षिणपंथ और वामपंथ में कोई फ़र्क नहीं रह जाता, अर्थात् राजनीति की कोठरी में घुसने के बाद कोई दक्षिणपंथी हो, या वामपंथी, "पर एक लीक काजर की लागिर है, पै लागि हैं।" वह अपने नसीब में दोस्ती की बेशुमार दौलत लेकर आया था। घुमक्कड़ इतना कि बम्बई, मद्रास, मीनमाल, जैसलमेर, सुमेरपुर (राजस्थान), सर्गीपल्ली (उड़ीसा) लगभग आधा हिन्दुस्तान घूमा था। वह खालिस मार्क्सवादी था। और इतने बड़े दिल का मालिक भी था, कि स्वयं अपनी और मार्क्सवाद की कमियाँ/ नाकामियाँ/ भटकाव आदि जो भी अनुभव किये, स्वीकार किये।

उसके दिमाग़ की सारी खिड़कियाँ खुली थीं। वह गिरता भी था, तो सँभल भी सकता था, और सँभलता ही नहीं शिखर पर भी विराजमान हो सकता था। यह एक आम आदमी की संघर्षगाथा है।

000

पुस्तक समीक्षा

सुरंग में लड़की
(कविता संग्रह)

समीक्षक : हरिराम मीणा

लेखक : राजेन्द्र नागदेव

प्रकाशक : कल्पतरु प्रकाशन

हरिराम मीणा
31 शिवशक्तिनगर, किंग्स रोड, अजमेर हाई-वे, जयपुर-302019
मोबाइल- 9414124101
ईमेल- hrmbms@yahoo.co.in

जल ही जीवन है किंतु 'नदी अब नहीं बहती'। 'जल/ जलकर आकाश में घुल गया / बहुत तड़पा होगा जलने से पहले जल।' (पृष्ठ-९) 'नदी का जल पी पीकर जीती रहीं सभ्यताएँ / सभ्यताओं को पालती पोषती रही नदी।' (पृष्ठ-१२) कवि कहता है-'मेरा बचपन नावों में अब भी तिर रहा है / मैं लौटना चाहता हूँ नदी किनारे...'(पृष्ठ-१२२) 'मछुआरे' रचना में नदियों के सूखने का दृश्य फिर उभरता है-'अनजानी दिशाओं से लौट रही है नावें / थकी-हारी / मच्छियों से भारी / और मच्छियों से ख़ाली।' (पृष्ठ-४२) कवि विवश हो जाता है यह कहने के लिए कि 'सूखे में नहीं आता ईश्वर।' ('सूखे में ईश्वर' पृष्ठ-४४) कहा जाता रहा है कि भगवान के घर में देर हो सकती है, अंधेर नहीं। यह भी कि ईश्वर मन्नतें पूरी कर देता है। कवि का अनुभव भिन्न है, इसीलिए वह 'सूखा' शीर्षक वाली कविता में कहता है कि 'हे ईश्वर! तुम्हारी कृपा की आशा में उस दिन / जितना जल हमने चढ़ाया था तुम पर / उतना जल कम से कम लौटा दो हमें।' सूखे जैसे हालात के लिए ईश्वर ज़िम्मेदार है अथवा नहीं और सवाल यह भी कि ईश्वर जैसा कोई तत्व है भी या नहीं? यह बात अवश्य तय है कि मनुष्य ने प्रकृति के साथ अनावश्यक छेड़खानी जारी रखी तो उसका यह कृत्य ग्लोबल वार्मिंग के आगे निश्चित रूप से अग्नि-प्रलय का कारण बन जाएगा! कवि को आभास हो रहा है कि 'हम पृथ्वी पर अंडे को सदा तलते रहे / कैसी विडंबना है / यह अंडा (सूर्य) अब पूरी पृथ्वी को तल रहा है।' ('सूर्य' नामक कविता से पृष्ठ-५१) 'नदी में सारंगी'कविता की पंक्तियाँ देखिये-'अंधकार में उदास सारंगियाँ / समय में शेष / सारंगी भर पुराना समय / झोले में उँडेलता है।'(पृष्ठ-२५)

चिड़िया संवेदनशीलता की प्रतीक है। जब जीवन में से संवेदनशीलता सूखती चली जाए तो स्वाभाविक है चिड़िया का कविता में बार-बार आना। लोगों को लगता है 'कि कविता में चिड़िया / अपने कोटे से अधिक आ गई।' ('चिड़िया और कविता' पृष्ठ-४९) 'चिड़िया वापस आई' में भी कवि की मूल चिंता अभिव्यक्त होती है जहाँ चिड़िया को घोंसला बनाने के लिए वृक्ष, पत्ते और घास तक का टोटा पड़ गया है। विवश होकर उसे अख़बार की कतरनें और पोलीथिन के टुकड़ों से घोंसला बनाना पड़ गया है। 'शहर में चिड़िया' में चिड़िया के बच्चों के लिए खाना नहीं मिलने की त्रासदी का चित्रण है। 'चिड़िया की प्यास' रचना में कवि की चिड़िया के नसीब में अब केवल सूखा पेड़ और प्यास है। सूरज रूपी पूँजीवाद चिड़िया ही नहीं प्रत्युत सम्पूर्ण मानवता का पानी सोखता चला जा रहा है। इस संग्रह में कवि की चिड़िया जीवन और संवेदना का प्रतीक है, जिसके लिए संकट का दौर है। वह विलुप्ति के कगार पर है। कवि का स्वर-'मैं इस सदी का आदमी / प्रार्थना करता हूँ चिड़िया की वापसी के लिए।' (पृष्ठ-९३)

पृथ्वी के आभूषणों में सबसे सुन्दर फूल होता है। अब तो फूल केन्वास पर भी नहीं उतर पा रहा! नागदेव का कवि फूल को केवल महसूस करने को विवश हो गया- 'मुझे नहीं मालूम / महसूसने के पलों को हुबहू कैसे उतारा जाता है केन्वास पर।' (पृष्ठ-६०) समय बहुत तेज़ी के साथ बदल रहा है। कविता में 'बूढ़ा पीपल' अंतिम साँसें ले रहा है उसके 'पत्ते झेल रहे थे / अजीब इलेक्ट्रॉनिक नामों वाले / इक्कीसवीं सदी की आँधियों के थपेड़े...'(पृष्ठ-११५) यह ऐसा वक्त है जब देश-दुनिया को बर्बाद करते जा रहे सत्तालोलुप मानव-तत्वों द्वारा नैतिकताओं, अवधारणाओं, सिद्धांतों और शब्दों की नई नई व्याख्याएँ की जाने लगी हैं। इस समस्त वातावरण को कवि ने गागर में सागर भरने की नाईं इस पंक्ति में समेट दिया है-'इस युग के बड़े-बड़े सत्य असुंदर हैं।' (पृष्ठ-११७)

'अपनी एक सुबह' में एक नितांत काली बंजारन / अपना तम्बू काँधे पर उठा/आकाश को ख़ाली कर अभी-अभी गई है। (पृष्ठ-१५) अवसर लूट ले मालिक वही। 'डार्विन बताते हैं / बंदर का डी.एन.ए. उन्होंने / पीढ़ी दर पीढ़ी नली से /मनुष्य की देह में उतरते देखा है.....मैं बंदर को उधेड़ आदमी को बुन रहा हूँ।' अवसरों की यह लूट आज की नहीं है। इसका बाक़ायदा एक

इतिहास है, इसकी योजना रही है, इसका ढाँचा अब तक कमज़ोर नहीं हुआ है। कई दफा सृजन के लिए विध्वंस अनिवार्य हो जाता है। कवि का आह्वान है कि ऐसे ढाँचा को नष्ट करने के लिए ज़रूरी है 'सूर्य गिरे लड़खड़ा कर कहीं' और 'अँधेरा....अँधेरा / शांति.....शांति.....शांति', ताकि 'सदियों से खड़ा / चार खण्डों का अक्षत पिरामिड......(जिसके) तलघर में / शोषितों का अनसुना आर्त्तनाद घुट रहा हो, ऐसे पिरामिड का ध्वंस अनिवार्य।' ('मुर्दों का गाँव' कविता से)

आज हम जिस दौर में जी रहे हैं वह असमंजस, अविश्वास, आशंकाओं, अनिश्चितताओं, भय, चिंता वगैरह-वगैरह का है। बहुत कम स्पेस बचा है सुकून का। चाहे 'बैठ सकते हैं बरामदे में / चाय के साथ पीते हुए अख़बार / जबकि हम नहीं जानते / अख़बार के पीछे की हवा / कब हथियार में बदल जाए।' (पृष्ठ-३०) यह वक्त है जब 'दर्पण की तरह टूटा आदमी / भूत से अब वर्तमान की यात्रा पर है / अत्यंत त्रासद, अत्यंत लंबी है वापसी / पगडंडी जबकि वही।' (पृष्ठ-१२५) मानवता की राह तो आख़िर एक ही होती है। हमारा दुर्भाग्य है कि उस राह को त्याग दिया जा रहा है। इस कठिन समय में 'कहीं कुछ ग़लत हुआ' जान पड़ता है और सवाल उठ खड़ा हुआ है कि 'कहाँ चले गए उस बस्ती के लोग? जो धुआँ उठ रहा है / उसमें रोटी की गंध नहीं है।' (पृष्ठ-९२) अन्य कविता में कवि संकेत दे रहा है- 'लुटेरे बस्ती में आ गए लगता है।' (पृष्ठ-१०८)

'मोमबत्तियाँ' नामक कविता में कवि के ज़हन में कहीं न कहीं शायद कोई ऐसी घटना की स्मृतियाँ हैं जिसमें किसी सड़क-पुल के निर्माण में हुई भयंकर गड़बड़ी के खिलाफ एक इंजिनियर आवाज़ उठता है तो उसे बुल्डोजर के नीचे कुचल दिया जाता है। सत्य की सौगंध खाकर मिथ्याचार-भ्रष्टाचार-अनाचार करने वाले राजनेता-अफसर-ठेकेदारों का 'रोडरोलर तभी बहकता है / सामने जब / कोई ईमानदार नज़र आता है।' कवि को पूरी आशंका है कि 'कितनी अँधेरी हो जाएँगी बस्तियाँ / जब मुट्ठी भर उजाले के लिए / एक छोटी मोमबत्ती तक नहीं मिलेगी।' (पृष्ठ-३९)

पृथ्वी के भविष्य को लेकर कवि बार बार चिंता व्यक्त करता है। 'प्रलय से पहले' कविता में वह लिखता है-'सफ़ेद कबूतर थे कभी / पंखों के बीच सहेज रखते थे पृथ्वी को।' आज 'प्रलय से पहले / रच रहे हैं लोग पृथ्वी पर प्रलय होने का ट्रेलर।' एक तरफ नन्हा सा कबूतर और दूसरी ओर ख़तरनाक मनुष्य। फिर क्या ईश्वर से उम्मीद कोई जाए? मगर 'इतने सारे ईश्वरों के होते / असहाय है धरती / या उनके होने से है।' कवि का स्पष्ट संकेत है कि आज मनुष्य ने ईश्वर को पृथ्वी के विध्वंस का हथियार बना लिया है। (पृष्ठ-१०१) कवि जब जब पृथ्वी के बारे में सोचता है, उसके 'सामने प्रलय ही आता है', इस मनोदशा के पीछे 'अपार हैं पृथ्वी के दु:ख' और इसीलिए कवि विवश है इस आह्वान के लिए कि 'मैं अपनी पृथ्वी के लिए दयामृत्यु चाहता हूँ।' (पृष्ठ-३६) कवि के लिए यह 'दयामृत्यु' पृथ्वी के अंत की इच्छा नहीं होकर उसके ऊपर फैला दी गई क्रूरताओं के अंत का आह्वान है। यहाँ मुझे नबारुण भट्टाचार्य की बांगला कविता याद आ रही है जिसका हिन्दी शीर्षक ही 'यह मृत्यु उपत्यका मेरा देश नहीं' है। वे कहते हैं-'ढँक दो पृथ्वी की गंध से उस सबको / जिसने यह मृत्यु उपत्यका बनायी / मेरी धरा हत्यारे का मंच नहीं हो सकती / मेरी धरा विराट् श्मशान नहीं हो सकती / मेरी धरा रक्तस्नात वधस्थल नहीं हो सकती, कदापि नहीं!' इसी भाव की एक कविता है 'प्रलय', जिसकी अंतिम पंक्तियाँ इस तरह हैं- 'धीरे धीरे रेंगती आती तकलीफ़देह मृत्यु से / अच्छी होगी अकस्मात् आ गई पृथ्वी की मृत्यु।' (पृष्ठ-९६) पृथ्वी के सामने युद्ध का संकट सदैव मँडराता रहा है। युद्ध की विभीषिका ने सबसे अधिक त्रासदी पहुँचाई है वृद्धों, महिलाओं और बालकों को। युद्ध से तो सैनिक भी तंग आ जाता है। राजेन्द्र जी का कवि इस समस्या को 'बच्चों मैं आ रहा हूँ' शीर्षक की कविता से अभिव्यक्त करता है- 'मेरी हथेलियों में बंदूक उठाते-उठाते हो गए घाव / मुझे आना है घर / कुछ घावों का इलाज अस्पताल में नहीं होता।' (पृष्ठ-१११) यह रचना बेहद मार्मिक है।

चाहे कितना भी अंधकार हो, कवि के भीतर कविता का 'अंगारा' है। और उस अंगारे को बुझाने के लिए दुश्मन के कब्ज़े में पूरा समुद्र ही क्यों हो, 'मैं सदियों से सुलग रहा हूँ मौन / सदियों तक और सुलगते रहना / मुझे स्वीकार नहीं अब, मैं लपटों में बदलने को आकुल / मुझे बस थोड़ी सी हवा चाहिए।' (पृष्ठ-३२) अंगारे में तो बड़ी ताक़त होती है, हमारे कवि राजेन्द्र जी के रचना संसार में तो अंगारे का कण ही क्या, उसका प्रतीक जुगनू प्रचंड ज्वाला भड़का सकता है। मन के काले लोग उनके पुरखों द्वारा रचित इतिहास के काले अध्यायों को ही उजागर रखना चाहते हैं ताकि जनसाधारण को काला भी उजला-सा दिखाई देता रहे। ऐसे कृष्णवर्णी छद्म उजास को बेपर्दा करने में अग्नि का आभासित अस्थिर (चल) कण अर्थात् 'जुगनू' भी काली सत्ता के लिए ख़तरा है। तभी कवि कहता है कि 'माना गया / जुगनुओं की दीप्ति चिंगारियों में / और चिंगारियाँ बदल सकती थीं अग्नि में / अग्नि इतिहास के कई पृष्ठ लील सकती थी / जुगनुओं का मारा जाना इसलिए ज़रूरी था।' (पृष्ठ-६२) हमें कभी छोटे को कमज़ोर नहीं समझना चाहिए। यह छोटों के प्रति हमारा घटिया नज़रिया है। 'परिंदे का मामूली दिखना नज़र का मामूली होना है।' (पृष्ठ-६६) 'बच्चे' शीर्षक कविता में 'सब कुछ टूट-बिखर' जाने के हालात के बावजूद बालसुलभ अ-मलिनता से भूमंडल को महकाने की उम्मीद कुछ इस तरह से है -'अपने हाथों रची अपनी ही चिता पर सोई दुनिया को / चिता से उठा लोगे एक दिन....' यह पंक्ति ध्यान आकर्षित करती है-'ज्ञान-ध्यान, दर्शन, धर्म, विज्ञान / मेरे बच्चे! निकष पर परखे जा चुके / तुम्हारी अबोध निश्छलता ही अब / बचा सकेगी दुनिया को।' (पृष्ठ-३४) 'इसी पल' कविता में यह पंक्ति है, जिसे मैं सलाम करता हूँ-'कोई शाम देर तक शाम नहीं रहती'। (पृष्ठ-६५) सलाम करने की एक मात्र वज़ह यह है कि मेरी भी एक कविता का भाव यह है कि 'कोई

भी रात कितनी ही काली, लंबी और भयानक क्यों न हो, उसका भी सवेरा होता ही है।' अगर दुनिया में विकृतियाँ पैदा हो गई हैं तो रात की भाँति 'दुनिया थम जानी चाहिए' ताकि सवेरा हो और 'नए आदमी के नए अंकुर / नई मिट्टी में जन्में फिर।' (पृष्ठ-१०७)

'कविता की किताब'रचना में कवि कहता है-' जब जब उठाता हूँ यह किताब / पगडंडियों के उलझे हुए जाल में चला जाता हूँ (पृष्ठ-२१)और 'उलझनें ही उलझनें / सुलझाने के सूत्र कवि के पास होंगे।' (पृष्ठ-२३) 'मैं कवि नामक जीव के / मस्तिष्क और मन की शल्यक्रिया कर / देखना चाहता हूँ / कहाँ है कविता का मूल?' इस प्रश्न का उत्तर आगे मिलता है। ज़िंदगी के संघर्षों से जूझने की कविता है 'जंग'। ये जंग-जुझारू 'पीते रहे पीड़ा / क्योंकि पीने के लिए / कुछ अन्य बहुत कम था' इनके पास। जंग भी वैसी जैसे 'कई जंगों के परिणाम साफ़ नहीं होते' (पृष्ठ-७३) कवि का यह लड़ाकू और कोई नहीं, बल्कि साधारण मनुष्य हैं जो 'जन्मसिद्ध अधिकार' कविता में 'जीना चाहते थे एक सीधासादा जीवन'..../ दाल-रोटी, थोड़ा-सा नमक / एक हरी मिर्च, थोड़ा-सा पानी / और छत हो सर पर'। 'सुना है स्वतंत्रता / जन्मसिद्ध अधिकार है मनुष्य का / होगा(!) / उससे पहले मनुष्य होने का अधिकार हमें / कौन कब देगा?' कविता की जंग हमेशा से यथास्थिति को तोड़ने के लिए जारी रही है। दूसरी तरफ यथास्थितिवादी ताक़तें उस जंग को हराने के लिए पहले से तैयार रहती आई हैं। ताक़तवर जानता है कि 'क़लम की नोक में बाकी है अभी अणु बराबर सूरज' जो भस्म कर सकता है। कवि चश्मदीद है इस घटना का जब 'एक कलम की हत्या हुई है कल।' इस कविता शीर्षक भी 'हत्या' ही है। (पृष्ठ-९७)

धरना, समय से बाहर, किराये का घर, अवकाश, बीच संवाद में, रामनरान, जिनके घर नहीं होते, नई पुस्तक, उम्मीद, बिका हुआ घर, अकेली शीर्षक से अन्य कविताएँ भी इस संकलन में सम्मिलित हैं, जो पाठक का ध्यान आकर्षित करती हैं।

अंत में मैं इस संग्रह की शीर्षक-कविता 'सुरंग में लड़की' को रेखांकित करना चाहता हूँ जो मुझे सबसे मार्मिक और प्रभावशाली लगी। इस रचना की शुरूआत यूँ होती है-'मुझे नहीं मालूम था / कि कोई पीड़ा इतनी सघन होती है...../ अकेली उस अँधेरी सुरंग में कैसे गई होगी...' फिर कविता में आत्महत्या की प्रक्रिया का वर्णन है 'लड़की ने दुपट्टा उठाया पहले / मरोड़ कर उसे फिर रस्से का आकार दिया / घूमते पंखे का स्विच बंद किया / यह हरा संकेत था किसी यात्रा का.....(पृष्ठ-२८) 'और फिर स्युसाइड नोट 'पापा, क्षमा करना / अस्सी प्रतिशत अंक ही ला सकी / अगले जन्म में नब्बे की कोशिश करूँगी।' 'हमने सुरंग के मुहाने से झाँक कर देखा / दो छोटे छोटे कोमल पाँवों के निशान थे दूर तक जाते...' (२९) दुविधा या विडंबना की जगह कहना चाहिए कि यह हमारे वक्त की सबसे बड़ी त्रासदी है कि किशोर और युवा पीढ़ी को बहुआयामी व्यक्तित्व निर्माण की जगह किस कदर भौतिकवादी राह पर धकेला जा रहा है, जहाँ आधारभूत मानवीय मूल्यों को तिलांजलि देते हुए बस एक मात्र ध्येय और विकल्प उसके सामने रख दिया है कि किस तरह से अधिकाधिक धन कमाया जाए? 'हाउ मच पैकेज' के पीछे भागती नई पीढ़ी देश-दुनिया के बहतर भविष्य के लिए अपनी भूमिका कैसे निभा पायेगी, जब हम उसके ऊपर प्रतिस्पर्द्धा में प्रथम स्थान प्राप्त करने के लिए भारी मानसिक दबाव थोपे जा रहे हैं, जिसे वह सहन नहीं कर सकती और आत्महत्या के लिए विवश हो जाती है!

संग्रह की सभी रचनाएँ समय के सच को अभिव्यक्त करने में सक्षम हैं, हमारे इर्द-गिर्द पसरती जा रही दुविधाओं, विडम्बनाओं, विरूपताओं, क्रूरताओं और त्रासदियों की परतें उधेड़ने में सफल हुई हैं। मैंने कविता को लेकर मेरी बौद्धिक क्षमता की सीमाओं में इन कविताओं पर अपनी यह टिप्पणी अंकित की है। बहतर भविष्य के विकल्प हेतु रचित इन संदेशवाही कविताओं के लिए राजेंद्र नागदेव जी को बधाई।

000

नई पुस्तक

कुहासा छँट गया

(कहानी संग्रह)

लेखक : ममता त्यागी

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

अमेरिका में रहने वाली हिन्दी लेखक ममता त्यागी का यह पहला ही कहानी संग्रह है, जो शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आया है। इस संग्रह में कुहासा छँट गया, लॉकेट, पुनर्जन्म, तिरस्कार की भरपाई, ममता की कशिश, सम्बल, और वह लौट आया, ब्रांडेड कपड़े, पुनर्मिलन, अमावस का चाँद, पित्रऋण कहानियाँ संकलित हैं। अलग-अलग विषयों पर आधारित इन कहानियों को ममता त्यागी ने बहुत रोचक अंदाज़ में लिखा है। अपनी कहानियों के बारे में वे स्वयं कहती हैं- ज़िंदगी के अनुभव से जो सीखा, जो पाया उसे एक बार फिर लेखन में ढालने का प्रयास आरम्भ करने लगी। अमेरिका आकर बसने के उपरांत अपने परिवार के प्रोत्साहन और आत्मबल से मेरी लेखनी गतिमान होने लगी। मेरी अनुभूतियाँ, मेरी कल्पनाएँ और भावनाएँ पंख लगाकर उड़ान भरने लगी और कहानियों का रूप लेने लगीं। मेरी कहानियों के पात्र सभी मेरे अपने हैं, मेरे बहुत क़रीब हैं। इन्हें बहुत नज़दीक से मैंने जाना है, इनके पलों को इनके साथ साथ जिया है।

000

केंद्र में पुस्तक

खिड़कियों से झाँकती आँखें

(कहानी संग्रह)

समीक्षक : अशोक प्रियदर्शी, डॉ. मधु संधु

लेखक : सुधा ओम ढींगरा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सीहोर, मप्र

अशोक प्रियदर्शी
एमआईजी 82, सहजानंद चौक
हरमू हाउसिंग कॉलोनी
राँची, 834002, झारखंड
मोबाइल- 9430145930

डॉ. मधु संधु
13, प्रीत विहार, आर. एस. मिल,
जीटी रोड, अमृतसर
पंजाब 143104
मोबाइल - 8427004610

प्रवासी भारतीय और अमेरिकी जीवन का कलाइडोस्कोप

अशोक प्रियदर्शी

मेरे हाथों में सुधा ओम ढींगरा जी का नया कहानी-संकलन है- 'खिड़कियों से झाँकती आँखें'। मुझे लगता है, सुधा जी भारत और अमेरिका के बीच एक सेतु बनाती हैं। प्रवासी भारतीयों के अमेरिकी जीवन से हमें परिचत कराती हैं और बिना किसी पूर्वाग्रह के अमेरिकी जीवन के सफेद-स्याह पक्षों से हमें परिचित कराती हैं। ये कहानियाँ बतलाती है मूलत: व्यक्ति की संवेदनाएँ, उसकी खुशियाँ, उसकी अपेक्षाएँ एक जैसी होती हैं। चाहे वह भारत में रहे या अमेरिका में रहे।

सुधा जी के पास सधी हुई कथा-भाषा है। कहानियों की बुनावट ऐसी है कि लंबी होने के बावजूद कथा के तिलिस्म में पाठक बँधा रहता है। कभी-कभी आश्चर्य होता है कि अमेरिकी जीवन की बहुविध व्यस्तताओं के बावजूद प्राय: नियमित अंतराल पर इनकी कथा-पुस्तकें कैसे आ जाती है। बहरहाल, प्रस्तुत संकलन में कुल आठ कहानियाँ हैं। भिन्न-भिन्न रंगों वाली, भिन्न-भिन्न स्थितियों प्रसंगों वाली। पहली कहानी 'खिड़कियों से झाँकती आँखें' वृद्धजनों की उस पीड़ा और संवेदनशीलता से हमारा परिचय कराती है। जो भारत और अमेरिका में प्राय: समरूप है। हाँ, यह स्वीकार करना चाहिए कि वरिष्ठ नागरिकों के लिए जो सुविधाएँ अमेरिका में हैं, वे हमारे देश से बहुत आगे और बहुत बेहतर हैं। कहानी सिर्फ इतनी है कि डॉ. सागर मलिक बेहतर आमदनी की आशा में अमेरिका आ जाते हैं। क़र्ज़ लेकर भी, जिसे रंजीडेंसी के दौर में उन्होंने उतार दिया है। एक क़स्बाई हॉस्पिटल से बुलावा आता है। डॉ. सागर मलिक वहाँ ज्वाइन कर लेते हैं। डॉ. डेविड स्मिथ ने उनसे कहा कि व्हाय यू हैव कम हियर टू गेट ओल्ड। इस अस्पताल में सिर्फ उम्रदराज मरीज़ आते हैं। बल्कि अस्पताल और इस सबके बीच में कोई युवा दिखता नहीं। डॉ. सागर ने अपार्टमेंट भी नज़दीक वाला लिया है। वहाँ वे जाते हैं तो लगता है जैसे हर अपार्टमेंट से आँखें उन्हें तक रही हैं। और उन्हें लगता है, ये आँखें उनकी पीठ से चिपक सी गई हैं। वे अपार्टमेंट बदलना चाहते हैं। शुक्र है उस दिन कार्यालय बंद है। और अस्पताल से जब वे लौटते हैं तो उनके दरवाज़े के आगे तीन बैग पड़े हैं। एक बैग में लगी स्लिप पर लिखा है- हमारे पड़ोस में आपका स्वागत है। बैग में फ्रूट केक हैं। '1130 फ्लैट'। दूसरे बैग पर हिन्दी में लिखा है- तुम हमारे बेटे जैसे हो। बैगों में वड़ा रसम और इडली सांभर है।– रेड्डी दंपत्ति, 1132। डॉ. रेड्डी के साथ टॉम और सू, ऐमा और पीटर, इसाबेल और डिक सब मिलने आते हैं। रिक और रकैल स्टिक पकड़ कर आए। डॉ. रेड्डी ने बताया, वे 95 साल के हैं, पर अपने सब काम करते हैं।मिलकर सब वापिस चले गए पर रेड्डी दंपति उसके घर में बैठ गए। मिसेज़ ने कहा मैं सर्व करती हूँ, तुम खाओ। डॉ. मलिक पूछ बैठते हैं- आपका बेटा कहाँ रहता है ?। वे भीग जाते हैं- बेटा पेरिस में रहता है। फ्रेंच लड़की से शादी की है। ..आदि..आदि- यानी ये इलाक़ा बूढ़ों का है। क्योंकि युवा एक-एक कर अपने माता-पिता को छोड़कर चले गए। बूढ़ों की झाँकती आँखें डॉ. मलिक में अपने बेटे को देख रही हैं। अपने यहाँ भी अपनी पसंद की शादी के बाद प्राय: बच्चे परिवार से संपर्क नहीं रखते। करुण है यह कहानी। इस कहानी के थोड़े विस्तार में इसलिए गया कि इसी कहानी के शीर्षक को सुधा जी ने पुस्तक का नाम दिया है। स्पष्ट है, इस कहानी के महत्त्व को वे भी मानती हैं।

संकलन की दूसरी कहानी हैं 'वापसी' यह सुनने में चाहे बुरा लगे किन्तु होता यही है कि भोले पति को उसकी पत्नी स्वार्थी बनने का मंत्र देती है। बड़ा भाई है शंकर देव और उसकी पत्नी है उमा। छोटा भाई है हरि और उसकी पत्नी है सुलभा। हाँ दो और भाई हैं नरेन्द्र, सुरेन्द्र। नरेन्द्र और

हरि में बड़ा स्नेह रहा है। नरेन्द्र ने हरि को सदैव प्रेरित किया है। अर्थाजन के लिए अब हरि अमेरिका आ गया है। एक कठिनाई यह है कि अमेरिका में डॉलर कमा रहे व्यक्ति का पैसा घरवालों को बहुत ज़्यादा मालूम पड़ता है। क्योंकि वे रुपयों में उसकी आमदनी का हिसाब करते हैं। जबकि अमेरिका में डॉलर में ही खर्च करना होता है। ख़ैर ! शंकर माता-पिता के लिए घर बनवाने के लिए हरि से पैसे माँगता है। सारी कठिनाई के बावजूद वह पैसे भैजता है। फिर स्थिति ऐसी बनती है कि हरि को सपत्नीक भारत आना पड़ता है। शंकर ने घर माँ-बाप के नाम पर नहीं, खुद के और हरि के नाम पर करवाया है। और अब वह घर बेच रहा है। हरि विरोध करना चाहता है। पर उसकी पत्नी कहती है कि निरर्थक विरोध क्यों ! घर बिक जाता है। हरि को उसके हिस्से के पैसे मिल गए हैं। हरि चेक लेकर भाई से कहता है- किसी रियल स्टेट एजेंट के पास ले चलो, माँ-बाबा के लिए घर लेना है। घर सिर्फ उनका होगा, उस पर उनके किसी बच्चे का हक नहीं होगा।

'एक ग़लत कदम' एक ग़लत कदम कहानी अमेरिका में बस गए एक भारतीय परिवार की कहानी है, जो बतलाती है कि विजातीय या विदेशी होने से कोई संस्कारहीन नहीं हो जाता। शुक्ला दंपत्ति के बेटे शरद ने अमेरिकी युवती जैनेट से विवाह किया है। इसलिए पिता-माता ने उससे संबंध तोड़ लिया है। बाक़ी बच्चों ने वृद्ध माता-पिता को नर्सिंग होम में डाल दिया है। वहाँ का ओल्ड एज होम। यह बात शरद-जैनेट को पता लगती है तो वे माता-पिता को लाकर नए घर में छोड़ते हैं। दरवाज़े पर ठीक वही लिखा है जो शुक्ला दंपत्ति ने अपने घर में लिखवाया था। गृह-प्रवेश में जैनेट पूजा की थाली के साथ उनकी आरती उतारती है। बाबूजी ने शरद को बाजुओं में कस लिया है। रहस्य यह खुलता है कि जैनेट उन डॉ. जोसेफ़ बाटरिक की बेटी है, जिन्होंने शुक्ला जी को यहाँ बसने में मदद की थी। और मिसेज शुक्ला का प्रसव भी कराया था, वही लड़का है शरद। जैनेट का जन्म भी थोड़ा ही पीछे हुआ।

'ऐसा भी होता है' उस बेटी की कहानी है जो अमेरिका आ गई है। माता-पिता उसे पैसों की मशीन समझते हैं। और बक़्त-बेवक़्त पैसे माँगते रहते हैं। पिता-माता ने लिखा है कि बैंक-लोन न चुकाने के कारण दलजीत (उसका पति है कुलदीप) की बदनामी होगी। दलजीत लंबा पत्र खिलती है। अपने माता-पिता के नाम - स्त्री ही अपनी जात के साथ ग़द्दारी करती है। असल में बीजी बेटों को सीने से लगाती हैं, बेटियाँ उपेक्षिता हैं। जिनको लेने का भार पड़ जाता है। उनके लिए रिश्तों की कोई कीमत नहीं होती। आप यह भूल गए, यहाँ डॉलर में कमाते हैं, डॉलर में खर्च करते हैं, रुपयों में नहीं। बैंक से लोन लेते समय आपने मुझसे पूछा था ? क्या मैंने कोई गारंटी ली थी। आपने यह कभी नहीं कहा-मैंने ऐसा बेटा लेकर क्या करना, जो बहन के काम न आ सके ! असल में नीबू को ज़्यादा निचोड़िए तो वह तीता हो ही जाता है। इस कहानी की पंजाबी भाषा भी छोंक इसे और पठनीय बनाती है।

'कॉस्मिक की कस्टडी' थोड़ी सी रहस्य-कथा सरीखी है। एक फिल्मी गीत याद आ रहा है- रुत ये सुहानी है मेरी महबूबा ! गीत की शुरूआती पंक्तियों से लगता है जैसे नायक अपनी जीती-जागती प्रेमिका को याद कर रहा हो। मिसेज़ रॉबर्ट विधवा हो गई है। उनका कहना है कि कॉस्मिक जब सिर्फ एक दिन का था तब से उन्होंने उसे पाला है। ज़ाहिर है, उसी से अब उनका मन बहलता है। इधर मिसेज़ रॉबर्ट का बेटा अपनी गर्लफ्रेंड डनीस की ज़िद के कारण कॉस्मिक को रखने का अधिकार चाहता है। माँ अवसाद में है, वह सुनकर ग्रेग, बीगल नस्ल के कुत्ते कॉस्मिक को माँ को सौंपते हुए कहता है- माँ सँभालो अपने छोटे बेटे कॉस्मिक को ! यहाँ आकर पाठक जान पाता है कि कॉस्मिक क्या है ? और कॉस्मिक मिसेज़ रॉबर्ट के कदमों पर लोटने लगा..।

इस कहानी की बुनावट ही रहस्य भी बनाती है और पशु-प्रेम तथा पशु-मनोविज्ञान की गाँठ भी चुपचाप खोलती हैं।

'यह पत्र उस तक पहुँचा देना' एक दु:खांत कथा है, प्रेम की गहराई को रेखांकित करने वाली। और ऐसी कहानी सुधा जी ही सिरज सकती हैं, जो प्रवासी हैं और संवेदनशील भी। कथा-कथन की विशेष भंगिमा तो सुधा जी के पास है ही।

हार्दिक की पत्नी दीपाली फार्मास्यूटिकल कंपनी बेलमिल कंपनी में कार्यरत है। इस कंपनी का एक ऑफिस मुंबई में भी है। मुंबई से वही टीम आई हुई है। और उसे लौटने के लिए समय पर एयर-पोर्ट पहुँचना है। मौसम बर्फीला और अत्यंत ख़राब है। कार हार्दिक चला रहे हैं। मनीष को एयर-पोर्ट पहुँचने की जल्दी है। हेवी ट्रैफिक से बचने के लिए एक ख़तरनाक सुनसान रास्ते को पकड़ते हैं। तभी मनीष दीपाली से कहता है कि विजय का पत्र उसे उसकी मित्र जैनेट गोल्डस्मिथ तक पहुँचाना था। वह पत्र दीपाली को सुपुर्द करना चाहता है। दीपाली विजय और उसकी मित्र जैनेट को जानती है। और संयोग देखिए तेज़ बर्फीली आँधी में वह पत्र भी उड़ता-उड़ता उन्हीं वादियों में गल जाता है। शायद पत्र जैनेट तक पहुँच गया हो।

"अँधेरा उजाला" कहानी का कथ्य यह है कि जिसे आप उसकी ग़रीबी और जातीय पहचान के कारण अस्पर्श्य और हीन समझते रहे हैं। वह भी ऐसी ऊँचाई पा सकता है कि आप उससे रश्क करें। कहानी आप स्वयं पढ़ें। संक्षिप्त कथा यह कि इला एक भरे-पूरे भारतीय ज़मींदार परिवार की बेटी है। और डॉक्टरी की पढ़ाई के बाद वह अमेरिका चली आती है। इला विद्रोहिणी थी। उसके घर के शौचालय की सफाई करने जो आया करते थे उन्हें घर में प्रवेश नहीं मिलता था। विशेषकर दादी के कारण। डॉ. इला के पिता उदार थे। विदेशों में प्रसिद्ध गायक मनोज पंजाबी की धूम है। उसे ज़हर देकर ख़त्म करने की कोशिश भी हुई। उन्हीं की बेटी है मीना। मनोज को गायन के लिए इला के पिता ने ही प्रेरित किया था। सुविधा ज़टा दी थीं। अमेरिका में जात-पात का झगड़ा नहीं है। डॉ. इला के कानों में मीना का स्वर बजता रहता है। निष्कर्ष यह कि कला किसी जाति की बपौती नहीं होती और ज़हर से कला मरती नहीं। ये कहानी थोड़ी पेचीदा है। माने पेचो-ख़ास

वाली है।

'एक नई दिशा' आख़िरी कहानी है। इस कहानी की बुनावट एक रेखीय और सरल है। कथा यह बताती है कि भले-बुरे लोग हर जगह होते हैं, आप दुनिया की किसी भी दिशा में जाएँ। हमारे यहाँ जैसे महिलाओं के गले का हार झपट लेने वाले चेन-स्नैचर होते हैं। या मोबाइल को झपट्टा मार कर छीन लेने वाले होते हैं। वैसे ही अमेरिका में भी औरतों के गले में पड़े कीमती हार पर लुटेरों की नज़र रहती है। मौली-परेश दंपत्ति अमेरिका में रहते हैं। मौली देव रियल स्टेट एजेंट है। वह गहने कम पहनती है। वे डिब्बों में धरे हैं। एक जोड़े को एक फ्लैट चाहिए। वह मौली से संपर्क करते है। मौली उनको कई सबडिवीज़नों के फ्लैट दिखलाती है। वे उसे और दूर और दूर ले जाना चाहते हैं। मौली स्थिति को भाँप लेती है कि उस जोड़े की नज़र उसके हीरे के हार पर है। ग्राहक उसे सुनसान एरिया में ले जाना चाहते हैं। मौली बहाने से अपने फ्लैट के पास कार पार्क कर घर में आती है और असली हीरे के हार को रखकर नकली हीरे का हार पहन लेती है और बच जाती है। कहानी का सकारात्मक पक्ष यह कि गहनों से मौली का जी उचाट हो जाता है और वह यह निर्णय लेती है कि इन गहनों को बेचकर उन पैसों से ज़रूरतमंद बच्चों को शिक्षा दिलाना चाहती है। संदेश यह भी कि लॉकर में पड़े गहनों का सर्वोत्तम उपयोग यह है कि वह ज़रूरतमंदों के काम आए।

सुधा जी की कहानियों के इस संकलन की कहानियाँ, लीक से हटकर और विशिष्ट हैं, रोचक और नितांत पठनीय तो हैं ही। सात समंदर पार रहकर सुधा जी हिन्दी साहित्य की जो सेवा कर रही हैं, वह विस्मित करता है। हालाँकि इसका श्रेय ओम ढींगरा जी को भी जाना ही चाहिए। और अब थोड़ा- सा व्यक्तिगत। इस कहानी-संकलन का समर्पण जिन लोगों के नाम सुधा जी ने किया है। उनमें मुझ जैसे नितांत साधारण व्यक्ति का भी नाम है। क्या कहूँ ! मैं उनका आभारी हूँ, यह सम्मान देने के लिए।

000

सतरंगे इंद्रधनुष

डॉ. मधु संधु

'खिड़कियों से झाँकती आँखें' सुधा ओम ढींगरा का नवप्रकाशित कहानी संग्रह है। इससे पहले उनके पाँच कहानी संग्रह, एक उपन्यास, चार काव्य पुस्तकें हिन्दी जगत् को मिल चुकी हैं। सुधा ओम ढींगरा पंजाब प्रांत के जालंधर शहर से हैं और वर्षों से (नॉर्थ कैरोलाइना) अमेरिका में हैं। 'कमरा न. १०३', 'कौन सी ज़मीन अपनी', 'वसूली', 'सच कुछ और था' उनके कहानी संग्रह है। 'नक़्क़ाशीदार केबिनेट' उपन्यास है। उनका कवयित्री रूप 'सरकती परछाइयाँ', 'धूप से रूठी चाँदनी', 'तलाश पहचान की', 'सफ़र यादों का' में देख सकते हैं। २०१४ में केंद्रीय हिन्दी संस्थान आगरा द्वारा उन्हें 'पद्मश्री सत्यनारायण माटूरी हिन्दी सेवी सम्मान' मिल चुका है। संकलन, संपादन और अनुवाद के क्षेत्र में भी उनकी देन अप्रतिम है। उनकी लेखनी पर प्रवासी जीवन की ज्वलंत समस्याओं का प्रभुत्व रहा है। 'खिड़कियों से झाँकती आँखें' में कुल नौ कहानियाँ हैं।

आर्थिक तंगी और सतरंगे इंद्रधनुष को छूने की लालसा उनके व्यक्ति को अमेरिका पहुँचाती है। यह प्रातिभ और परिश्रमी कर्मयोगी व्यक्ति विकट अर्थ संकट से छुटकारा पाने के लिए अमेरिका की धरती पर जीवन संघर्ष करने पहुँचता है। 'खिड़कियों से झाँकती आँखें' का डॉ. सागर मलिक सात भाई-बहनों में से एक है। पिता सरकारी स्कूल के शिक्षक हैं। वह क़र्ज़ लेकर यहाँ आता है और तीन साल की रेजीडेंसी में किसी तरह उससे मुक्त होता है।

'वसूली' का हरि भी विदेश आकर ताउम्र छह भाई-बहनों वाले पिता, अपने परिवार को ग़रीबी से मुक्त करने के प्रयास में लगा रहता है।

अपने देश और परिवार से दूर आकर उसे नई-नई समस्याओं से जूझना पड़ता है। अकेला होने की स्थिति उसके अंदर अजीब सी घुटन और उदासी पैदा करती है। पराये देश, पराये लोगों के बीच अपना अस्तित्व बचाना ही काफी श्रमसाध्य है।

नई पुस्तक

फ़ैमिली बिज़नेस की सच्चाइयाँ

(प्रबंधन)

लेखक : हेनरी हॅचेसन

अनुवाद : इंज़ी. राजेन्द्र जैन

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

हेनरी हॅचसेन की सुप्रसिद्ध किताब Dirty Little Secrets of Family Business का यह हिन्दी अनुवाद इंजी. राजेन्द्र जैन ने किया है। इस किताब को लेकर राजेन्द्र जैन कहते हैं- किताब के वाचन के दौरान एक बहुत ही अच्छी लघु कहानी पढ़ी जो कि श्री हेनरी के परिवार से जुड़ी हुई थी, उस कहानी ने मुझे बहुत प्रभावित किया। मैंने श्री हेनरी से ईमेल पर पूछा कि क्या में उनकी यह लघु कहानी जैन इंजीनियर्स सोसाइटी न्यूज़ लेटर में प्रकाशित कर सकता हूँ, जिस पर उन्होंने तुरंत ही सहमति प्रदान कर दी। जब मैंने किताब को पूरा पढ़ा तब मुझे लगा कि अगर यह किताब हिंदी में हो तो इसका फायदा देश के हिंदीभाषी परिवार ले सकेंगे, अत: मैंने ईमेल से किताब के हिंदी अनुवाद व प्रकाशन के लिए अनुमति माँगी जो उन्होंने सहर्ष प्रदान कर दी। इस हिंदी संस्करण से फैमिली बिज़नेस से जुड़े परिवारों को मार्गदर्शन मिलेगा।

000

'खिड़कियों से झाँकती आँखें' के डॉ. सागर मलिक को अपार्टमेंट्स से घूरती वृद्ध आँखें कुछ देर के लिए परेशान कर देती हैं। अकेलेपन की समस्या से जूझ रहे अमेरिकन भी यहाँ मिल जाएँगे। 'कास्मिक की कस्टडी' में एक अकेली सेवानिवृत माँ मिसेज़ राबर्ट फ़ैमिली कोर्ट के डिस्ट्रिक्ट एड्वाइजर अटर्नी के यहाँ कुत्ते की कस्टडी के लिए आई है। वह पिछले एक वर्ष से निराशा में जा रही है, क्योंकि उसका बेटा ग्रेग उससे पेट कस्मिक को ले गया है।

नस्लवाद, असुरक्षा नम्बर दो की हैसियत प्रवासी की नियति है। इसका तो उसके पास कोई विकल्प है ही नहीं। 'खिड़कियों से झाँकती आँखें' का डॉ. सागर मलिक न्यूयार्क में तीन साल की रेजीडेंसी में ही समझ जाता है- "भारत या पाकिस्तान से पढ़कर आए डॉक्टरों को नौकरी ग्रामीण या दूर-दराज के छोटे-छोटे शहरों या क़स्बों में मिलती है, जहाँ स्थानीय डॉक्टर नहीं जाना चाहते।" (पृष्ठ १०) उसे किसी बड़े शहर से नौकरी का कोई प्रस्ताव नहीं मिलता। एक छोटे और बूढ़ों के शहरनुमा क़स्बे के पुराने अस्पताल में नौकरी करना और पास के सीनियर सिटिज़न होम जैसे अपार्टमेंट में रहना उसकी विवशता है। हालाँकि उसके पास मौलाना आज़ाद मेडिकल कॉलेज की मेडिकल डिग्री और दिल्ली के सफदरगंज अस्पताल में नौकरी का अनुभव है। 'कास्मिक की कस्टडी' का सुधीर पटनी जज बनने की बजाय फ़ैमिली कोर्ट का डिस्ट्रिक्ट एड्वाइजर अटर्नी बन कर रह जाता है, क्योंकि- "पश्चिम की रोशनी रंगभेद और नस्लभेद के अँधेरे को अभी तक मिटा नहीं पाई है।" (पृष्ठ ७४) 'यह पत्र उस तक पहुँचा देना' का मुंबई के धारावी का विजय मराठा और सेंट लुईस के मेयर राबर्ट गोल्डस्मिथ की बेटी जैनेट गोल्डस्मिथ दोनों परस्पर प्रेम करते हैं। अश्वेतों और दूसरे इमिग्रेंट्स को नम्बर दो का मानने वाले नस्लवादी राजनेता पिता को यह स्वीकार नहीं है। इसीलिए विजय पर इमिग्रेशन के काग़ज़ों में ग़लत जानकारी देने, तथ्यों के साथ छेड़खानी करने, ड्रग का धंधा करने का झूठा केस बनाकर भारत भेज दिया गया और पुलिस कस्टडी में ही उसकी मृत्यु हो जाती है। जैनेट को भी पिता द्वारा भारत की मरसी किलिंग की तरह कार एक्सिडेंट में मरवा दिया जाता है। 'अँधेरा उजाला' में डॉ. इला भारती के माध्यम से कहानीकार ने नस्लवाद जैसी ही भारत की दलित समस्या का चित्रण किया है। घर का मैला ढोने वाली सोमा का नाती मनोज पंजाबी बहुत बड़ा गायक बन जाता है। देश-विदेश में उसकी प्रसिद्धी है। वह जागरण में गाता है, तो लाखों लोग आते हैं। रेडियो पर उसके लोकगीत सुन युवतियाँ झूमने लगती हैं। स्थिति यह है कि उसे घर के विवाहोत्सव में बुलाकर अपना क़द तो ऊँचा किया जा सकता है, लेकिन बेटी उसका हाथ पकड़ ले, उसे घर के अंदर ले आए, यह बर्दाश्त से बाहर है। छोटी जाति के लड़के की प्रगति बर्दाश्त करने की चीज़ ही नहीं है। ऊँची जाति के गायक मनोज पंजाबी को कुछ ऐसा पिला देते हैं कि उसका वोकल कॉर्ड हमेशा के लिए डैमेज हो जाता है।

बुझती जीवन ज्योत वाले, थके बदन, निर्जीव, अपनों की यादों को सीने में समेटे, ठगे, टूटे हुये भारतीय और स्थानीय बुज़ुर्ग भी उनके लेखन का केंद्र रहे हैं। 'खिड़कियों से झाँकती आँखें' में टॉम एंड सू, मीना और शंकर रेडी, रिक और रकैल, ऐमा और पीटर, इसाबेल और डिक की उदास, बोझिल, परेशान, शून्य में टँगी आँखे क़स्बे में आए नायक को घूरती रहती हैं। उन्हें कोई अपना चाहिए। अपने बच्चों सा युवा दोस्त चाहिए, जो सहारा बन सके। यह वृद्ध विमर्श उनकी अनेक कहानियों में है।

वेयर डू आई बिलांग और अपनों के अपनत्व की समस्या हर प्रवासी की है। बेटे के पेरिस में बस जाने के बाद 'खिड़कियों से झाँकती आँखें' के रेड्डी दम्पति भारत आ अपने शहर कानपुर में अपनों के बीच बसने का प्रयास करते हैं, किन्तु व्यर्थ। कौन सी ज़मीन अपनी? – की गुत्थी भारत आकर ही सुलझती है। जिनके लिए वे जीवन भर लुटते रहे, भारत आकर ही उनकी स्वार्थी आँखों की पहचान हो सकी। उन्हें लौटना ही पड़ा। 'वसूली' का हरि पीएँच.डी के बाद भारत लौटता तो है, लेकिन आर्थिक विवशताएँ उसे अमेरिका का वरण करने के लिए बाध्य करती हैं। हरि भाई शंकरदेव की अर्थ लोलुपता का भी शिकार है। हरि पिता परिवार के लिए घर बनवाने के लिए डॉलर भेजता रहता है और शातिर वकील भाई रजिस्ट्री में अपना और हरि का नाम लिखवा आधा हिस्सा ऐंठ लेता है। प्रवासी भावात्मक बेवक़ूफ़ियों में जीते देश में डॉलर भेजते रहते हैं और स्थानीय लोगों की कृतघ्नता इसे अपना अधिकार मानती बौद्धिकता और अर्थ सजगता का परिचय देती है।

'ऐसा भी होता है' कहानी भारतीयों की अर्थ लोलुपता, स्वार्थ, हृदयहीनता लालच को उजागर करती है। दलजीत कौर पंजाब के उस परिवार से है, जहाँ बेटों का वर्चस्व होता है। वे आँख का तारा होते हैं। सारी सुख- सुविधाएँ, पढ़ाई- लिखाई, प्यार- दुलार उन्हीं के हिस्से जाता है। जैसे ही दलजीत की शादी अमेरिका में होती है, उससे पैसे माँगने का सिलसिला शुरू हो जाता है। मानों अमेरिका में डॉलर उगते हैं और उसे केवल उखाड़-उखाड़ कर भेजना मात्र है। जबकि दलजीत का पति और ससुर टैक्सी चलाते हैं तथा वह और सास स्टोर में काम करती हैं। कभी छोटे वीर की फीस के किए, कभी ज़मीनों के लिए, कभी बड़े वीर का बैंक लोन चुकाने के लिए, कभी बिजनेस के लिए- शादी के एक महीने बाद ही यह सिलसिला शुरू हो जाता है। पहली बार वह सास से, दूसरी बार पति से और तीसरी बार फिर सास से पैसे लेकर मायके भेजती है। यह सिलसिला थमता नहीं। आज उसके तीन बच्चे हैं और वह सोच में है कि मायके से उसका रिश्ता क्या सिर्फ देनदारी का है।

मुड़-मुड़ कर देखना या अपने देश / संस्कृति को याद करना तो ठीक, उनके व्यक्ति ने उस देश की संस्कृति/मानव मूल्यों के उदात्त पक्ष को भी महसूसा और स्वीकार किया है। 'एक ग़लत कदम' में शुक्ला दंपति के तीन बेटे हैं। उनकी अवधारणा है कि बहुएँ अपने देश, अपनी जाति की ही होनी चाहिए। जिससे वे अपनी परम्पराओं, रस्मों- रिवाजों, मान- मर्यादा को ढंग से निभा सकें। लेकिन

दो-दो भारतीय बहुएँ उन्हें अपने ही घर से निकाल वृद्धाश्रम में भेज देती हैं, जबकि अमेरिकन बहू जैनेट स्थिति से अवगत होते ही पूरे मान- सम्मान से अपने पास ले आती है और वे देखते हैं कि उनका घर, बच्चे, रहन-सहन उदात्त मानव मूल्यों से ओत- प्रोत है।

'एक नई दिशा' में अभिजात्य वेषभूषा में अपराधों को अंजाम देने वाले समीर भास्कर और रीता भास्कर जैसे लोग चित्रित हैं, किन्तु अमेरिका में व्यक्ति के चारों ओर फैला सुरक्षा चक्र रक्षा कवच का काम करता है।

'यह पत्र उस तक पहुँचा देना' में सेंट लुईस शहर में आए बर्फीले तूफ़ान और परा मनोविज्ञान का भी चित्रण है। जिस जगह पर प्रेमिका की मृत्यु हुई थी, प्रेमी का पत्र ठीक उसी स्थल पर उड़कर हवा में गुम हो जाता है। तूफ़ान के अनेक चित्र हैं- "हवा में टहनियों का झूलना एक डरावना मंज़र पैदा कर रहा था। .... धुएँ के अंधड़ ने बर्फ के बवंडर का रूप धार लिया। प्रचण्ड वेग से हवा का एक बगूला ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर घूमने लगा और चारों ओर उड़ती रुई के टुकड़ों सी बर्फ उसमें सिमटने लगी। गोल-गोल घूमता बर्फ का गोला दिखने लगा। .... वह गोला गति में इतना तेज़ घूमने लगा कि आसपास की सभी चीज़ें उड़ कर उसमें समाने लगी। कारों ने हिलना शुरू कर दिया। ... आक्सीजन की कमी महसूस होने लगी.... मुँह साँस लेने के लिए खुले हुये थे। (पृष्ठ ९४)

'एक ग़लत कदम' में सुविधा सम्पन्न वृद्धाश्रम और वृद्धों की कालोनी चित्रित है। डॉ. सुमंत हीरादास पटेल द्वारा बनवाए गए वृद्धाश्रमों की शाखाएँ पूरे अमेरिका में हैं- "सारे डॉक्टर, नर्सें, सेवक- सेविकाएँ भारतीय हैं, हर गृह में एक मंदिर भी होता है। हर प्रदेश का भारतीय भोजन यहाँ दिया जाता है और भारतीय माहौल उत्पन्न किया जाता है। ..... भारतीय बुज़ुर्गों में ऐसे गृह बहुत लोकप्रिय हो रहे हैं। ... चारों ओर भारतीय शोर- शराबा, संयुक्त परिवार सा खान-पान, सुबह- शाम मंदिर की घण्टियों की आवाज़, शंख का नाद, भारतीय संगीत, धूमधाम से मनाए जाते भारतीय उत्सव।" (पृष्ठ ४५) इसी कहानी में उस रिच एडल्ट सब डिविज़न का भी चित्रण है, जहाँ के टाऊन हाउसिज़ में ढलती उम्र के लोग आधुनिक साज- सज्जा से सुसज्जित जीवन जीते हैं।

वास्तु शिल्प पर भी चर्चा मिलती है। 'एक नई दिशा' की रेड इंडियन वेदा कहती है- " घरों में कोण नहीं होने चाहिए, उन्हें गोल कर देना चाहिए। कोण परिवारवालों की सकारात्मक ऊर्जा धीरे- धीरे हरण करके नकारात्मक ऊर्जा छोड़ते हैं।" (पृष्ठ १२०)

पंजाबी शब्द, पंजाबी वाक्य, पंजाबी लोक गीत सुधा ओम ढींगरा की कहानियों को देश की धरती से, स्थानीय रंग से, अभिव्यक्ति की नैसर्गिकता और पात्रों की मानसिकता से जोड़ते हैं। इन कहानियों में सूत्र वाक्य प्राण तत्व की तरह समाए हैं। जैसे- जीवन की लंबी यात्रा में दिल के रिश्ते ही काम आते हैं, उन्हें सँभालकर रखना। (पृष्ठ २२)। सब लोग यही सोचते हैं कि विदेशों में डॉलर वृक्षों पर उगते हैं और वहाँ से उन्हें तोड़कर भेज देंगे। (पृष्ठ ३९)। मनुष्य की सबसे बड़ी समस्या यह है कि वर्तमान में उसे जीना नहीं आता। छोटी सी बात पर भी अतीत के गलियारे में झाँकना उसे अच्छा लगता है। मानव प्रकृति मूलत: अतीतजीवी है। (पृष्ठ ५१)। बेशक आशा झूठी ही हो, जीवन में रस रखती है। (पृष्ठ ५३)

सुधा ओम ढींगरा का यह प्रातिभ कर्मयोगी प्रवासी सात समुन्द्र पार जाकर भी देश में रह रहे अपने परिवार के प्रति, आत्मीयों के प्रति बेहद संवेदनशील है, उनके लिए हर सुविधा सहेजने, उनकी हर माँग पूरी करने के लिए संकल्पबद्ध है। हालाँकि पराये देश और पराये लोगों के बीच अपना अस्तित्व बचाना, नस्लवाद की बदौलत नंबर दो स्थिति स्वीकारना भी जंग जीतने के समान है। एक घुटन, उदासी, अकेलापन, अजनबीपन उसे जब तब घेरने के प्रयास में रहते हैं। जबकि वह जानता है कि उसे इसी देश में रहना है, अब यही धरती उसकी अपनी है। सुधा जी ने प्रवासियों के ही नहीं स्थानीय लोगों के दुख-दर्द, अकेलापन, वृद्धाओं की त्रासदी को भी महसूसा और चित्रित किया है।

000

नई पुस्तक

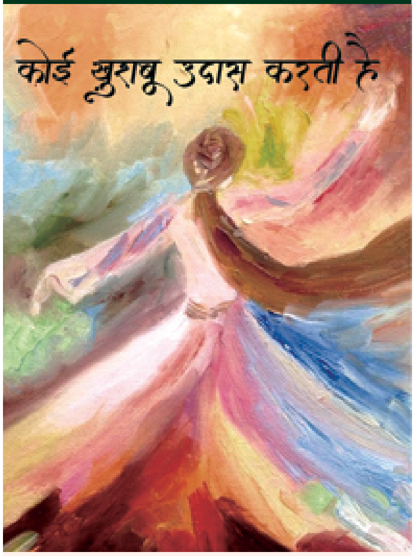

कोई ख़ुशबू उदास करती है

(कहानी संग्रह)

लेखक : नीलिमा शर्मा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

नीलिमा शर्मा का यह पहला कहानी संग्रह है जो हाल ही में शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आया है। इस संग्रह में टुकड़ा-टुकड़ा ज़िंदगी, कोई रिश्ता ना होगा तब, उत्सव, इत्ती-सी ख़ुशी, कोई ख़ुशबू उदास करती है, मायका, अंतिमयात्रा और अंतर्यात्रा, लम्हों ने ख़ता की, मन का कोना, आख़िर तुम हो कौन ?, उधार प्रेम की कैंची है कहानियाँ संकलित की गई हैं। इस संग्रह के बारे में सुप्रसिद्ध लेखक मनीषा कुलश्रेष्ठ कहती हैं- नीलिमा की लेखनी की विशेषता यही है कि वह कहानियाँ कहने में विश्वास रखती है, इसलिए इन कहानियों में अधिकतर वर्णनात्मक शैली ही प्रयुक्त हुई है। संवाद अकसर छोटे मगर जीवंत हैं, जो कथानक को गति देते हैं। इन कहानियों की रवानी की वजह ही यही है कि इनमें रोज़मर्रा की घटनाओं के ज़िक्र के बख़ूबी मिल जाता है। ख़ासतौर पर स्त्रियों की दिनचर्या, छोटे-छोटे काम-काज, उनके असमंजस, बातें, उठना-बैठना।

000

केंद्र में पुस्तक

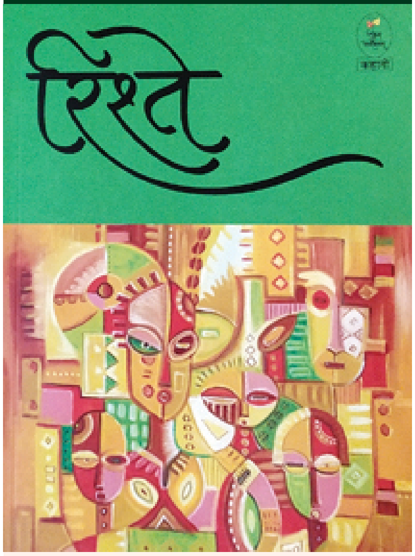

रिश्ते

(कहानी संग्रह)

समीक्षक : दीपक गिरकर, प्रो. अवध किशोर प्रसाद

लेखक : पंकज सुबीर

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सीहोर

दीपक गिरकर
28-सी, वैभव नगर, कनाडिया रोड,
इंदौर- 452016
मोबाइल- 9425067036
ईमेल- deepakgirkar2016@gmail.com

प्रो. अवध किशोर प्रसाद
कुमार राजेश सी.ए.ओ.
सी. आई.ए. ई. नबीबाग
बैरसिया रोड, भोपाल (म.प्र.)
462038
मोबाइल– 9599794129

रिश्तों की ताजगी का अहसास करवाती कहानियाँ

दीपक गिरकर

हिन्दी के सुपरिचित कथाकार और प्रसिद्ध उपन्यास "अकाल में उत्सव" और "जिन्हें जुर्म-ए-इश्क़ पे नाज़ था" के लेखक पंकज सुबीर एक संवेदनशील लेखक होने के साथ एक संपादक भी हैं। हाल ही में इनका नया कहानी संग्रह "रिश्ते" प्रकाशित होकर आया है। पंकज सुबीर के लेखन का सफ़र बहुत लंबा है। पंकज सुबीर की प्रमुख रचनाओं में "ये वो सहर तो नहीं", "अकाल में उत्सव", "जिन्हें जुर्म-ए-इश्क़ पे नाज़ था" (उपन्यास), "ईस्ट इंडिया कम्पनी", "कसाब.गाँधी एट यरवदा.इन", "महुआ घटवारिन और अन्य कहानियाँ", "चौपड़े की चुड़ैलें", "होली" "प्रेम" (कहानी संग्रह), "अभी तुम इश्क़ में हो" (ग़ज़ल संग्रह) यायावर हैं, आवारा हैं, बंजारे हैं (यात्रा संस्मरण) "बारह चर्चित कहानियाँ","विमर्श दृष्टि", "विमर्श-नक़्क़ाशीदार केबिनेट", "विभोम–स्वर", "शिवना साहित्यिकी" त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिकाएँ (संपादन) शामिल हैं। कई पुरस्कारों और सम्मानों से सम्मानित पंकज सुबीर की कहानियाँ प्रमुख साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। पंकज सुबीर आज के समय के सशक्त कथाकार हैं। पंकज सुबीर साधारण सी घटना को अपनी लेखनी से विशिष्ट बना देते हैं। ये अपने अनुभवों को बड़ी सहजता से कहानी में ढाल लेते हैं। कहानी में पात्रों का चरित्र चित्रण इस प्रकार करते हैं जैसे कि वे उन पात्रों के साथ रहे हो। इन कहानियों में अनुभूतिजन्य यथार्थ है। इस कहानी संग्रह में २४ कहानियाँ हैं। लेखक इन कहानियों में स्मृति के पन्नों में पहुँचकर वहाँ के दृश्य साकार कर देते हैं। कथाकार ने मानवीय संवेदनाओं, सहज आत्मीय प्रेम और बचपन की स्मृतियों को स्वाभाविक रूप से निरूपित किया है। ये कहानियाँ समय-समय पर समाचार पत्रों में प्रकाशित हो चुकी हैं।

"कोई था" कहानी में गहरे मानवीय सरोकार का यथार्थ चित्र मिलता है। कथाकार ने "ख़ास दोस्त" कहानी में दूल्हे के दोस्त के साथ दुल्हन की सहेलियों द्वारा किए जाने वाला हँसी-मज़ाक का रोचक अंकन किया है। जिस व्यक्ति से आप प्रेम करते हैं उस प्रेम को आपको उस व्यक्ति के सामने प्रकट करना भी ज़रूरी है इस कथानक पर आधारित है कहानी "प्रेम चतुर्दशी"। एक बहन के अपने छोटे भाई के प्रति निश्चल, सहज प्रेम की कहानी "नेह पत्र" जो रक्षाबंधन प्रसंग के ताने-बाने पर रची गई है। नवरात्रि में एक स्त्री को एक बच्ची में देवी के दर्शन होते है "पीताम्बरा" कहानी में। "राम जाने" कहानी में जहाँ एक ओर मालती के बचपन की सुखद स्मृतियाँ हैं तो दूसरी ओर शर्मा अंकल और आंटी अपनी बेटी को खो देने के बाद टूटे हैं, मगर बिखरे नहीं। इस कहानी में शर्मा अंकल और शर्मा आंटी की ममतापूर्ण छवि का रोचक वर्णन है। "एक रुकी हुई कहानी" भाई-बहन के आपसी प्रेम की एक रोमांचक कहानी है। "उस मोड़ से लौटकर" कहानी में सुधीर की ख़ूबसूरत बहन मिन्नी एक बदसूरत व्यक्ति से शादी करने के लिए आसानी से तैयार हो जाती है। जब सुधीर रक्षाबंधन पर अपनी बहन मिन्नी और उसके पति से मिलता है और मिन्नी के पति का मिन्नी के साथ व्यवहार देखकर उसे संतुष्टि मिलती है।

"और परी आ गई" कहानी में की माँ लोगों को हमेशा कहा करती थी कि छोटे बेटे को एक बेटा हो जाए। लेकिन जब बहू बेटी को जन्म देती तो वहीं माँ सभी से कहती है कि देखो हमारे घर में एक सुंदर परी आ गई है। बरसात के झमाझम मौसम में पकौड़े खाने के बहाने कामिनी उर्फ कम्मो और अनिमेष उर्फ अन्नू को अपनी शादी के पहले के दिन याद आ जाते हैं इस संग्रह की

कहानी "ऋतु बदली" में। "रूप गर्विता" कहानी का कैनवास बेहतरीन है। इस कहानी में बड़े अधिकारी को अपने मातहत कर्मचारियों की कितनी अधिक चिंता होती है, यह आप इस कहानी को पढ़कर ही समझ पाएँगे। कहानी के पात्रों से निकट से परिचित होकर कथाकार इनका वर्णन रोचकता से करते हैं। मनोहर, कलेक्टर श्रीमती सुहासिनी देशमुख जैसे किरदार अपनी संवेदनशीलता के कारण सदैव याद किए जाते रहेंगे। "तुम भी तो वही हो न ?" सामूहिक बलात्कार की शिकार हुई एक युवती स्नेहा वर्मा की मनोदशा का चित्रण है। गर्मियों की छुट्टियों में बच्चों को किसी कोचिंग में या कोई गेम सीखने के लिए भेजें तो सुबह ही भेजें, दिन में नहीं। इसे सहजता के साथ बखूबी चित्रित किया है "बैसाख का एक दिन" कहानी में। गीता की मम्मी रहस्य, रोमांच से भरी हुई कहानी है। "अम्मा का घर" कहानी में लेखक ने चित्रित किया हैं कि औरत कितनी भी बूढ़ी हो जाए, उसे मायके की याद हमेशा आती है। बाँध बनने की वजह से गाँव डूबने और गाँव के लोगों के उस गाँव से विस्थापन की कहानी है "वहाँ, जहाँ शायद ज़मीन है "। कहानी की मुख्य किरदार अरुणा को गाँव में बचपन में बीते हुए दिनों की याद आती है। कथाकार ने अरुणा की संवेदनाओं, बचपन की स्मृतियों को स्वाभाविक रूप से निरूपित किया है।

"फ़रिश्ता" दो दिसंबर १९८४ की काली रात की कहानी है, जब भोपाल में गैस कांड हुआ था। यूनियन कार्बाइड फैक्ट्री से लीक हुई जहरीली गैस फैक्ट्री के आसपास की पूरी आबादी को लील गई थी। लेकिन कुछ ऐसे फ़रिश्ते थे, जिन्होंने इंसानियत का परिचय दिया और लोगों की हर तरह से सहायता की। "गोल-गोल आँखों वाला जोगी" कहानी का राहुल और "फ़रिश्ता" कहानी का संजय शर्मा ज़ेहन में हमेशा के लिए बस जाते हैं। "लौ से लौ जलती है" एक प्रेरणादाई कहानी है। एक ज़िले के बड़े पुलिस अधिकारी को दीपावली के त्यौहार के पूर्व सड़क किनारे मिट्टी के दिए बेचती एक वृद्धा और उसके पोते पर दया आती है। वह पुलिस अधिकारी उस बच्चे को अपने घर पर रखकर उसे अच्छी शिक्षा दिलवाते हैं। कुछ वर्षों बाद वह बच्चा बड़ा होकर पुलिस अधिकारी बनता है और वह अपना ऋण उतारना चाहता है, तब वे बड़े पुलिस अधिकारी उससे कहते हैं कि तुम भी किसी ग़रीब, अनाथ बच्चे को इसी तरह सहायता करके उसे अपने पैरों पर खड़ा कर दो। इस प्रकार लौ से लौ जलाते रहो। "मेरे रश्के क़मर" बचपन के आत्मीय प्रेम की अनुभूतियों को अभिव्यक्त करती एक लाजवाब कहानी है। बचपन में एक मुस्लिम दोस्त क़मर होली का त्यौहार बड़े ज़ोरदार तरीके से मनाता था। छुट्टू उर्फ़ सितू को अपने बचपन के दिनों की स्मृतियाँ ताज़ा हो जाती हैं। यह कहानी लेखक ने पत्र शैली में लिखी हैं। "तुझको मुझको जीवन अमृत" कहानी भी होली के त्यौहार को लेकर लिखी गई है। इस कहानी में दो बुज़ुर्ग दोस्तों को अपने बचपन की होली याद आती है कि किस तरह वे पलाश के फूलों से रंग बनाकर होली खेलते थे। होली के दिन सभी बुज़ुर्ग दोस्त एकत्रित होकर पलाश के फूलों का रंग बनाकर होली खेलते हैं और अपने बचपन को फिर से जीते हैं। "नेह पत्र", "एक रुकी हुई कहानी", "बिलौटी", "गोल-गोल आँखों वाला जोगी" इत्यादि कहानियों में रिश्ता सिर्फ़ धागों का नहीं है, जज़्बातों का है। "गाड़ी बुला रही है" "मैं कहीं नहीं गई आपके साथ ही हूँ", "बुआ" इत्यादि कहानियाँ मन को छूकर उसके मर्म से पहचान करा जाती हैं।

इन कहानियों में संवेदनशीलता, सहज प्रेम, भावुकता, आनन्द, आत्मीयता इत्यादि मनोवृत्तियाँ बड़े सूक्ष्म रूप से स्पष्ट हुई है। पंकज जी के कथा साहित्य में उनकी सकारात्मकता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। रिश्ते हमेशा खून के ही नहीं होते बल्कि कुछ रिश्ते हमें मज़बूती से बाँध लेते हैं और आजीवन हम उसे जीते हैं। कथाकार ने अपनी जीवन-यात्रा में जो देखा है, जो परखा है, उन्हें इन कहानियों में कलमबद्ध किया है। इस संग्रह की कहानियों में रिश्तों और मानवीय संबंधों की बारीक पड़ताल की गई है। इन कहानियों में अनमोल रिश्तों की ख़ुशबू है, रिश्तों के विविध रंग हैं। ये कहानियाँ रिश्तों का एक दर्पण है। कहानियों की भाषा सीधी, सरल व बोधगम्य है। रिश्ते एक भाव प्रधान कृति है। इस संग्रह की प्रत्येक कहानी रिश्तों की ताज़गी का अहसास करवाती है। पंकज जी पाठकों को रिश्तों की डोर में बाँधने में पूरी तरह से कामयाब रहे हैं। संग्रह की कहानियाँ पाठक के मन को छू लेती हैं। बेशक़ "रिश्ते" (कहानी संग्रह)" एक पठनीय और संग्रहणीय कृति है।

000

रिश्तों की शिनाख्त की कहानियाँ

प्रो. अवध किशोर प्रसाद

रिश्तों की शुरूआत कब से हुई होगी, इसका पता अभी तक सम्भवत: किसी आविष्कर्ता ने नहीं लगाया। शायद इसकी आवश्यकता महसूस नहीं की गई होगी। फिर भी इसका अनुमान तो लगाया ही जा सकता है। कहा जाता है कि आदिम मनुष्य साथ-साथ रहते हुए भी झुण्ड में रहने वाले पशुओं की तरह एक दूसरे से असम्पृक्त रहते थे। यह भी कहा गया है कि 'जब दो प्राणियों के बीच कोई तीसरा आ जाता था, तो उनके हर्षोल्लास का कोई ठिकाना नहीं रहता था।' इसी तीसरे प्राणी ने एक-दूसरे को जोड़ने का कार्य किया होगा याकि उनके बीच रिश्ते की शुरूआत की होगी। वह उन्हें माता-पिता कहकर पुकारने लगा होगा और वे उसे बेटा या बेटी कहकर सम्बोधित करने लगे होंगे, सम्भवत: यहीं से रिश्तों की शुरूआत हुई होगी और जैसे बीज से बने वृक्ष डालियों, टहनियों,पत्तों, फूलों और फलों के रूप में विकसित होते हैं, वैसे ही मानवीय रिश्तों में भी विस्तार होने लगा होगा, जिसका रूप आज विशाल और अनगणनीय है। मानव समुदाय में आज रिश्ते ही रिश्ते हैं। ये रिश्ते अवसरोनुकूल बनते, बिगड़ते और फैलते हैं। शिवना प्रकाशन सीहोर से प्रकाशित पंकज सुबीर का कहानी संग्रह 'रिश्ते' चौबीस कहानियों के माध्यम से इन्हीं रिश्तों की शिनाख्त कराता है। संकलन की इन कहानियों में मानवीय रिश्तों की पड़ताल की गई है। रिश्ते का रिश्ता होना तभी सार्थक होता है जब रिश्तों के बीच प्रेम की रस- सरिता प्रवाहित होती है। संकलन की कहानियों में रिश्ते भी हैं

और उनके बीच प्रेम की रस –सरिता का प्रवाह भी है।

संकलन की पहली कहानी 'कोई था....' में हरीश की पत्नी सुनन्दा को रिश्ते का मर्म तब समझ में आ जाता है, जब उसे ज्ञात होता है कि उसका पति हरीश प्रति माह तीन हज़ार रुपये उस बूढ़ी औरत को दे जाता है, जिसका बेटा बस यात्रा के दौरान हरीश की मौत को अपने सर पर ले लेता है। सुनन्दा का संदेह, जो कोई अदृश्य आकार ग्रहण करने लगता है, स्थिति की जानकारी प्राप्तकर स्वत: शमित हो जाता है। 'ख़ास दोस्त' का कुँवर राजेश रिश्तों की अहमियत को समझकर ही रूठना भूलकर दोस्तों के साथ मंडप पर चलकर भोज में शरीक हो जाता है। नारायण दास की गढ़ी हुई रोचक आपबीती को सुनकर राजेश बिना किसी हील-हवाले के भोजन कर लेता है। 'प्रेम चतुर्दशी' रिश्ते की पहचान कराने वाली एक मार्मिक कहानी है। इसमें वेलेंटाईन डे पर अपनी दादी और बाद में दादा के साथ चुहलबाज़ी करती पोती सुरीली द्वारा दादा-दादी के बीच के दाम्पत्य प्रेम को वेलेंटाइन डे पर पुख्ता किया गया है। सुरीली अपने दादू से दादी के लिए यह कहलवाकर कि "मैं तुमसे प्यार करता हूँ" दम लेती है। दादू की कविता और उसके पाठ का ढंग अद्भुत है---"कभी जो कह नहीं पाया, वही इज़हार करता हूँ/मैं तुमसे प्रेम की चौदस पे ये इकरार करता हूँ/ तुम्हारे बिन मेरा जीवन कोई सूना मरुस्थल था/सुनो दादी सुरीली की मैं तुमसे प्यार करता हूँ।" 'पीताम्बरा' में मानवीय रिश्ते की अभिव्यक्ति हुई है। दुर्गा पूजा की नवमीं के दिन कन्याओं के भोजन एवं श्रृंगार कर विदाई देने के क्रम में पीली फ्राक वाली लड़की को अपने ड्राइवर अशोक की बेटी जानकर पूजा का महावर लगाने वाला रुका हुआ हाथ, दूसरी दुर्गा पूजा में स्वत: खुल जाता है, क्योंकि उसी लड़की ने एक्सीडेंट के बाद पूजा की जान बचाई थी। दूसरी नवमीं पर पूजा "या देवी सर्वभूतेषु क्षमा रूपेण संस्थिता, नम:तस्यै, नम: तस्यै,नम:तस्यै, नमो नम:" गाते हुए उस लड़की का श्रृंगार करती है। मानों उस पीली फ्राक वाली लड़की में स्वयं दुर्गा अवतरित हो गई हो। औरत के जीवन में उसके मायके का अहं स्थान होता है। मायके से संबंधित सारे रिश्तों की उसके जीवन में अहं भूमिका होती है। 'अम्मा का घर' शीर्षक कहानी में ऐसे ही रिश्तों की अभिव्यक्ति हुई है। पच्चीस-तीस वर्षों के लम्बे अंतराल के बाद मानसी जब मायके पहुँचती है, तो सर्वत्र प्रेम रस की सरिता का प्रवाह फ़ूट पड़ता है, जैसे किसी ने नदी पर बने बाँध को सहसा तोड़ दिया हो। 'गीता की मम्मी' कहानी में अपने पति के मुँह से गीता की मम्मी जैसे संबोधन को बार-बार सुनने से नीला का मन शंकित हो जाता है, किन्तु सत्तर वर्षीय गीता की मम्मी से मिलते ही उसकी शंका श्रद्धा में बदल जाती है। कुछ रिश्ते धर्म और जाति की परवाह किए बिना अचानक बन जाते हैं। वहाँ धर्म और जाति आड़े नहीं आती है। 'फ़रिश्ता' ऐसी ही कहानी है, जिसमें भोपाल में १९८४ में यूनियन कार्बाइड नामक फैक्ट्री में गैस रिसाव के दिन एक हिन्दू लड़का अपनी जान की परवाह किए बगैर एक मुस्लिम परिवार को सुरक्षा प्रदान करता है और वह मुस्लिम महिला हिन्दू लड़के को अनायास ही अपने पुत्र फ़रिश्ता का नाम देकर गले से लगा लेती है। "मुश्किल दौर में, हर कठिन समय में मानवता अपने होने का एहसास किसी न किसी रूप में आकर दिला जाती है, ताकि उम्मीद की उस एक किरण को देखकर एवं आशा की एक डोर को थाम कर लोग घटाटोप में भी ज़िंदा रहने का हौसला जुटा सकें"। 'लौ से लौ जलती है' शीर्षक कहानी में एक पुलिस अधीक्षक के हृदय में मिट्‌टी के दीये बेचने वाली एक बूढ़ी औरत के प्रति उत्पन्न सम्वेदना के माध्यम से इस तथ्य को अभिव्यक्त किया गया है। पुलिस अधीक्षक उस बेसहारा बुढ़िया के पोते को पढ़ा-लिखा कर पुलिस अफसर बनाता है और एक दीपावली की रात घर आए उस पुलिस अफसर को एक बुझे हुए दीप जलाकर दूसरों की सहायता करने की सीख देता है।

पिण्ड में ब्रह्माण्ड और बूंद में सिन्धु की कहावत को चरितार्थ करते हुए संकलन की कहानी की 'बुआ' की बुआ ऐसा ही चरित्र है, जो संसार के सम्पूर्ण रिश्तों की जीती-जागती तस्वीर है। उसमें समस्त मानवीय रिश्तों, यहाँ तक कि जीवों के प्रति प्रेम की झलक मिलती है। पति, सौतेले पुत्र, सम्पर्क में आने वाले लोगों के प्रति आत्मीयता का रिश्ता निभाने वाली बुआ की यही प्रासंगिकता थी कि किसी की बुआ नहीं होने के बावजूद पूरा इछावर का क़स्बा उसे बुआ कहता था। 'वहाँ, जहाँ शायद ज़मीन हो' कहानी में बचपन की यादों के बीच गाँव के प्रति पुराने रिश्तों का विवरण कथानायिका अरुणा के चिन्तन के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। जैसे दीवारों पर लगे हुए रंग की पपड़ियों और दरारों के पीछे झाँकता है पुराना रंग और उस झाँक रहे पुराने रंग को देखकर हम आश्चर्य मिश्रित खुशी के साथ लौट आते हैं स्मृतियों के गलियारों में वैसे ही 'राम जाने' शीर्षक कहानी की मालती कलेक्टर बनकर तेईस –चौबीस साल बाद अपने पुराने शहर की पुरानी स्मृतियों में खो जाती है। जीवन की भाग-दौड़ के बीच पनपते, बढ़ते और विकसते पारिवारिक प्रेम संबंधों की मार्मिक अभिव्यक्ति 'बैसाख का एक दिन' शीर्षक कहानी में की गई है। इस कहानी का ताना-बाना गर्मी के एक दिन पर बुना गया है। इसमें बैशाख की गर्मी से तपते हुए एक दिन परिवार के सारे सदस्य फ़ोन के माध्यम से प्रेम का आदान-प्रदान करते हैं। 'ऋतु बदली'में कामिनी और अभिषेक के बीच प्रेम संबंधों की अभिव्यक्ति हुई है।

'नारिकेल समाकारा दृश्यन्ते हि सुहृद जना:' की उक्ति को चरितार्थ करती 'रूप गर्विता' शीर्षक कहानी की कलेक्टर श्रीमती सुवासिनी देशमुख यद्यपि एक कठोर, अनुशासनप्रिय एवं रूपगर्विता नारी है, तथापि उसके भीतर ममता, कोमलता एवं सम्वेदनशीलता का भाव भरा हुआ है। वह अपने अधीनस्थों के साथ कठोरता का व्यवहार करती है, किन्तु उसके भीतर मानवीय सम्वेदना भी है। तभी तो अपने अर्दली सुनील के पिता के प्रोविडेंट फण्ड के पैसे के भुगतान के लिए कड़ाई से आदेश देती है। साथ ही वह सुनील के प्रति वात्सल्य का भाव भी प्रकट करती है। इस कहानी में प्रेम, वात्सल्य और कर्तव्यबोध की भावना की

अभिव्यक्ति हुई है। 'गोल-गोल आँखों वाला जोगी' शीर्षक चिंतन प्रधान कहानी में प्रेम करने वालों की पीड़ा, प्रेम की राह पर चलने की कठिनाईयों एवं उसके दुखद परिणामों पर कथाकार ने गहराई से चिन्तन किया है –"कितने और गोल- गोल आँखों वाले लड़कों को जोगी बनाएगा यह प्रेम"। इस कहानी में गोल-गोल आँखों वाले राहुल और वैशाली के बीच होने वाले प्रेम के कारण उत्पन्न विकट परिस्थितियों का विवरण हुआ है। अपनी बहन स्मृति की समझाइश पर राहुल वैशाली को भुला तो देता है, किन्तु वह सेना में भर्ती होकर वीतरागी जोगी बन जाता है।

भारतीय संस्कृति में पर्व-त्योहारों का प्राचीन काल से ही प्रचलन, प्रावधान एवं महत्त्व रहा है, जिनमें रक्षाबंधन भी एक महत्त्वपूर्ण त्यौहार है। यह भाई- बहन के अप्रतिम प्यार का त्यौहार है। इसमें बहन अपने भाई की कलाई पर राखी बाँधकर उसके दीर्घायु होने एवं सुखी जीवन की कामना करती है और भाई उसे उसकी सुरक्षा का वचन देता है। यद्यपि बहन का न होना केवल एक दिन कष्ट देता है, पर बहन का होना उम्र भर कष्ट देता है, तथापि यह एक दिन का कष्ट जीवन भर सालता है। संकलन में रक्षाबंधन से संबंधित अनेक कहानियाँ हैं। बिलौटी, नेहपत्र, उस मोड़ से लौटकर, एक रुकी हुई कहानी ऐसी ही कहानियाँ है, जिनमें भाई-बहन के अनोखे प्रेम का चित्रण हुआ है। 'बिलौटी'में अपनी बहन नहीं होने के कारण सुधीर अपने दोस्त मनीष की बहन सुधा से राखी बँधवाकर प्रसन्न होता है। 'नेह पत्र' की मिनी अबोला होने की स्थिति में पत्र के माध्यम से रक्षाबन्धन की खुशियों का बयान अपने छोटे भाई गोलू से करती है। वह इस पत्र को नेह पत्र होने के कारण का उल्लेख करती है- "कोई दूसरी लडकी तुम्हें पत्र लिखती तो उसे प्रेम पत्र कहते, लेकिन ये तुम्हारी बहन लिख रही है, इसलिए ये नेह पत्र है"। 'उस मोड़ से लौटकर ' में रक्षाबन्धन के दिन अपनी विकलांग बहन मिन्नी को उसके पति के साथ खुश देखकर कथानायक प्रसन्न होता है। 'एक रुकी हुई कहानी' रक्षाबन्धन पर भाई-बहन की धमाचौकड़ी, उनके प्रेम और प्यार की रोमांचक कहानी है। इन कहानियों में रक्षाबन्धन के रिश्ते की मार्मिकता, भाई-बहनों की एक-दूसरे से मिलने की बेचैनी और मिलनोपरांत होने वाली खुशियों का मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है।

'ऋतु बदली' प्रेम संबंधों की कहानी है। इसमें कामिनी और अभिषेक के बीच के प्रेम संबंध की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। 'मेरे रश्के क़मर' एवं 'तुझको मुझको जीवन अमृत ' कहानियों में बचपन में दोस्तों के साथ बिताये गए होली के सुखद क्षणों की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति हुई है। 'और परी आ गई' कहानी में बेटा आ जाए की रट लगाने वाली अम्मा बेटी के जन्म पर भी परिवार के सभी सदस्यों के साथ खुशियाँ मनाती है। 'गाड़ी बुला रही है', 'तुम भी तो वही हो न' कहानियों में सम्वेदनात्मक रिश्तों की अभिव्यक्ति हुई है।

संकलन की सारी कहानियों में रिश्तों की अहमियत को सरल एवं काव्यमयी भाषा में व्यक्त किया गया है। प्रकृति इन कहानियों में अपनी पूरी सुषमा, सुन्दरता एवं मनोरमता के साथ रची-बसी है—कहीं ढलते सूरज के सौन्दर्य में, कहीं पूर्णिमा की चाँदनी की स्निग्धता के रूप में, तो कहीं हरहराती, उछलती–कूदती सरिता के प्रवाह के रूप में। पलाश, गुलमोहर, अमलतास तो जैसे आत्म-तत्व के रूप में अपनी रमणीयता के साथ इन कहानियों में उपस्थित हैं-"आसमान पर पूर्णमासी का पूरा चाँद खिला हुआ था, जर्द सिंदूरी-सा चाँद और दूर तक फैली हुई थी चाँदनी(पृ ९१), दूर क्षितिज पर सूर्य का लाल सिंदूरी गोला अस्ताचल की ओर अपनी मद्धम–मद्धम चाल से बढ़ रहा था"(पृ८९), अथवा "यहाँ पलाश अपने लाल- लाल सिंदूरी फूलों से लदे हुए प्रतीक्षारत है कि कोई इन फूलों को तोड़ ले जाय अपनी होली को रंगीन करने के लिए।" (पृष्ठ १७४)। संकलन की प्राय: सभी कहानियों में किसी न किसी प्रकार से रिश्तों की अहमियत को उजागर किया गया है, इसलिए पुस्तक का शीर्षक 'रिश्ते' सटीक और सार्थक है।

000

नई पुस्तक

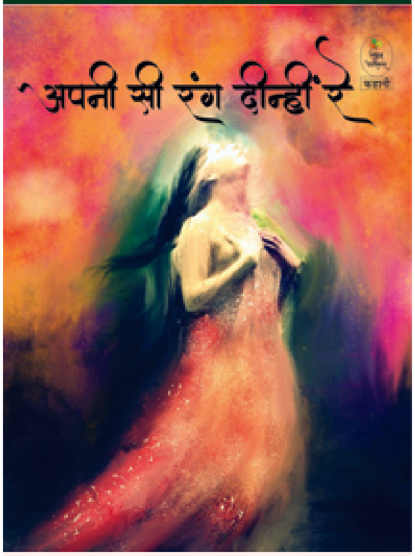

अपनी सी रंग दीन्हीं रे

(कहानी संग्रह)

लेखक : सपना सिंह

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

कथाकार सपना सिंह का यह कहानी संग्रह अभी हाल में ही शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आया है। सपना सिंह उन कथाकारों में हैं, जिन्होंने अपनी अलग तरह की भाषा तथा शैली के कारण पाठकों के बीच अपनी पहचान बना ली है। उनकी कहानियों में लोक की अलग-अलग छवियाँ दिखाई देती हैं। उनकी कहानियों के पात्र बहुत आम होते हैं, इसलिए ही पाठकों को यह पात्र बहुत अपने से लगते हैं। इन कहानियों में सपना सिंह ने अलग-अलग विषयों को लेकर रोचक कथा संसार रचा है। इस संग्रह में अपनी सी रंग दीन्हीं रे, गटई के घेंघ, पवित्रा, दुधारु, पत्नी का भूत, एक नयी कशमकश, बहुत से कुछ ज्यादा कहानियाँ संकलित की गई हैं। सपना सिंह की कहानियों के पात्र बहुत देर तक तथा दूर तक पाठक के साथ चलते हैं। पढ़ लिए जाने के बाद ये कहानियाँ देर तक स्मृति में बनी रहती हैं। कथारस के नए प्रयोगों का उदाहरण हैं ये कहानियाँ।

000

पुस्तक समीक्षा

जूता ज़िंदाबाद

(कविता संग्रह)

समीक्षक : डॉ. मक्खन मुरादाबादी

लेखक : अशोक अंजुम

प्रकाशक : श्वेतवर्णा प्रकाशन, नई दिल्ली

डॉ. मक्खन मुरादाबादी
झ-28, नवीन नगर, कांठ रोड,
मुरादाबाद- 244001, उप्र
मोबाइल - 9319086769

मनुष्य पर पड़ने वाले जितने भी बाह्य और आंतरिक प्रभाव हैं, उनका बोध उसे शरीरस्थ स्नायु तंत्र से होता है। स्नायु तन्त्र को उद्वेलित कर देने वाला बोध आंदोलित होकर संवेदना हो जाता है। संवेदना का करुण भाव से द्रवित होकर फूट निकलना ही हमारी पहली कविता है। हमारे साहित्य में 'एकोरू रसरू करुणरू' की उद्‌भावना इसी आधार पर प्रतिष्ठित है। यद्यपि हमारे साहित्य के नवरस, अब दस हैं, फिर भी जाने क्यों मुझे यही लगता रहा है कि मूल रस दो ही हैं- करुण और हास्य। ये दोनों ही मानव जाति में जन्म से ही स्फूर्त हुए जीवन पर्यन्ती रस हैं, क्योंकि शिशु जन्म लेते ही प्रथमतया रोता है, तत्पश्चात् उसके मुख मंडल मुस्कान का भाव उदित होता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी हिन्दी साहित्य का इतिहास (पृष्ठ: ४७५) पर एक जगह कहा है-'दया और करुणा दुखात्मक भाव हैं, हास्य आनंददायक है। दोनों की एक साथ स्थिति बात ही बात है।' उन्होंने हास्य के साथ भक्ति या प्रेम भाव का ही सामंजस्य माना है। इससे हास्य की ऐतिहासिक महत्ता तो स्वयं सिद्ध होती ही है, साथ ही मेरी इस धारणा को भी भरपूर बल मिल जाता है कि जीवन जगत् के समस्त सुखात्मक भाव हास्य और सभी दुखात्मक भाव करुण रस के अंग हैं। जहाँ तक प्रश्न व्यंग्य का है, तो रुदन और मुस्कान दोनों ही अवस्थाओं को गहनता से पढ़-समझने से स्पष्ट होकर यही सामने आता है कि नवजात की पहली-पहली मुस्कान ही उसके प्रथमतया रुदन पर संसार का पहला व्यंग्य है। अर्थात्, करुण और हास्य के साथ-साथ व्यंग्य भी अनादि है।

इस समझ से अशोक अंजुम की हास्य-व्यंग्य की ४८ कविताओं की कृति 'जूता ज़िदाबाद' कसौटी पर खरी उतरती है। जैसे हर कुछ का अपना इतिहास होता है वैसे ही जूते का भी अपना एक इतिहास है। उसके इतिहास में न जाकर इतना बताना आवश्यक है कि बीते समय में जब लोग घर से अपनी रिश्तेदारियों के लिए निकलते थे, तो जूते पाँव में पहनकर नहीं चलते थे बल्कि वे उनकी लाठी में टँगे हुए उन्हीं के कन्धे पर सवार रहते थे और गंतव्य से कुछ दूर पहले ही पाँवों को अच्छी तरह झाड़-पोंछ कर पहने जाते थे। इतने आदरित पाँव के इस रक्षक के नाम जन-जीवन में कितने ही मुहावरे भरे पड़े हैं। वर्तमान समय में जूता रहता तो पाँव ही में है, किन्तु इज़्ज़त बचाने के काम भी आता है और उछालने के भी। फ़र्क़ केवल उसके प्रयोग का है। एक नव प्रयोग अशोक 'अंजुम' से भी हो गया है। उन्होंने 'जूता ज़िंदाबाद' के माध्यम से साहित्य पटल पर एक नया मुहावरा गढ़ दिया है। जिस कृति का आवरण ही कुछ नया कर गया हो तो उस कृति में निश्चित ही बहुत कुछ ऐसा ताज़ा-ताज़ा अवश्य होगा, जो मन को तरोताज़ा करेगा।

हास्य, हास-परिहास तथा मनोविनोद आदि सोपानों से होता हुआ उपहास जैसे भावों से अट्टहास तक भी पहुँच ही जाता है। उससे अट्टहासकर्ता तो आनंदित हो लेता है किन्तु आलंबन आनंदित नहीं होता। खिल्ली उड़ाकर अपमानित करके लज्जित करना हास्य की सदाशयता नहीं है। इस भाव से विद्वान समालोचक और हास्य के रचनाधर्मी सब सदा से सहमत हैं कि शुद्ध हास्य वही है जिसमें आलंबन को भी उतना ही आनंद प्राप्त हो जितना कि अन्यजनों को। अशोक अंजुम की कविता 'चिकनगुनिया' की ये पंक्तियाँ हास्य के इस मानक पर शत-प्रतिशत खरी उतरती हैं... कि उसका दिल भी मेरे वास्ते कब से धड़कता था / कि मेरे नाम से तब जिस्म का कन-कन फड़कता था / मगर इज़हार में तुमने बड़ी ही देर कर डाली / कि अब मुंबई का एक बंदा है मेरे बाग का माली

उर्दू की नज़्म के स्वरूप वाली यह कविता आद्योपांत हास्य के इसी सात्विक भाव से गुदगुदाती चली गई है और आनंद के प्रयोजन में सभी अशिष्ट विकारों से बचकर हास्य की उद्धरणीय रचना है। इसमें हास्य का वैभव शिष्टता में परिलक्षित है।

हास्य ही, हास्य-व्यंग्य के रास्ते से विशिष्ट व्यंग्य की गूढ़ यात्रा के गंतव्य तक जाता है। हास्य-व्यंग्य तो हास्य व व्यंग्य के एक साथ कम या अधिक समन्वित रूपों का ही स्वरूप ठहरा। इसमें दोनों ही अपनी-अपनी प्रतिष्ठा पाये होते हैं जबकि हास्य में व्यंग्य का पुट उसके

स्वभावानुगत होता ही है, किन्तु व्यंग्य में हास्य की भी सृष्टि हो, यह आवश्यक नहीं है। यह पहले ही कहा जा चुका है कि नवजात के रोने के बाद मुख पर आई मुस्कान बहुत बारीक व्यंग्य होकर बड़ा गहरा व्यंग्य होती है। अशोक अंजुम की 'उनकी होली' रचना का यह अंश हमको व्यंग्य की ऐसी ही गहराई तक ले जाता है... होली पर वे / सुबह-सुबह पीकर निकले / शाम तक न आये / तो ढुँढ़वाए गए / जनाब नाली में पाए गए।

और हास्य-व्यंग्य का बेहतरीन उद्धरण उनकी ग़ज़ल 'खम्भा उखाड़ के' से यूँ निकलकर सामने आता है... हैरत है, रेस कछुए ही क्यों जीतें बारहा / देखे नहीं हैं रंग क्या तुमने जुगाड़ के...

उनकी 'भ्रष्टाचारी न होने का दुख' कविता का एक न्यूनांश ही शिक्षा जगत के संपूर्ण तंत्र में पनप आई घातक वृत्ति के पेंच कसने के भाव से व्यंग्य का वैशिष्ट्य लेकर जो उतरा है, वह क्या खूब है... एक तरफ शिक्षक / शिक्षा के नाम पर / ज्ञान को बाज़ारू बना रहे हैं, / दूसरी तरफ- आवारागर्दी करते एकलव्य / सारी व्यवस्था को अँगूठा दिखा रहे हैं।

कुछ विद्वान कहते रहे हैं कि हास्य में बुद्धि का लोप हो जाता है और हास्य प्रयोजन शून्य है। मेरी समझ से वह हास्य ही है जिसमें बुद्धि अपेक्षाकृत सर्वाधिक तीव्र गति से अपने धर्म को निभाती है। जहाँ तक हास्य के प्रयोजन का प्रश्न है, तो सभी विद्वान आनंद को उसका प्रयोजन अवश्य मानते आए हैं। जिसका एकमात्र प्रयोजन आनंद ही आनंद हो, उसे निष्प्रयोज्य ठहराना न्याय संगत नहीं लगता। अशोक अंजुम की 'वाह री जीत' कविता की इन पंक्तियों को पढ़ते-सुनते यदि बुद्धि का लोप हुआ रहे तो हास्य का पास आना संभव है क्या... पत्नी ने भृकुटी तानी / न मानना था, न मानी / अंगद के पाँव की तरह / निश्चय पर अड़ गई।

ये पंक्तियाँ हास्य के प्रति मेरे सद्भावपूर्ण निरपेक्ष भाव को ईमानदारी के साथ प्रमाणित करती हैं।

शिष्टता, मिष्टता और विशिष्टता क्रमशः हास्य, हास्य-व्यंग्य और व्यंग्य की पासंग शून्य कसौटी होकर तीनों का ही सृजनात्मक गौरव हैं। इस तराजू पर अशोक अंजुम की इस कृति की किसी एकाध रचना को छोड़कर सभी टनाटन हैं। उनकी ...'किस' की कविताएँ में हास्य के विविध चित्र उभरे हैं। 'किस' शब्द में जो श्लेष है, उसने भी अशिष्टता को फटकने नहीं दिया जबकि मंचों के हास्य कवि श्लेष का प्रयोग अशिष्टता उड़ेलने के मकसद से ही करते आये हैं- जब मैं छोटा था / खूब समझता था / कि ये जवान लड़कियाँ / मुझे बच्चा समझकर / मुझसे नहीं डरती हैं / आपस में / 'किस' की बात करती हैं।

उनकी 'आम आदमी' कविता में आम आदमी तो 'आम' है। इसमें घुल आई मिष्टता की रसधार का आस्वादन रस विभोर करके व्यंग्य की लम्बी यात्रा की कहानी जोड़ जाता है... आम आदमी! / ...यानी कि पका हुआ आम / इसे जितना निचोड़ो / जितना चूसो / उतना ही मज़ा आता है, / और चूसने के बाद / गुठली की तरह/ फेंक दिया जाता है।

उनकी 'पागलखाना' कविता नेताओं, साम्प्रदायिकता, कवि, इंजीनियर,अध्यापक, पुलिस आदि द्वारा समाज के प्रति दायित्वों की अनदेखी को उकेर कर जिस प्रकार व्यंग्य की संचेतना में लाकर उसे दुत्कारती है - वह कमाल है, अद्‍भुत है और लाजवाब है, क्योंकि इसमें सत्यवादिता के सच में उसके जिस गौरव का उत्थान हुआ है वही किसी समाज का वास्तविक आत्म गौरव है। प्रस्तुत पंक्तियाँ व्यंग्य वैशिष्ट्य के चरम का पाला स्पर्श करके ही मानती हैं... वह बोला-'सुन! / इस पर सत्य बोलने के / दौरे पड़ते हैं, / इसकी इस ख़ौफनाक बीमारी से / अच्छे-अच्छे डरते हैं। / यह भ्रष्टाचार के अथाह सागर में / छेदों से भरी अपनी / आदर्शवाद की नाव खेता है / इस सतयुगी ने कलयुग में जन्म लिया है / बताओ, यह पागलपन नहीं / तो और क्या है? / मैंने आज तक / किसी महापुरुष को / छूकर नहीं देखा / यदि इससे / नजदीक से मिलवा दे / तो इसके चरण छू लूँ/ ...तेरा एहसान न भूलूँ।

नई पुस्तक

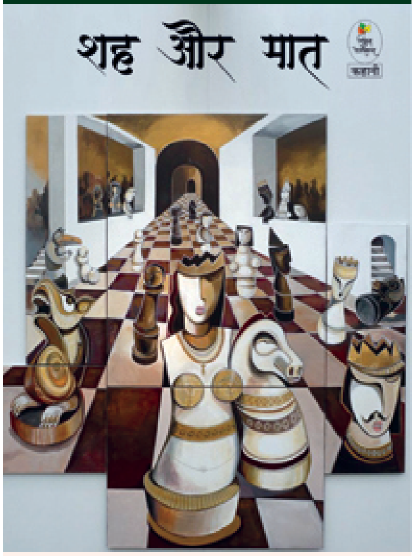

शह और मात

(कहानी संग्रह)

लेखक : मंजुश्री

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

वरिष्ठ कथाकार मंजुश्री का यह कहानी संग्रह अभी प्रकाशित होकर आया है। इस संग्रह में शह और मात, एक नयी सुबह, जाओ हमरी सोनचिरैया.....उड़ जाओ आकास, शीशों की कैद में, चौड़ी होती दरारें, गिद्ध, गिन्नी का बस्ता, मुट्ठी में बंद जिंदगी, गिरगिटी चेहरे, महाकुंभ, गुत्थियाँ, आतिश-ए-चिनार कहानियाँ संकलित की गई हैं। वरिष्ठ कथाकार, उपन्यासकार, व्यंग्यकार सूर्यबाला जी इस संग्रह को लेकर कहती हैं- पढ़ते-पढ़ते ये कहानियाँ हमारी इतनी अपनी हो जाती हैं कि उनके कहानीपन को भूलकर हम उस दुनिया में रचने-बसने लगते हैं। संवेदना की स्निग्धता से भीगी ये कहानियाँ कहीं बहुत गहरे कचोटती हैं तो कहीं चुपचाप रुई का एक भीगा फाहा रख देती हैं। चरम सीमा और अंत को लेकर भी बिना ज़्यादा ऊहापोह के वे अंश-अंश संवेदनाएँ बाँटने में विश्वास रखती हैं। रवानगी, प्रवाह और सहजता उनकी कहानियों में पंख बाँध देती हैं जिससे उनकी कहानियों में बाधा नहीं आने पाती।

000

हास्य तो स्वयं में एक स्वादिष्ट औषधीय रसायन है। जनहित के कल्याणकारी मानकों और मूल्यों में जहाँ भी असंतुलन और वैषम्य दीखता है, वहीं से हास्य स्फूर्त होकर फूट पड़ता है और व्यंग्य सरसराकर उठ बैठता है। हास्य जीवन की कुल विकृतियों का औषधीय रसायन होकर भोक्ता को दुख में भी सुख का आनंद बाँटता है और विसंगतियों, विकृतियों आदि से समाज में उत्पन्न भयावह दृश्यों से निजात दिलाने का महत् सुकार्य करने में व्यंग्य ही है जो सतत् लगा रहता है, इसीलिए इसकी कड़वी गोलियाँ निराकरण का औज़ार भी हैं और हथियार भी। इसके भीतर इंजेक्ट करने से लेकर चीराफाड़ी(सर्जरी) तक की तैयारी हर वक़्त अपना दायित्व निभा रही होती है। हास्य-व्यंग्य दुख-दर्दों और चोटों पर सौहार्द के मरहम से पीड़ाओं को सोखता रहता है। अशोक अंजुम की कृति 'जूता ज़िंदाबाद' में हास्य के तीनों दायित्वों का ख़ूबसूरती से निर्वाह हुआ है। उनकी रचनिधर्मिता में सामाजिक सरोकारों की जीवंतता के प्रयास लोक जीवन के उद्धारक होकर सामने आए हैं, जो कवि के भीतर के जन हिताय भाव के सर्वोत्तम साक्षी हैं और उसे राष्ट्र के प्रति दायित्वबोधक बनाने में सक्षम हैं। हाँ, उनकी बस्ती बनाम तवायफ' रचना की ये पंक्तियाँ... और इधर हमारी बस्ती भी/ बार-बार दुल्हन बनने के कारण / दुल्हन नहीं रही / तवायफ हो गई है... / मेरे भीतर नहीं उतर सकी हैं।

उनकी इस कृति में कविता के विविध विधाई रूप हैं। छंद भी है, मुक्त छंद भी और छंद मुक्त भी मौजूद है। इन सब को मिलाकर देखा जाय तो इनमें हास्य की फुहार भी है, हास्य-व्यंग्य का उपहार भी और व्यंग्य की मारक धार भी। आम बोलचाल की मिश्रित भाषा हास्य-व्यंग्य का प्राण है, जो इस कृति की बेहतरीन ख़ूबसूरती है। इससे पाठक और श्रोता निश्चित रूप से जुड़ेंगे और ख़ूब रसास्वादन करेंगे। इस पोटली में वह सब कुछ है जो जन मानस के अपने मन का है और अपने मन के लिए है। सब कुछ चुटकीदार होकर चटपटा ही चटपटा है। कुछ भी आयासित नहीं लगता, सब कुछ स्वयं स्फूर्त जैसा है। यही कविता की बड़ी कमाई होती है। क्योंकि, कविता टेबल वर्क नहीं है। वह कहीं भी किसी भी क्षण अंतस में उपज कर भीतर ही भीतर पनपती हुई बिना किसी भी साधन के स्वयं ही बुनी जाकर उसी भाव रूप में बने रहने के लिए कवि प्रयासों से कागज़ पर उतरती है। इस भाव से अशोक अंजुम को हास्य-व्यंग्य का एक कसा हुआ और मँझा हुआ साहित्यकार कहने में ही नहीं, मानने में भी किसी को कोई गुरेज नहीं होना चाहिए, मुझे तो उनके प्रारंभ से ही नहीं है। अब तो वह वैसे भी एक स्थापित साहित्यकार हैं। उनकी दो दर्जन प्रकाशित साहित्यिक कृतियाँ और उनके संपादन में सामने आई तीन दर्जन विविध विधाई कृतियाँ स्वयं ही प्रमाण हैं कि अशोक अंजुम ने जी लगाकर और जी भर के मन से कार्य किया है। उन्हें मिले अनेक पुरस्कार और सम्मानों ने उनके सृजन, ऊर्जा और परिश्रम को प्रमाणित भी किया है। साहित्य जगत में उन्हें मिला यथोचित स्थान उनकी भरपूर सराहना ही तो है। भविष्य में उनसे बहुत कुछ और, और भी श्रेष्ठ होकर सामने आने की अपेक्षाएँ उनके सभी प्रियजनों की हैं, मेरी भी हैं। यह सब साकार हो।

अशोक अंजुम अपनी बहुआयामी साहित्यिक साधना के समानांतर पिछले बारह वर्षों से एक बड़े जोखिम भरे कार्य का जीवटता के साथ निर्वहन करने में लगे हैं, यानी कि त्रैमासिक पत्रिका 'अभिनव प्रयास' का संपादन। यह पत्रिका सुधी जनों को निरंतर उपलब्ध हो रही है, बिना ठहरे और बिना रुके। जब नवनीत, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान और कादम्बिनी जैसी पत्रिकाएँ साँस छोड़ गई हों तब ऐसे में 'अभिनव प्रयास' का प्रकाशन और उसकी निरंतरता हिन्दी साहित्य के लिए वास्तव में एक प्रणम्य सत्कर्म है। मेरी प्रभु से कामना है कि सब जिस गति से चल रहा है, चलता रहे और अशोक अंजुम में ऊर्जा भरी रहे तथा उनकी यह जीवटता बनी रहे। मैं उनके उज्ज्वल वर्तमान के उज्ज्वलाय मान भविष्य की कामना करता हूँ।

000

नई पुस्तक

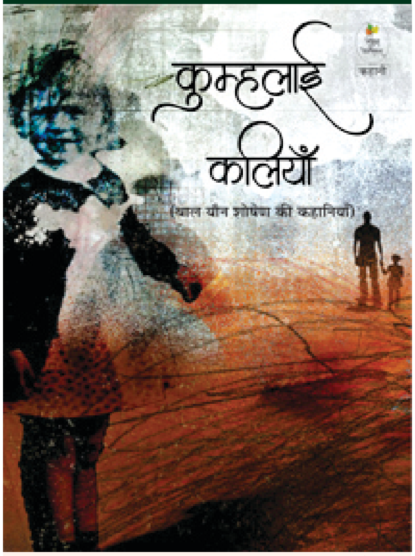

कुम्हलाई कलियाँ

(कहानी संकलन)

संपादक : सीमा शर्मा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

बाल यौन शोषण जैसे संवेदनशील विषय पर आलोचक, समीक्षक सीमा शर्मा द्वारा संपादित यह कहानी संकलन शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आया है। संकलन में टॉरनेडो / सुधा ओम ढींगरा, लापता पीली तितली / मनीषा कुलश्रेष्ठ, ताऊ जी कितने अच्छे हैं / योगिता यादव, उसके हिस्से का आसमान / अंजू शर्मा, उत्सव / नीलिमा शर्मा, होठों की बिजली / विभा रानी, दुःस्वप्न / जयश्री राय, डर / सपना सिंह, ताला / मीनाक्षी स्वामी, गुठलियाँ / एम जोशी हिमानी, चमेली सयानी हो गई / डॉ. कृष्णा श्रीवास्तव कहानियाँ संकलित की गई हैं। संपादक सीमा शर्मा इस संकलन को लेकर कहती है- इस संग्रह की सभी कहानियाँ एक दूसरे से बहुत अलग हैं एवं समस्या के विविध रूपों की पड़ताल करती हैं एवं अलग-अलग बालकों पर इसके प्रभाव और उनकी प्रतिक्रिया को भी रेखांकित करती हैं। इन कहानियों को केवल कहानी के रूप में न देखकर किसी सीख के रूप में लेना होगा। जिससे हम अपने बच्चों को सुरक्षित रख सकें।

000

पुस्तक समीक्षा

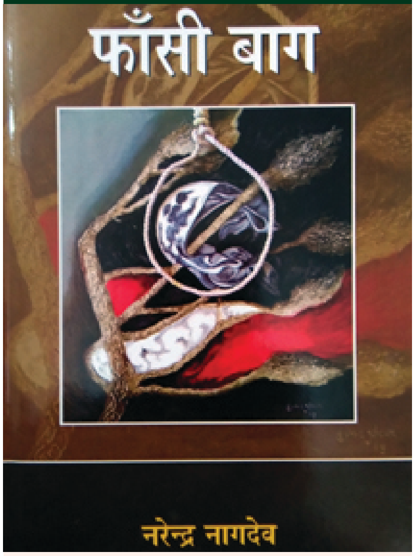

फाँसी बाग

(उपन्यास)

समीक्षक : राकेश भारतीय

लेखक : नरेन्द्र नागदेव

प्रकाशक : किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली

नरेन्द्र नागदेव हिन्दी उन रचनाकारों में से एक हैं जो तमाम तरह के वाद-विवाद, उखाड़-पछाड़, गुट-गोल से सतत आक्रांत साहित्य-जगत् में दशकों से चुपचाप सृजनरत हैं और अपने साहित्यिक सामर्थ्य को सिर्फ अपनी रचना के बूते पर सिद्ध करने में विश्वास रखते हैं। नरेन्द्र नागदेव की रचनाओं की रेंज व्यापक है, जैसे एक तरफ वे 'अल गज़ाला' जैसी अविस्मरणीय कहानी में वे रोज़गार के चलते दूसरे देश में रहने की दिक्कतों को बड़ी बारीकी से उकेरते हैं तो दूसरी तरफ 'लूनाटिक' जैसी कहानी में सामंती अमानवीयता के पहलुओं पर प्रकाश डालते हैं। नागदेव के नवीनतम उपन्यास 'फाँसी बाग' के केन्द्र में भी तथाकथित उच्च जाति के दंभ के निशाने पर आ गई एक प्रतिभाशाली पर वंचित तबके की लड़की है जो अंततः सामंती क्रूरता का शिकार बन जाती है। जाति व्यवस्था ने भारतीय समाज का जितना अहित किया है, शायद ही किसी और चीज़ ने किया। 'भगवद्गीता' में गुण एवम् कर्म के आधार पर चारों वर्णों की स्पष्ट व्याख्या के बावजूद निहित स्वार्थों से चालित और जन्म पर आधारित जाति व्यवस्था एक षड्यंत्र के तहत थोपी गई और इस विकृत व्यवस्था ने लाखों भारतीयों को अपने प्राप्य से वंचित किया, अब भी कर रही है। नागदेव के नवीनतम उपन्यास में इसी नकली व्यवस्था का शिकार बनी एक तथाकथित नीची जाति की प्रतिभाशाली लड़की की गाथा है।

नागदेव की कथा कहने की शैली बिलकुल अलग है। वे बहुआयामी प्रतिभा रखते हैं और चित्रकार तथा वास्तुकार के रूप में भी समान रूप से समर्थ हैं। साल्वाडोर डाली जैसे चित्रकारों ने सर्यिलिज़्म (अतियथार्थवाद) की शैली को अविस्मरणीय बना दिया। नागदेव की कथा कहने की शैली में सर्यिलिज़्म का प्रभाव स्पष्ट नज़र आता है। यह उपन्यास भी उसी शैली में ढाला गया है।

उपन्यास के प्रमुख चरित्रों की बात करें तो सबसे प्रभावशाली चरित्र लड़की का ही है। बावजूद अपनी वंचित पृष्ठभूमि के, उसकी नैसर्गिक प्रतिभा और प्रतिभाजनित आत्मविश्वास पूरी तरह उभर कर सामने आये हैं। अपने से कमतर प्रतिभा के पर तथाकथित उच्च जाति के सहपाठी के प्रति उसका सहानुभूतिपूर्ण रुख़ उसके मानवीय गुणों को उद्घाटित करता है। वह

राकेश भारतीय
590, डी डी ए फ्लैट्स, पाकेट-1
सेक्टर 22 द्वारका, नई दिल्ली-110077
मोबाइल- 9968334756

चरित्र एक जीती-जागती सामाजिक त्रासदी के रूप में पाठकों को याद रहेगा क्योंकि उसकी प्रतिभा ही उसके नाश का कारण बन जाती है। दूसरी तरफ, लड़की के पिता मातादीन का चरित्र किंचित अविश्वसनीय हरकतों के कारण छाप नहीं छोड़ पाता। उदाहरण के लिए अपनी लड़की को बचाने की कोशिश में उसके अंक कम करवाने से संबंधित मातादीन की हरकतें स्वाभाविक रूप से आई नहीं लगतीं, पाठक उन्हें आरोपित ही महसूस करेगा। सर्यिलिज़म को कथा में ज़रूरत से ज़्यादा आरोपित करने की वजह से वह बेटी की प्रतिभा को मुकाम तक पहुँचाने के लिए लालायित पिता और प्रतिभा जनित ईर्ष्या का निशाना बनने से उसे बचाने के लिए सावधान पिता के बीच झूलता हुआ एक 'कामिकल' (हास्यास्पद) चरित्र बनकर रह जाता है।

गाँव में तथाकथित उच्च जाति के दंभ का वाहक बने चरित्र यथा बड़े ठाकुर और उसके दबंगों के चरित्र पारंपरिक शैली के अनुसार ही ढाले गए हैं यानी वर्चस्ववादी मंसूबों को पूरी क्रूरता के साथ लाचार वंचित तबके पर थोपते हुए। ऊपरी तौर पर न्याय का दिखावा करते हुए बड़े ठाकुर की ठंडी क्रूरता बख़ूबी उभारी गई है पर दबंगों के साथ उछलता-कूदता चल रहा शेर उपन्यास का अनावश्यक हिस्सा है। संभवत: यह सर्यिलिज़म से ज़रूरत से ज़्यादा मोह का नतीजा है। एक छोटे से उपन्यास में ऐसी कमियाँ खटक जाती हैं। छोटे ठाकुर यानी सामंती तामझाम के वारिस पर दलित लड़की के सहपाठी का चरित्र उभारने में नागदेव कामयाब रहे हैं। वह अपनी विरासत के असहज भार को ढोने पर मजबूर है पर मानवीय संवेदनाओं की उसमें कमी नहीं है। जिस द्वंद्व से गुज़रते हुए उसे चित्रित किया गया है वह इस पृष्ठभूमि और उम्र के चरित्र पर बिलकुल स्वाभाविक लगता है। मास्टर विनय नारायण सतत द्वंद्व में फँसे उन तथाकथित बुद्धिजीवियों की तरह ही लगते हैं जो सिद्धांत कितना भी बघार लें, सामंती क्रूरता के खिलाफ़ खड़े होने लायक साहस नहीं जुटा पाते। भारत का इतिहास गवाह है कि कायर और परोक्ष रूप से सामंती क्रूरता को समर्थन दे रहे ऐसे बुद्धिजीवियों ने आम जनता को सतत प्रताड़ित बनाये रखने में, एक तबके के रूप में, कितनी अमानवीय भूमिका निभाई है।

किसी भी उपन्यास में चरित्रों के संवाद उनकी पृष्ठभूमि के अनुरूप ही रखना एक उपन्यासकार के सामने अच्छी-ख़ासी चुनौती होती है। इस उपन्यास में लड़की के संवाद तो उसके चरित्र की बुनावट के अनुरूप ही हैं पर उसके पिता मातादीन के संवाद कई जगह एकदम से खटक जाते हैं क्योंकि वैसी भाषा में उस पृष्ठभूमि का चरित्र बिलकुल नहीं बोलेगा। भाषा के बेहतर प्रयोग का उदाहरण उपन्यास का वह हिस्सा है जहाँ नागदेव छोटे ठाकुर के द्वंद्व को उभारते हैं, उस चरित्र की बेबसी स्वाभाविक लग रहे शब्दों में ढाली गई है। भाषा के बेहतर प्रयोग का उदाहरण उपन्यास का अंतिम खंड भी है जहाँ अत्याचार के स्थल के वर्णन, दारोगा की लीपा-पोती, गाँववालों का अत्याचार का मूक दर्शक बने रहना, योजनाबद्ध तरीके से छोटे ठाकुर को दूर भेजा जाना इत्यादि सधी हुई भाषा में वर्णित है।

उपन्यास का अंत किंचित अप्रत्याशित रूप से किया गया है पर यह अंतिम खंड सामंती क्रूरता को बखूबी उभारने में समर्थ है। लड़की और छोटे ठाकुर के बीच फूटा प्यार का छोटा सा अंकुर भी संयत और मर्यादित रूप से वर्णित है, उस प्रेम की भयावह परिणति दो बिलकुल ही भिन्न प्रकृति की प्रवृत्तियों को रेखांकित करती है जो उपन्यास के केन्द्र में है। सामाजिक बदलाव एक संभावना के रूप में सतत उपस्थित है, यह भी पाठक ज़रूर महसूस करेगा। नरेन्द्र नागदेव का रचना-कर्म साहित्यकारों के उस वर्ग के धैर्य और निष्ठा का सूचक है जो जीवन के तमाम रंगों को साहित्य में प्रामाणिक रूप से चित्रित करने में लगे हुए हैं, साहित्य का डेरा-डंडा उखाड़ने में लगे विघ्नविलासी महंतों के बावजूद। इस उपन्यास की तारीफ इसलिए भी की जानी चाहिए कि यह चरित्रों को पूर्णत: धवल या पूर्णत: कज्जल खाँचों में सीमित रखने के लोभ में नहीं पड़ता, इस विषय को उठाने वाले अन्य उपन्यासों की तरह।

000

नई पुस्तक

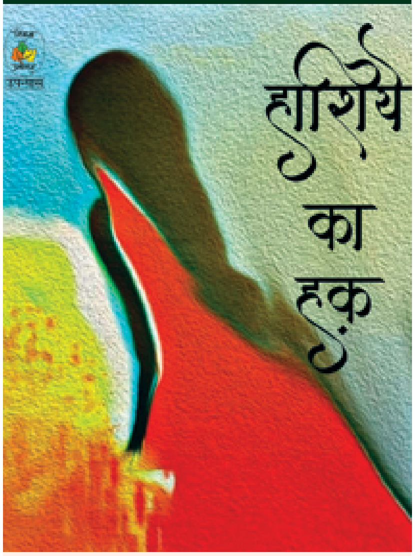

हाशिये का हक़

(साझा उपन्यास)

संपादक- नीलिमा शर्मा

लेखक- नीलिमा शर्मा, डॉ. रंजना जायसवाल, डॉ. गीता द्विवेदी, डॉ. जया आनंद

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

हाशिये का हक़ अपनी तरह का अनूठा साझा उपन्यास है जिसे चार लेखकों नीलिमा शर्मा, डॉ. रंजना जायसवाल, डॉ. गीता द्विवेदी, डॉ. जया आनंदने मिल कर लिखा है और नीलिमा शर्मा ने इसका संपादन किया है। इस तरह के प्रयोग हिन्दी में नहीं के बराबर दिखाई देते हैं। इस उपन्यास की संपादक नीलिमा शर्मा उपन्यास को लेकर कहती हैं- इस उपन्यास की कहानी किसी की व्यक्तिगत कहानी नहीं है। इस उपन्यास में एक ही चरित्र में अनेक चरित्रों का समावेश हुआ है, तो कहीं अनेक चरित्रों के विभिन्न रंग एक ही व्यक्ति में सम्मिलित हैं। जिस पात्र से पाठक को खुद को जुड़ा हुआ महसूस करें वह इस उपन्यास का प्रमुख पात्र है। इस कथानक को आज के सामाजिक सन्दर्भों के आधार पर उपन्यास रूप में बुना गया है।

000

पुस्तक समीक्षा

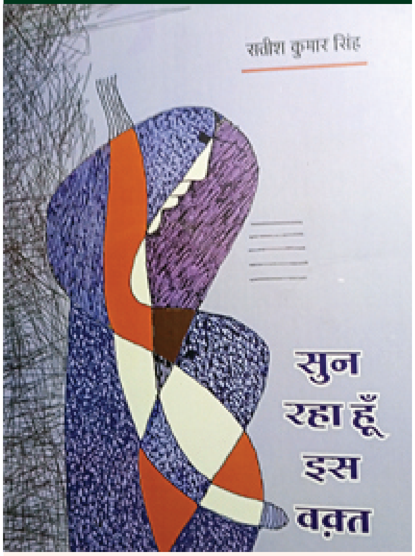

सुन रहा हूँ इस वक्त
(कविता संग्रह)

समीक्षक : अश्विनीकुमार दुबे

लेखक : सतीश कुमार सिंह

प्रकाशक : बोधी प्रकाशन, जयपुर

अश्विनीकुमार दुबे
376-बी, सेक्टर आर,
महालक्ष्मी नगर, इंदौर- 45210 (म.प्र.)
मोबाइल- 9425167003
ईमेल- ashwinikudubey@gmail.com

सतीश कुमार सिंह बहुत संभावनाशील युवा कवि हैं। सभी अखिल भारतीय पत्र-पत्रिकाओं में आपकी कविताएँ दिखाई देती रहती हैं। इधर उनका पहला कविता संग्रह 'सुन रहा हूँ इस वक्त' बोधी प्रकाशन से छप कर आया है, जिसे पढ़कर अतीव प्रसन्नता है। सच्चाई यही है कि बड़ी कविता गाँव और छोटे क़स्बों से निकल कर आ रही है। हमारे बड़े शहरों में कृत्रिम कविता को ढोल-धमाके के साथ बड़ी कविता सिद्ध किया जा रहा है। वहीं गाँव और क़स्बों में जहाँ जीवन ज़्यादा सरल है, वहाँ कवि ज़्यादा गहराई से अपने वक़्त को देख पा रहा है और सुन पा रहा है, जीवन के स्पंदन को। सतीश कुमार सिंह जांजगीर (चंपा) एक छोटे से क़स्बे में रहते हैं। हालाँकि अतीत में कभी उस क़स्बे को ज्ञानगिरी कहा जाता था। सचमुच छोटे गाँव-क़स्बों में ही साधना हो पाती है। सतीशकुमार सिंह की यह साधना स्थली है। वे यहीं वह सुन रहे हैं, जो अक्सर रह जाता है, अनसुना – इस अनसुने को सुनना, सतीश की कविता है। वे कहते हैं – "जब रात सन्नाटे से घिरी हुई है। तब सुन रहा हूँ बहुत कुछ/ जो सृष्टि की लय में अक्सर रह जाता है अनसुना/ उसे सुन रहा हूँ इस वक्त/"

'सुन रहा हूँ इस वक्त' संकलन में १२३ कविताएँ हैं, जिसमें विविध विषयों पर सतीश ने क़लम चलाई है। इसमें प्रकृति है, प्रेम है, संबंध हैं, रिश्ते हैं, संस्कृति है, इतिहास है और परंपराएँ भी हैं। जीवन के बहुत सारे पक्ष हमें सतीश के इस प्रथम काव्य संकलन में दिखाई देते हैं। प्रेम पर बात करते हुए वे कहते हैं – "जब हम जानना चाहते हैं/ प्रेम के बारे में/ घट रहा होता है और भी/ बहुत कुछ/ प्रेम से हटकर/"

यह सतीश का ढंग है, जब वे किसी विषय पर विचार कर रहे होते हैं, तब उस पर भी विचार

कर रहे होते हैं जो विषय के आसपास घट रहा होता है या जो विषय को अपरोक्ष रूप में प्रभावित कर रहा होता है। वे चीज़ों को उनकी समग्रता में देखना चाहते हैं फिर भी कुछ-न-कुछ छूटता जा रहा होता है जिसे वे सायास अपने शब्दों में पकड़ने का प्रयत्न करते हैं, यह प्रयत्न ही उनकी काव्य साधना है। उनके आसपास का जीवन लोक जीवन है, जिसमें गरीबी है, भुखमरी है, बेरोज़गारी है और न जाने कितनी विसंगतियाँ हैं बावजूद जीवन में आरोह-अवरोह के साथ लय है, इस लय की अभिव्यक्ति सतीश का अभीष्ट है। 'भात' कविता में वे कहते हैं – "सबके चूल्हों पर चढ़कर/ समिधा के साथ/ भोजन यज्ञ में/ स्वाहा का उद्‌घोष बन जाता है भात/ जिसकी उर्जा और ताप से/ होता है, नवजीवन का संचार/"

अपनी लोकभाषा से सतीश कई शब्द शीर्षक उठाते हैं। जैसे टोनही, ढेंकी, गौरसी आदि। लोक जीवन में एक ताप है। वहाँ निरंतर जूझते रहने का ज़रूरी पाठ भी है। कवि उस लोकजीवन में रचा-बसा है, वहाँ जो अप्रकट है, कवि उसे सुन रहा है और शब्द दे रहा है।

कवि का अनुभव संसार बहुत विस्तृत है। इसमें राजनीति है, समाज है और छटपटाता हुआ मनुष्य भी है। बावजूद कवि निराशावादी नहीं है। वह जीवन सरिता में सहज प्रवाहित है। हाँ, वह सजग है। जागरूक है। और चौकन्ना भी। 'राजनीति' कविता में सतीश कहते हैं – "नंबर बदल जाता है/ उनके चश्मों का/ पर लोगों को देखने का उनका नज़रिया वहीं का वहीं रहता है/" सचमुच सत्ता शीर्षों पर कितना कुछ बदलता रहता है। परंतु लोगों को देखने का नज़रिया कहाँ बदलता है? 'अस्पताल में भर्ती बूढ़े' इसमें आदमी की नियति है, एक उम्र में। 'चश्मा' कविता में कवि का आशावाद, जीवन के प्रति उसकी आस्था उभर कर आती है, जब वह लिखता है – "मैं इन चश्मों को तोड़ना चाहता हूँ/ ताकि अंधे समय को/ ठीक-ठीक सुझाई दे/ और धरती की हरियाली में दिखे/ सृजन के ताप से/ दिपदिपाता सूरज का भरा पूरा चेहरा/"

जीवन के प्रति यह आशा और उत्साह कवि समाज के हर वर्ग में देखना चाहता है। समाज और कवि परिपूरक हैं, एक-दूसरे के। कवि सिर्फ अपने एकांत में नहीं जी सकता और समाज कवि के बिना जागरूक नहीं हो सकता। सतीश कहते हैं – "कितना ज़रूरी है/ समाज के लिए कवि/ कवि के लिए समाज/ समझना होगा समाज को भी/ कवि को भी/" समाज में कवि एक ज़िम्मेदार भूमिका में है इसीलिए सतीश कहते हैं – "लिखो कवि/ समय की सूखी स्याही पर/ अपनी आँख का पानी उड़ेलकर/ अपने युग की अंतरकथा/"

सतीश की इन कविताओं में समाज की अंतर कथाएँ ही हैं। उनकी पैनी दृष्टि गहरे जाकर पड़ताल करती है। वह देखती है, जो सहज ऊपर से स्पष्ट नहीं है। कवि वह सुनता है, जो शोर के पीछे ध्वनित हो रहा है। इस प्रकार इस संग्रह को पढ़ते हुए हम अपने आसपास के अमूर्तन को समझते हैं। प्रमुख बात है, कवि का गहन आशावाद। मृत्यु एक शाश्वत सत्य है। परंतु यहाँ जीने के इतने उपादान हैं फिर मरने का विचार ही क्यों? कवि कहता है – "नहीं मरूँगा मैं/ कि जब तक/ कार्तिका पूर्णिमा व्रत के साथ/ नदी में प्रवाहित दीप/ झिलमिलाते रहेंगे/ दीपदान पर्व के साथ/ पढ़ी जाती रहेंगी/ तुलसी के चौरे के पास/ रामायण की चौपाईयाँ/ नहीं मरूँगा मैं/"

सतीश की भाषा सधी हुई है। वे विंबों और प्रतीकों का समुचित प्रयोग करते हैं। उनकी कविता में प्रभाव है। ये कविताएँ ठहर कर पढ़े जाने का आग्रह करती हैं। कई बार पढ़ने और पढ़ते रहने पर इनकी अंतरध्वनि प्रकट होती है।

ये कविताएँ हमारे अनुभव को समृद्ध करती हैं। सतीश एक संभावनाशील कवि हैं। अपने पहले ही कविता संग्रह में वे प्रभाव छोड़ते हैं। इस संग्रह से गुज़रते हुए पाठकों को प्रतीक्षा रहेगी उनके और कविता संग्रहों की। सतीश आशा और विश्वास के कवि हैं। वे अपनी कविताओं से यही भाव पाठकों में जगाते हैं।

000

नई पुस्तक

बहती हो तुम नदी निरंतर

(गीत संग्रह)

लेखक : श्याम सुंदर तिवारी

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

गीतकार श्याम सुंदर तिवारी का यह नया गीत संग्रह शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आया है। इस संग्रह में अलग-अलग भावभूमि पर लिखे गए उनके गीत संकलित किए गए हैं। सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार कैलाश मंडलेकर इस संग्रह को लेकर लिखते हैं- श्याम सुन्दर तिवारी का नवगीतकार अपने समय की नब्ज और धड़कनों से पूरी तरह वाकिफ़ है। उन्हें पता है कि आततायी ताक़तें बम्बई से लेकर बोस्निया तक समूचे भूमण्डल को नष्ट करने के लिए आतुर हैं। रिश्तों की आत्मीयता दरक रही है। भोगवाद और लाभ लोभ के गणित ने हमारे सामाजिक ताने-बाने को छिन्न भिन्न कर दिया है। दरअसल श्याम सुंदर तिवारी के इन गीतों की मार्मिकता और मुखरता में आगत समय की पदचाप, तथा प्रेम और सौंदर्य की अनुगूँज को आसानी से महसूस किया जा सकता है। तमाम नकारात्मकता के बीच, बहुत कुछ सकारात्मक खोज लेने की उनकी इस चाह का स्वागत होना चाहिए।

000

पुस्तक समीक्षा

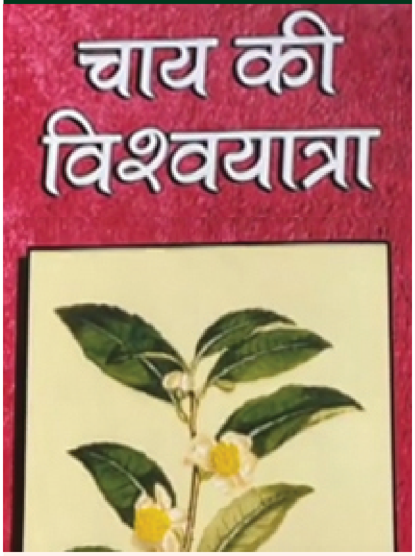

चाय की विश्व यात्रा
(निबंध)

समीक्षक : आराधना झा श्रीवास्तव

लेखक : कादंबरी मेहरा

प्रकाशक : अयन प्रकाशन, नई दिल्ली

आराधना झा श्रीवास्तव
सिंगापुर
ईमेल- jhaaradhana@gmail.com

चाय की गर्मागर्म चुस्कियों के बिना जिनकी भोर नहीं होती, चाय के ऐसे दीवानों को देखकर मैं अक्सर सोचा करती थी कि आख़िर चाय की इस प्याली में ऐसा कौन सा नशा घुलता है जिसके पीछे सब अपनी सुध-बुध बिसराए बैठे हैं। ब्रिटेन की प्रसिद्ध साहित्यकार कादंबरी मेहरा की किताब 'चाय की विश्व यात्रा' पढ़ने के बाद इस प्रश्न के उत्तर के साथ-साथ मुझे ऐसे कई चौंकाने वाले तथ्यों के बारे में पता चला जिन्हें जानकर अच्छे-अच्छों का नशा काफ़ूर हो जाए। क्या आपने कभी सोचा है कि चाय की इस प्याली में कितने मासूम बेगुनाहों के ख़ून का रंग घुला है? क्या आप जानते हैं कि शक्कर के जिन दानों से आप अपनी चाय की प्याली में मिठास घोलते हैं उसने कितनों की ज़िंदगी में ज़हर घोला है? यदि नहीं जानते हैं तो आप मानव इतिहास के सबसे महत्त्वपूर्ण अंश से अब तक अनभिज्ञ हैं। आप नहीं जानते हैं कि हमारी भारतीय संस्कृति, ज्ञान और प्राकृतिक संपदा ने ही वह ज़मीन तैयार की है जिस पर आधुनिक विश्व और वैश्विक समाज खड़ा है। समुद्री यात्राओं और इन यात्राओं के फलस्वरूप होने वाले वैश्विक परिवर्तनों की जड़ में हैं चाय की ये 'इक कली और दो पत्तियाँ' और साथ में 'गन्ने के डंठल में संग्रहित हुई सूरज की वह ऊर्जा' जिसने परिवर्तन का ऐसा चक्र चलाया जिसके फलस्वरूप कई संस्कृतियों को अपनी जड़ों से उखाड़ कर सुदूर देश में जाकर फेंक दिया गया। सोने की स्याही से लिखा हुआ यह मानव इतिहास का वह काला अध्याय है जिसे हम पढ़ना नहीं चाहते, क्योंकि उसे पढ़ने के बाद हमारी चाय के साथ ही मिठाई का स्वाद भी बिगड़ सकता है। सहूलियतवाद के इस दौर में हम ऐसे तथ्यों को जानने के बाद भी अनदेखा कर देते हैं, क्योंकि सत्य को स्वीकारने के लिए साहस की आवश्यकता होती है। लेखिका कादंबरी मेहरा जी के साहस की दाद देनी पड़ेगी कि उन्होंने ब्रिटेन में निवास करते हुए भी निर्भीक होकर ब्रिटिश हुक़ूमत और यहाँ के लोगों द्वारा विश्व भर में किए गए अनाचार का खुलकर ज़िक्र किया है। किन अमानवीय परिस्थितियों में चाय और चीनी की खेती के लिए मज़दूरों को तैयार किया गया और उनकी ज़िंदगी को नफ़े-नुक़सान के तराज़ू पर तौला गया। भोग की मानसिकता ने किस तरह विवेक की नृशंस हत्या की और लाखों-करोड़ों बेगुनाहों के ख़ून, पसीने और आँसुओं से गीली ज़मीन पर कितनी क्रूरता से साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद और पूँजीवाद की नींव रखी गई..जब आप पढ़ेंगे तो आपका दिल दहल उठेगा।

किताब के शीर्षक से यदि आप यह अंदाज़ा लगा रहे हैं कि इसमें सिर्फ़ चाय की खेती, उसकी क़िस्में और इसके ख़ुशबूदार इतिहास के बारे में बताया गया है तो यक़ीन मानिए चंद पन्ने पलटते ही आपका सारा भ्रम दूर हो जाएगा। आगे क्या...इस जिज्ञासा में आप जैसे-जैसे इस किताब के पन्नों में गहरे उतरते जाएँगे वैसे-वैसे आप मानव-इतिहास के उस पहलू को जान पाएँगे जिसे इतिहास की किताबों में हमें कभी पढ़ाया ही नहीं गया। हमें जो इतिहास विद्यालयों में पढ़ाया गया वह इतना परिष्कृत था जिसने घटनाओं को समग्रता से समझने की न दृष्टि दी और न ही दिशा। यह किताब भारत के साथ-साथ विश्व भर में घटित होने वाली घटनाओं को उसके संदर्भों के साथ समग्रता से समझने की दृष्टि प्रदान करती है। बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार के साथ ही चाय की ख़ुशबू चीन, जापान और हॉलेंड होते हुए ब्रिटेन, अमेरिका सहित यूरोपीय देशों तक फैली। किस तरह चाय की इस फसल ने चीन को अफ़ीम की लत लगायी। किस तरह महीनों तक बोस्टन के समुद्र के रंग को लाल करने वाली चाय की पत्तियों ने अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम को एक नया रंग और ऊर्जा प्रदान की। किस तरह चाय की पेटियों के संतुलन के लिए चीनी

मिट्टी के वे बर्तन बनाए गए जो आज संशोधित रूप में हमारे रसोईघर की शान बन बैठे हैं। हिमालय की तलहटी में औषधि के रूप में प्रयोग की जाने वाली प्राकृतिक वनस्पति की इन पत्तियों ने सागर की लहरों पर सवार होकर जितना विश्व और विश्व रंग देखा है उसकी तो आप कल्पना भी नहीं कर सकते हैं।

किताब का स्वर तीखा है और लेखिका कादंबरी मेहरा ने बिना चाशनी में लपेटे तत्कालीन घटनाओं का ज़िक्र किया है। कहीं-कहीं पर उनके व्यक्तिगत विचार भी हावी हुए हैं जो उन घटनाओं के वर्णन करते समय उपजे आक्रोश का परिणाम है। वह मात्र घटनाक्रमों के बारे में नहीं बताती अपितु उसके कारण और उसके प्रभाव की बात भी करती है और इनके विश्लेषण के दौरान अपने भीतर उपजे आक्रोश को पचा नहीं पातीं। ऐसा होना स्वाभाविक भी है, क्योंकि मानवीय संवेदनाओं से कटकर तटस्थ लेखन करना बहुत कठिन कार्य है। यह मुखरित स्वर संभव है कुछ पाठकों को खटके किंतु यही वह स्वर है जो पाठकों के दिमाग की नसों को झकझोरता भी है। कादंबरी मेहरा जी एक प्रतिष्ठित कहानीकार हैं और उनके कहानी कहने की शैली इस किताब में भी साफ़ झलकती है। चाय और चीनी के इतिहास को दिल दहला देने वाली कहानी के अंदाज़ में बयान करने की उनकी शैली पाठकों को अंत तक बाँधे रखती है। आपने वह प्रसिद्ध अंग्रेज़ी बाल-कविता 'लंदन ब्रिज इज़ फ़ॉलिंग डाउन..' तो ज़रूर सुनी होगी। बस इतना समझ लीजिए कि दुनिया भर की दौलत और दिमाग़ को अपनी ओर आकर्षित करने वाले लंदन की नींव कब की ढह चुकी होती यदि भारत की प्राकृतिक संपदा और मानव संसाधन ने इसे समृद्ध न किया होता। अगली बार अगर कोई आपको ब्रिटिश हुक़ूमत द्वारा भारत पर किए उपकारों की गाथा सुनाए तो आपके पास उत्तर में कहने के लिए इतना कुछ होगा जिसे सुनाते-सुनाते शायद आप भी एक पूरी किताब लिख डालें।

000

नई पुस्तक

हरे स्कर्ट वाले पेड़ों के तले

(कहानी संग्रह)

लेखक : नीलम कुलश्रेष्ठ

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

कथाकार नीलम कुलश्रेष्ठ का यह कहानी संग्रह शिवना प्रकाशन से अभी हाल में ही प्रकाशित होकर आया है। इस संग्रह में पकड़ कर चलो तो, दीव के तट पर, कसकता असोनिया, तीस बरस पहले की पदचाप, बस एक अजूबा, आर्तनाद, तोड़, अल्युमनी मीट, जीवन@शटडाउन, हरे स्कर्ट वाले पेड़ों के तले कहानियाँ संकलित की गई हैं। संग्रह की कहानियों में आम जन-जीवन की झाँकी दिखाई देती है। यह कहानियाँ मानों हम सबके जीवन से ही जन्म लेने वाली कहानियाँ हैं। इस कहानियों में नीलम कुलश्रेष्ठ ने बहुत साधारण विषयों को उठाकर उन पर अच्छी कहानियाँ लिखी हैं। कहानियों को पढ़ते समय कहानी के पूरे दृश्य पाठक की आँखों के सामने बनते हैं। शीर्षक कहानी में जिस प्रकार काली मिर्च पौधों के बारे में बताया गया है, उससे पाठक की जानकारी में भी वृद्धि होती है। इन कहानियों को पढ़ते हुए कई जानकारियाँ प्राप्त होती हैं।

000

नई पुस्तक

कब तक माफ़ करेगी अम्मा

(कविता संग्रह)

लेखक : नीरज पाराशर

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

कवि नीरज पाराशर का यह कविता संग्रह शिवना प्रकाशन से अभी हाल में ही प्रकाशित होकर आया है। इस संग्रह में उनकी अलग-अलग विषयों पर लिखी गई नई कविताएँ संकलित की गई हैं। सुप्रसिद्ध कवि तथा आलोचक डॉ. प्रतापराव कदम इस संग्रह को लेकर कहते हैं- नीरज पाराशर के रचना संसार में घर-परिवार, पिता, बच्चे, पत्नी और अम्मा कुछ इस तरह से नजर आते है जैसे किसी निर्जन-वीरान रेगिस्तान में सफर करते जैसे कोई छायादार दरख्त और जीवन जल से युक्त कोई कुँआ नजर आ जाता है, रह-रहकर नीरज इस छतनार की छाँव में सुस्ताते है, जीवन जल से अपने से उबरते हैं। इन कविताओं में टेक्नालॉजी से आक्रांत मनुष्य की चीत्कार भी अलग से सुनी जा सकती है और कुछ ज़्यादा इन कविताओं में रम गए तो नीरज पाराशर के पक्ष को भी जान सकते हैं जो हर नौकरी पेशा, आम-खास रंगरेज, किसान, शिक्षक का पक्ष है।

000

पुस्तक समीक्षा

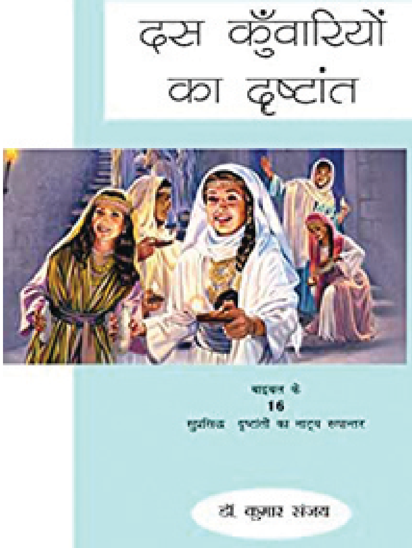

दस कुंवारियों का दृष्टांत

(नाटक संग्रह)

समीक्षक : मार्टिन जॉन

लेखक : कुमार संजय

प्रकाशक : नोशन प्रकाशन, चेन्नइ

मॉर्टिन जॉन
अपर बेनियासोल, पोस्ट - आद्रा
ज़िला - पुरुलिया, वेस्ट बंगाल 723121
मोबाइल- 9800940477

हिन्दी से इतर भाषाओं के बारे में नहीं जानता, अपने तीन दशकों के पाठकीय जीवन और उपलब्ध मसीही साहित्य के अध्ययन के आधार पर मेरा यह दावा करना अतिशय और अतिरंजित नहीं होगा कि ईसाइयों के धर्मग्रंथ बाइबिल में उल्लेखित-दृष्टांतों को केंद्र में रखकर लघु नाटिकाओं की रचना अगर किसी ने की है तो वह हैं कुमार संजय। निश्चित रूप से पहली बार बाइबिल के बहुश्रुत, बहुपठित, सुप्रसिद्ध दृष्टांतों का हिन्दी में नाट्य रूपान्तर करने का श्रेय कुमार संजय को जाता है। उन्होंने "दस कुंवारियों का दृष्टांत" नामक नाट्य संग्रह में बाइबिल के सोलह दृष्टांतों का हिन्दी में नाट्य रूपांतर कर हिन्दी साहित्य संसार को नया बड़ा तोहफ़ा दिया है।

वैसे रेडियो सीलोन (श्रीलंका रेडियो प्रसारण, हिन्दी सेवा) के श्रोता नहीं भूले होंगे कि जबलपुर के "कैवां" (मसीही संस्था) के रेडियो कार्यक्रम "नवजीवन" में यादा-कदा बाइबिल के दृष्टांतों पर आधारित रेडियो नाटकों का प्रसारण होता था।

विभिन्न धार्मिक ग्रंथों में उल्लेखित बोधकथाओं, नीतिकथाओं, प्रेरक कथाओं, प्रेरक प्रसंगों का प्रमुख उद्देश्य उनमें उन्तर्निहित आदर्शमय संदेशों से जीवन- मूल्यों का संवर्द्धन करना होता है। इन कथाओं से इतर, अपने रूप-स्वरूप में थोड़ा हटकर इन दृष्टांतों को भी उपरोक्त दृष्टि से उसी श्रेणी में रखा जाना आपत्तिजनक नहीं होगा।

दृष्टांतों के नाट्य रूपान्तर पर दृष्टिपात करने से पहले बाइबिल और उसके दृष्टांतों पर थोड़ी चर्चा कर ली जाए। तुलसी साहित्य और बाइबिल के अध्येता, मर्मज्ञ और सिद्धहस्त अनुवादक फादर कामिल बुल्के के अनुसार बाइबिल एक ग्रंथ नहीं वरन अनेक रचनाओं का संकलन है। इसमें कई लेखकों की रचनाएँ हैं, जिनकी मूल भाषा कभी इब्रानी और कभी यूनानी है। इनमें कहीं ऐतिहासिक वृतांत है, कहीं काव्य है, कहीं नियमावली, कहीं उपदेश, कहीं पत्र और जीवन-चरित। वर्तमान बाइबिल की तिहत्तर पुस्तकों में छियालिस अर्थात बाइबिल की प्राचीनतम रचनाएँ ईसा मसीह के समय किसी-न-किसी रूप में विद्यमान थीं। वे यहूदियों द्वारा आदर से संरक्षित थीं और वे उन्हें ईश-वाणी का दर्ज़ा देते तथा अपने धार्मिक जीवन की नियामक समझते थे।

बाइबिल की सम्पूर्ण रचनाओं को मुख्यत: दो भागों में बाँटा गया है- पुराना विधान (old testament) और नया विधान (new testament) पुराना विधान में ईसा पूर्व रचित पुस्तकें और नया विधान में ईसा की बाद की पुस्तकें संकलित है। ईसा की मृत्यु और पुनरुत्थान (resurraction) के बाद उनके शिष्यों में से दो शिष्यों (apostles)- मत्ती (methew) और यूहन्ना (john), ईसा के संदेशों को प्रचार करने वाले दो अनुगामियों –मारकुस (mark) और लूकस (luke) ने जो पुस्तकें लिखीं उन्हें पवित्र सुसमाचार (holy gospel) कहा जाता है। इन्हीं चारों सुसमाचारों में ईसा द्वारा कथित दृष्टांतों का समावेश है। समीक्ष्य पुस्तक के लेखक ने इनमें से तीन सुसमाचारकों (gospel writers) मत्ती, लूकस और मारकुस द्वारा वर्णित दृष्टांतों का अध्याय और पद संख्याओं का उल्लेख करते हुए नाट्य रूपान्तर किया है।

पुस्तक के प्राक्कथन में दृष्टांत के संबंध में लेखक के विचार से असहमत नहीं हुआ जा सकता -"दृष्टांतों को अंग्रेज़ी में parable कहते हैं। इसका अर्थ है ऐसी बात या घटना जो निश्चित या प्रमाणित है। ईसा मसीह अपनी बात कहानियों के माध्यम से कहा करते थे। उनकी सारी कहानियाँ व्यावहारिक ज़िंदगी से जुड़ी होती थीं, उपदेशात्मक होती थीं और प्रेरणादायक भी। उनके ही शब्दों में कही उनकी कहानियों को दृष्टांत कहते हैं।"

इसमें दो राय नहीं कि कुमार संजय नाट्य लेखन में अद्‌भुत निपुणता और सिद्धहस्ता प्राप्त कर रखी है। नाट्य विधा को समर्पित कुमार संजय हिन्दी और अंग्रेज़ी में लगभग सौ नाटकों का सृजन कर चुके हैं। जिनमें २२ नाट्य पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। अपने नाट्य लेखन के अनुभव के आधार पर दृष्टांतों के नाट्य रूपान्तर में जो सर्तकता, सावधानियाँ बरतनी चाहिए, उसका उन्होंने पूरा ख़्याल रखा है। बेशक, दृष्टांतों का साहित्य के किसी विधा के रूप में रूपान्तर करना श्रमसाध्य तो है ही, जोखिम भरा भी। लेखक ने इस जोखिम भरा काम को पूरा करने का बीड़ा उठाया और सफलतापूर्वक, कुशलतापूर्वक अंजाम दिया। यह तो तय है कि लेखक ने अपने सृजनकर्म में कल्पनाशीलता का उपयोग किया है। लेकिन प्रमुखता से इस बात को ध्यान में रखा कि दृष्टांतों में अन्तर्निहित मूल संवेदना, संदेशों पर कल्पनाशीलता हावी न हो जाए। लेखक ने स्वयं स्वीकार किया है, "मैंने प्रभु येसु के संदेशों को सबसे ज़्यदा महत्त्व दिया है। कहानियों को मंच पर लाने के लिए उनमें कुछ नाटकीयता लानी ही होगी। नाटकीयता लाने के लिए मैंने कुछ नए पात्रों को गढ़ा है, उद्‌देश्य और संवाद जोड़े हैं, लेकिन प्रभु येसु के संदेशों को प्राथमिकता दी है। कुछ नाटकों में गाने और नृत्य भी जोड़े हैं।" जहाँ तक संवादों की बात है, वे पात्रानुकूल हैं, देश-काल की सीमाओं में बँधे रहने के बावजूद युगानुरूप है, सहज, सरल और बोधगम्य हैं- इसलिए पूर्णरूपेण ग्राह्य भी हैं।

जिन दृष्टांतों को उपयुक्त और सटीक शीर्षकों के अंतर्गत नाट्य रूपान्तर कर इस पुस्तक में सन्निहित किया गया है, वे इस प्रकार हैं – १. एक मुट्ठी बीज (बोने वाले का दृष्टांत) २. सब हैं एक समान (भटकी हुई भेड़ का दृष्टांत) ३. दीये का तेल (दस कुंवारियों का दृष्टांत) ४. ग़रीबों की दुआएँ (महाभोज का दृष्टांत) ५. क्षमाशीलता (उड़ाऊ पुत्रों का दृष्टांत) ६. पड़ोसी कौन (भले समारी का दृष्टांत) ७. सकारात्मक प्रयास (खोए हुए सिक्कों का दृष्टांत) ८. कहीं आप लेजी तो नहीं (सोने के सिक्के का दृष्टांत) ९. परमेश्वर हमसे क्या चाहता है? (निर्दयी सेवक का दृष्टांत) १०. स्वर्ग यहाँ, नरक वहाँ (अमीर और लाजरुस का दृष्टांत) ११. पुरस्कार का सही हक़दार (दाखबारी के मजदूरों का दृष्टांत) १२. सबसे बड़ा दान (एक विधवा का दान का दृष्टांत) १३. ईश्वर सुनेगा (न्यायकर्ता और विधवा का दृष्टांत) १४. सब मेरा है (मूख धनी का दृष्टांत) १५. आधी रात का मेहमान (दुराग्रह करने वाले मित्र का दृष्टांत) १६. अपनी इज़्ज़त (अतिथि का दृष्टांत)

कुमार संजय के हिन्दी और अंग्रेज़ी नाट्य- पुस्तकों का सम्यक् अवलोकन से स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि सारी कृतियाँ पठनीयता, पाठकों की रुचि-अभिरुचि के मद्‌दे-नज़र रचे गए हैं, साथ ही मंचन की दृष्टि से भी उपयोगी सिद्ध हुई हैं।

अंत में लेखक के इस कथन को उद्धृत करना अप्रासंगिक नहीं होगा कि कोई भी नैतिक रचना किसी धर्म या सम्प्रदाय की नहीं होती है। इसमें संकलित नाटक सिर्फ़ ईसाई धर्म के मानने वालों के लिए हैं, ऐसी बात नहीं। इन्हें किसी भी धर्म के नाट्य प्रेमी मंचित कर सकते हैं। दृष्टांतों का नाट्य रूपान्तर कुछ इस तरह से किया गया है कि स्कूल, कॉलेजों के बच्चों के अलावा किसी भी उम्र के लोग मंचित कर सकते हैं।

निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि इन दृष्टांतों का हिन्दी में सर्वप्रथम किये गए नाट्य रूपान्तर का न केवल ईसाई समुदाय में वरन ग़ैर-ईसाई पाठक समुदाय में भी समुचित स्वागत होगा।

000

नई पुस्तक

द= देह, दरद और दिल

(कहानी संग्रह)

लेखक : विभा रानी

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन

विभा रानी का यह कहानी संग्रह अभी हाल में ही शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आया है। इस संकलन में उनकी पीर पराई, ११ से १३ के बीच, मीडियम वेव दो हज़ार.. पर..!, कहो डॉक्टर, ऐसा क्यों ?, 'द' = देह, दरद और दिल!, दिल चाहता है!, अभिनेत्रियाँ, लाल बिन्दी, अक्से वजूद, ऐसा भी क्या मेजर!, ट्रांस....ट्रांस...ट्रांस! कहानियाँ संकलित की गई हैं। अपने अलग तरह के नाम की तरह ही ये कहानियाँ भी अनूठी कहानियाँ हैं। इन कहानियों में कई नई परतें खुलती हैं और पाठक भौंचक रह जाता है। विभा रानी बहुमुखी प्रतिभा की धनी हैं, वे थियेटर आर्टिस्ट हैं, फ़िल्मों में काम करती हैं तथा हिन्दी और मैथिली दोनों भाषाओं में लिखती हैं। इन कहानियों को पढ़ते समय विषय की विविधता में लेखक के इसी बहुमुखी पक्ष को देखा जा सकता है। यह कहानियाँ सामान्य से बहुत अलग कहानियाँ हैं।

000

पुस्तक समीक्षा

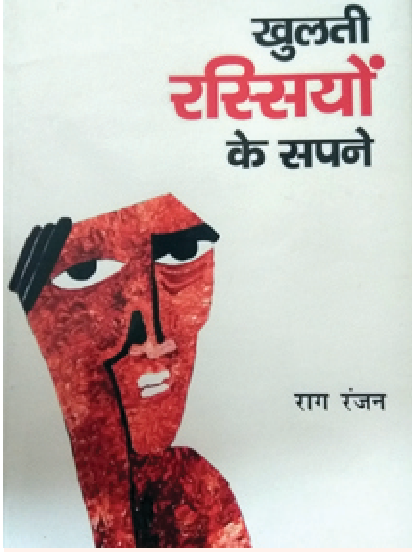

खुलती रस्सियों के सपने

(कविता संग्रह)

समीक्षक : अमरेंद्र मिश्र

लेखक : राग रंजन

प्रकाशक : लिटिल बर्ड पब्लिकेशंस

अमरेंद्र मिश्र,
मौसम, 4 /516, पार्क एवेन्यू, वैशाली,
गाज़ियाबाद, 201010, उप्र
मोबाइल- 9873525152
ईमेल- amarabhi019@gmail.com

'खुलती रस्सियों के सपने' युवा कवि राग रंजन की कविताओं का पहला संग्रह है। इस संग्रह में उनकी कुल 85 कविताएँ हैं और उनमें से कुछ कहीं-कहीं किन्हीं पत्र पत्रिकाओं में छपी हैं। अधिकांश पहली बार इस संग्रह में आयी हैं और उनका आना एक वाजिब इंतज़ार के कारण है। इंतज़ार इस बात का कि रचनात्मक स्तर पर एक सृजेता को यह लगे कि उसने पूरे मनोयोग से अपना काम कर लिया और अब उसकी किताब आनी चाहिए। इस तरह का आग्रह या सुझाव किसी संपादक-प्रकाशक के द्वारा आते तब लगता है कि एक लेखकीय इंतज़ार का अंत किताब की शक्ल में सामने आना चाहिए।

एक बहुराष्ट्रीय बैंक में उच्च पद पर सीनियर अधिकारी रहते और उस बेहद दायित्वपूर्ण काम को करते हुए अपनी सृजनशील दुनिया में बार-बार लौटते हुए, राग रंजन की कविताएँ, कहना चाहिए कि संवेदना के धरातल पर कोमल महीन रेशमी स्पर्श की कविताएँ हैं जो अनुभूति के स्तर पर हमें भीतर तक आंदोलित करती हैं। कविता आख़िरकार पहले हमें ही तो रचती है। उनके पास एक जादुई भाषा है और कविता के मूड के अनुसार वे उसका प्रयोग करते हैं -

"हम लिखे जायेंगे अपने
प्रतिद्वंद्वियों की आत्मकथाओं में
अपने पूर्ण नग्न सत्य में
खुद की सच्चाई कहने के लिए
भाषा का कोई औज़ार नहीं है हमारे पास।"
क्योंकि यह भाषा ही है
जो उन्हें हमेशा सचेत करती है-
"लॉन की मिट्टी में
चींटियों की रेंगती हुई एक लंबी कतार
देखता हूँ
तो सहसा ख़्याल आता है
कितनी हिंसक हो गयी है
अख़बारों कीभाषा !"

किसी रचनाकार के लिए उसका पहला संग्रह इस रूप में अधिक महत्त्वपूर्ण होता है कि उस संग्रह विशेष की रचनाएँ बेहद सावधानी और सतर्कतापूर्वक लेखकीय विवेक से शामिल की गई हों, क्योंकि पहले संग्रह को हस्ताक्षरित करते हुए ही आनेवाले समय सृजन की राह तैयार होती है।

सुप्रसिद्ध चित्रकार तथा कवि कुंवर रवींद्र ने इस संग्रह का कवर बनाया है। इस संग्रह की भूमिका में रंजना मिश्र ने जिस तरह कविताओं के मूड्स, शेड्स और उनकी प्रकृति को पकड़ा है वह काबिले तारीफ़ है।

000

उपन्यास अंश

सीतायन

(बांग्ला उपन्यास)

लेखक : मल्लिका सेनगुप्ता

(जन्म - 27 मार्च 1960
निधन - 28 मई 2011)

अनुवाद : सुशील कान्ति

सुशील कान्ति
रेल्वे क्वार्टर न 185, फोरमैन कॉलोनी, 4 नंबर रास्ता, कांचारपाड़ा, उत्तर 24 परगना- 743145 (पश्चिम बंगाल)
मोबाइल- 9748891717
ईमेल- sushil.kanti@gmail.com

अध्याय - एक

वसंती हवा में थी विवाह विच्छेद की क्रूरता

उषाकाल। फाल्गुन का महीना। गंगा के मटमैले पानी को चीरती हुई एक छोटी नाव आगे बढ़ रही थी। ताम्रवर्णी एक अनार्य युवक नाव का कर्णधार था। उसके कानों में लटके सफेद धातु से बने आभूषण सूर्य की पहली किरण के स्पर्श से चमक रहे थे। नदी के दोनों तरफ घना अरण्य दिख रहा था। पेड़ की शाखाएँ कुछ यूँ पानी में झुकी हुई थीं जैसे नदी की देह में अपनी अँगुली चुभो कर कौतुक कर रही हों। नाव में बैठी वैदेही ने अपनी चंपा फूल की मानिंद तर्जनी से नदी के पार इंगित करती हुई कहा, 'लक्ष्मण, देखो-देखो, वृक्षों की छाया में ऋषियों के कुटीर दिख रहे हैं! आह! इतने दिनों बाद फिर इस शांत तपोवन के आभासमात्र से ही मेरे मन को शीतलता मिल रही है। सहस्र राजसी ऐश्वर्यों के बीच भी तपोवन की यह शांति नहीं मिल सकती। यह हरियाली मेरे मन का विश्राम है।'

वैदेही ने पलाश रंग के अधोवस्त्र पहन रखे थे। स्वर्णिम पाढ़ सुबह की आभा में स्निग्ध दिख रही थी। नाव पर रेशमी वस्त्र बिछाकर वैदेही कुछ झुकी हुई सी बैठी थी। उनकी केहुनी को आराम देने के लिए एक कुशन रख दिया गया था। घृत सी स्वच्छ त्वचा, तीस वर्ष से ऊपर चल रही देह का गठन वीणा की तरह लावण्मय था। पीनबद्ध स्तन द्वय भी वही पलाश के रंगों वाली कंचुकी से ढके हुए थे। स्वच्छ एवं हरे रंग की एक उत्तरीय बेतरतीबी से कंधे पर पड़ी हुई थी। क्षणिक भर दिख रहे पेट के निचले हिस्से से पता चल रहा था कि गर्भ का पाँचवाँ महीना चल रहा हो। शरीर पर अलंकारों का बोझ नहीं था। निष्पाप प्रकृति को एकटक देखती उसके मुख पर सरलता, बुद्धिमत्ता और सौंदर्य का अपूर्व समाहार था।

लक्ष्मण के चेहरे पर हल्की चिंता की लकीरें उभरी हुई थीं। क्षीण कमर, बलिष्ठ बाहें, पिघले सोने जैसी देह के रंग वाले इस युवक के खड़े होने की भंगिमा में एक बेचैनी थी। वैदेही की बातें उसके कानों में जा रही थीं पर वे एकमत नहीं हो पा रहे थे। प्रकृति के इस शांत वातावरण में भी उसके चेहरे पर एक अंजानी आशंका और व्याकुलता ने कब्ज़ा जमा रखा था। अर्धस्फुट स्वर में लक्ष्मण ने कहा, 'देवी, आपकी दृष्टि सुंदर है, इसलिए आप हर चीज़ सुंदर देखती हैं।'

लक्ष्मण के स्वर में ऐसा कुछ था कि सीता ने विस्मित दृष्टि से उसकी ओर एक बार देखा।

कहा, 'सौमित्र, तुम्हें क्या गंगा के स्पर्श से खुशी नहीं हो रही है, अथवा तुम राजकाज की दुश्चिंता भी अपने कंधों पर वहन कर लाए हो?'

लक्ष्मण ने अपने मन की व्याकुलता को दबाते हुए कहा, 'देवी, गंगा के स्पर्श से मेरे मन में इक्ष्वाकु वंश का अतीत उभर रहा है। हमारे पूर्वज सगर ने एक दिन गंगा को धरती पर उतार लाया था। ये सारे प्रसंग याद आते ही मैं भाव विह्वल हो गया हूँ।'

वैदेही को लक्ष्मण की बातें सुनकर थोड़ी आश्वस्ति हुई पर उसने लक्ष्य किया कि लक्ष्मण की चित्त की चंचलता स्वाभाविक नहीं थी। सोलह वर्षों की लंबी अवधि से वह अपने इस प्रिय देवर को जानती थी। उसके चेहरे की एक-एक शिकन की भाषा से परिचित थीं। इसलिए उन्होंने

दुबारा पूछा, कुछ चिंतित स्वर में, 'सच-सच बताओ सौमित्र, आर्यपुत्र का समाचार कुशल है न? तुम्हारी चिंता क्या उनके लिए ही है? वे मुझे विदा संदेश देने क्यों नहीं आए? ऐसी अवहेलना की बात तो वे सोच भी नहीं सकते। सच्चाई क्या है मुझे बताओ लक्ष्मण?'

इसी बीच नाव लगभग घाट तक पहुँच चुकी थी। वनों से चिड़ियों की चहचहाहट सुनाई पड़ रही थी। लक्ष्मण ने वैदेही के प्रश्न के उत्तर देने के बदले कुछ कर्कश ध्वनि में नाव के कर्णधार अनार्य युवक से कहा, 'ओ मूर्ख, सावधानी से नाव किनारे लगा, तनिक भी डगमगाई तो कठिन दंड भोगना पड़ेगा तुम्हें। दिखता नहीं, आर्यनगरी अयोध्या की महारानी अभी गर्भवती हैं, उनको तनिक भी कष्ट हुआ तो यह तलवार तुम्हारे वक्षस्थल को भेद कर जाएगी।'

नाविक लक्ष्मण की ओर देखकर भय से सिकुड़ गया। भय से काँपते हाथों से नाविक की पतवार की दिशा सही नहीं रही और नाव डगमगा गई। लक्ष्मण की आँखें क्रोध से आग उगलने लगीं। तलवार को खींच लक्ष्मण जैसे ही नाविक की ओर बढ़ा वैदेही ने तुरंत तिरस्कार के स्वर में कहा, 'छी: लक्ष्मण, तुम लोग कभी भी अनार्यों के प्रति इस अकारण हिंसा का त्याग नहीं कर सकते। मैंने कितनी बार तुम दोनों भाइयों से कहा है, यह हिंसा अनिष्ट को आमंत्रण करती है, मुझसे और सहन नहीं होता, बार-बार क्यों तुम लोग प्रकृति की निजी शांति भंग करते हो!'

लक्ष्मण के चेहरे पर पश्चाताप झलक उठा। उसने तलवार की मूठ से हाथ हटाकर वैदेही की ओर देखा। उसके चेहरे पर कई भाव आने जाने लगे थे। कहा, 'देवी, आप नहीं समझ रही हैं, इन अनार्यों ने मिलकर हमलोगों का जीवन दुश्वार कर रखा है। देवी, आप अकारण ही रुष्ट हो रही हैं। आप नहीं जानतीं कि इन अनार्यों का शिरोमणि अनार्य रावण के कारण आपको कितना अभिशाप झेलना पड़ रहा है। साथ ही इक्ष्वाकु वंश को भी...।'

बोलते-बोलते अचानक लक्ष्मण थम गए, जैसे बहुत कष्टों के साथ अपने क्रोध और रोष को संयत किया हो। इसी बीच नाव किनारे से लग गई थी। कर्णधार युवक घाट पर जाकर घुटनों में मुँह गाड़े बैठ गया था। नैमिषारण्य की चिड़िया नाव के ऊपर से चक्कर लगाती हुईं नई अतिथि का स्वागत कर रही थीं। लक्ष्मण ने बेहद तत्परता से वैदेही का हाथ पकड़कर नाव से किनारे उतारा। घुटने तक कीचड़ में वैदेही के कोमल स्वर्णाभ दोनों पैर धँस गए। उन्होंने लक्ष्मण के कंधे को जोड़ से पकड़ते हुए कहा, 'ओह! यह कीचड़ मेरे लिए बहुत कष्टदायक है लक्ष्मण।'

लक्ष्मण क्षण भर संकोच में रहे, फिर बेहद सावधानी से गर्भवती वैदेही को दोनों हाथों में उठा कर कहा, 'देवी, अपराध क्षमा करें, आज्ञा दें", बहुत सधे कदमों से उसने गीली मिट्टी वाली जगह पार कर एक शीशम वृक्ष की छाया में नर्म हरी घास पर वैदेही को बिठा दिया। पुन: नाव पर वापस आकर, राजप्रासाद से ऋषिपत्नियों के लिए उपहार स्वरूप वैदेही मणिरत्न और रेशमी वस्त्रों से परिपूर्ण मंजूषा लेकर आई थीं, उन्हें वहन कर वृक्ष के नीचे रखा। इन्हीं में एक छोटे से स्वर्ण पात्र में घृत और शर्करा से तैयार कुछ खाद्य पदार्थ भी था। पिछली रात गोमती के तट पर वे लोग रात्रिवास के लिए ठहरे थे, वहीं की ऋषिपत्नियों ने बड़े यत्न से प्रस्तुत कर दिया था यह खाद्य और रेशमी वस्त्रों में कुछ वनज फल भी बाँध दिए थे। लक्ष्मण ने अपनी अंजुरी में जल लाकर वैदेही के कीचड़ सने पाँव धो दिए। वैदेही ने कहा, 'लक्ष्मण, पहले अपने दोनों चरणों के प्रति सुविचार करो।'

धीर कदमों से लक्ष्मण ने थोड़े कम कीचड़ वाले घाट पर जा कर अच्छी तरह और बहुत देर तक अपने हाथ, पैर और मुँह का प्रक्षालन किया। वे अपने हाथ हिला रहे थे पर उन्हें अनुभव हो रहा था कि हाथ इतने भारी हैं कि हिल नहीं पा रहे थे। उनके चेहरे पर जो धुम्रवर्णी छाया क्रमश: गहरी होती गई थी, उसे असंख्य चेष्टाओं से भी निर्मल नहीं किया जा रहा था। लक्ष्मण ने ऊपर सूर्य को निहारा। अर्धस्फुट स्वर में कहा, हे देवसविता, हे गंगा मात:, जल्लादों और घातकों के काम से भी घृणित, भयंकर उस काम के लिए मुझे प्रस्तुत करें।'

शीशम वृक्ष के नीचे गंगा की मनोरम हवा में प्रकृति के सान्निध्य में बैठी वैदेही के मन में अपार सुख की अनुभूति हो रही थी। स्वर्ण पात्र से अंजुरी में जल लेकर दोनों हाथों से मुँह, राजहंसिनी सी ग्रीवा पर धीरे-धीरे जलसिंचन करने लगीं। उसके बाद कपास से बने नर्म कपड़े से जल पोंछ कर उठ खड़ी हुईं। फिर वहीं शाल वृक्ष के तले गिरे हुए पत्तों में से दो हरे पत्ते चुनकर उन्होंने संग्रह किया और प्रकृति विषयक कोई श्लोक गुनगुनाती हुई शीशम वृक्ष के नीचे लौट आईं। नम कपास वस्त्र से उन्होंने दोनों पत्तों को अच्छी तरह पोंछा। उसके बाद उन पत्तों पर दोनों के लिए भोजन परोसने लगीं। अपने लिए मात्र कुछ फल और एक मिठाई रख कर, बाकी सारा सुचारु रूप से शाल पत्र पर सजाकर वीणा की तरह स्वर में गर्दन ऊँची करके पुकारा, 'लक्ष्मण, हुआ तुम्हारा काम, या कि जल में अपना प्रतिबिंब देखते हुए कहीं विस्मृत हो गए!'

लक्ष्मण ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। वे एक कटु सत्य बोलने के लिए अपने आप को तैयार कर रहे थे, पर उन्हें लग रहा था कि बलिवेदी पर अपनी ग्रीवा ही बढ़ा दे रहे हैं।

वैदेही ने फिर पुकारा, 'लक्ष्मण, हुआ तुम्हारा, क्या कर रहे हो, मुझे क्षुधा बोध हो रहा है।'

लक्ष्मण को संज्ञान आया। पाँच महीने की गर्भवती सीता अब तक भूखी हैं! अनर्थक बातों को मन से बाहर निकाल उठ खड़े हुए। पर सोच विचार की स्थिति मंथर थी। धीर गंभीर, अनिच्छुक गति से जैसे एक निष्ठुर भविष्य की ओर बढ़ रहे थे। आहार ग्रहण करते हुए सीता ने प्रफुल्ल स्वर में कहा, 'लक्ष्मण, मैं धन्य हूँ, तुम्हारी तरह सेवापरायण देवर और आर्यपुत्र की तरह सहानुभूतिशील स्वामी मिले हैं मुझे। इस जगत् में मेरी तरह भाग्यशाली नारी कम ही है।'

बातें, लक्ष्मण के कानों में तीर की तरह प्रवेश कर रही थीं। उनके गले से अन्न उतर नहीं रहा था। उनकी उँगलियाँ पथ भूले पथिक की भाँति खाद्यसामग्रियों में झिझकती सी हिलने डुलने लगीं। उन्होंने कुछ कहना चाहा

पर मुँह से एक शब्द भी न निकला।

सीता ने अब जाकर लक्ष्मण के भावांतर को लक्ष्य किया। अत्यधिक उद्विग्नता से उन्होंने पूछा, 'लक्ष्मण, क्या तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक नहीं है?'

लक्ष्मण ने शालपत्र पर उँगली से टेढ़ी मेढ़ी कुछ लकीरें खींचते हुए सिर हिलाकर मुश्किल से उत्तर दिया, 'नहीं।'

वैदेही ने और व्याकुलता से कहा, 'सच बताओ, कौशल्यानंदन कुशल तो हैं, हम लोगों को वे विदा करने भी नहीं आए थे, क्या शारीरिक अस्वस्थता के कारण?'

सौमित्र ने अपनी कंठ में थोड़ी शक्ति संचय करते हुए कहा, 'वे कुशल हैं।'

वैदेही ने अब करीब आकर लक्ष्मण के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, 'फिर क्या बात है, किस दुश्चिंता के कीड़े ने तुम्हारा दंशन किया है, तुम्हें ईश्वर की शपथ देती हूँ, सारी बातें मुझे खुलकर बताओ।'

लक्ष्मण बहुत देर से अपने पर नियंत्रण रखने का प्रयत्न कर रहे थे, पर अब नियंत्रण नहीं रख सके। दोनों हाथों से वैदेही के घुटने में सिर छुपाकर हाहाकार कर उठे, 'देवी, मैं महापातक हूँ। पूर्वजन्म में मैंने कोई पाप किया था जिस कारण श्रीरामचंद्र ने मुझे यह महादंड दिया है।'

वैदेही किसी अजानी आशंका से लक्ष्मण के केशों को मुट्ठी में जकड़ते कहा, 'दंड मुझे या तुम्हें, जन्म से ही दुर्भाग्य मेरे छायासंगिनी की तरह है, मैं सब कुछ सहन कर सकती हूँ, लक्ष्मण, केवल तुम्हारी यह अनजानी उत्कंठा सहन नहीं कर पा रही हूँ! तुम कहो कि कौन सा वह महासर्वनाश है जिसने दुर्जेय सौमित्र को क्रंदन के लिए बाध्य कर दिया है।

लक्ष्मण से अपना मुँह दिखाया न गया। वैदेही की घुटनों में अपना मुँह छुपाए हुए ही कहा, 'मैं आपको यहाँ छोड़ जाने के लिए आया हूँ। न जाने किस अशुभ मुहूर्त में आपने तपोवनदर्शन की अभिलाषा प्रकट की थी, श्रीरामचंद्र के आदेश से आप निर्वासित हुई हैं।'

वैदेही छिटककर दूर हो गईं, विस्फारित नेत्रों से पूछा, 'क्यों?'

जिन प्रजाओं ने आपके चरित्र को अपवाद दिया है, मैं उन्हें टुकड़े-टुकड़े में बिखेर दूँगा।' लक्ष्मण क्रोध से तमतमाते हुए उठ बैठे, 'देवी, जिस पापी जिह्वा से आपका दोष उच्चारित हो, उसे मैं उखाड़ डालूँगा।'

वैदेही की नस-नस झंझना उठी, जैसे फट जाएगी, अप्रत्यासित इस सर्वनाश के आगे वह स्तब्ध हो कर बैठी रहीं।

लक्ष्मण ने कहा, 'अगर वह अनार्य राक्षस आपको हरण कर न ले जाते तो ऐसा कुछ भी नहीं होता। हाय देवी, कैसे मेरी मति मारी गई थी कि मैं आपको कुटीर में आरक्षित छोड़ कर श्रीरामचंद्र को ढूँढ़ने निकल गया था। आप भी इतनी सुमति होकर मेरे द्वारा अंकित विपदा की रेखा को क्यों पार कर गई थीं!'

वैदेही स्तब्ध हो गई थीं, जैसे किसी पत्थर की मूर्ति को वन में स्थापित कर दी गई हो।

लक्ष्मण ने कहना जारी रखा, 'बस इसी कारण से मैं इस पृथ्वी को अनार्यों से शून्य कर देना चाहता हूँ। वे काले काले लंगूर की तरह दिखने वाले इधर उधर घूमते रहते हैं, यह दृश्य मुझसे सहन नहीं होता।'

वैदेही निर्विकार सी हो गई थीं। उनके कानों में पृथ्वी का कोई शब्द प्रवेश कर रहा था या नहीं, क्या पता।

उन पर दृष्टि पड़ते ही लक्ष्मण का मनोभाव बदला। पश्चाताप के भीषण भाव ने उन्हें पुन: घेर लिया। उन्होंने फुसफुसाते हुए कहा, 'मैंने प्रयत्न किया था इस दुर्घटना को रोकने का, भरत और मैं रामचंद्र के इस सिद्धांत को मानने के लिए कभी प्रस्तुत नहीं थे। आप जानती हैं कि वे कभी भी अनुजों के मत को मूल्य नहीं देते हैं।'

लक्ष्मण फिर धीरे-धीरे उत्तेजित हो कर कहने लगे, 'वे अपने को अचूक मानते हैं। उन्होंने उस नीच प्रजा के कुटिल संदेह को सुबुद्धिसंपन्न लोगों के परामर्श से अधिक महत्त्व दिया। हाय देवी! आपकी इस हालत में जब पौत्रलाभ की संभावना के आनंद में माता कौशल्या प्रवास...'

अचानक वैदेही जाग उठी और लक्ष्मण की ओर अपलक देखतीं हुई बोलीं, 'मेरे गर्भस्थ संतान का क्या होगा?'

एक उलझन की स्थिति में लक्ष्मण ने पूछा, 'इस प्रश्न् का क्या तात्पर्य है देवी?'

वैदेही ने कहा, 'तुम्हारी प्रिय प्रजा एक दिन यह भी कह सकती है कि सीता ने वन में जिस संतान का प्रसव किया है वह रामचंद्र की वैध संतान नहीं है।'

लक्ष्मण ने कहा, 'देवी, वे आप पर संदेह नहीं करते पर वे अत्यंत ही प्रजानुरागी हैं। उन्होंने विशेष रूप से मुझे आदेश दिया है कि मैं आपको किसी अनार्य अध्युसित वन में त्याग न करूँ।'

उन्होंने इस नैमिषारण्य में वाल्मीकि आश्रम का चुनाव ही आपके लिए किया है। कारण यह कि ऋषि वाल्मीकि पिता दशरथ के स्थानीय मित्र थे। इस आश्रम का वातावरण आपको हर तरह की विपदा से रक्षा करेगा। अनार्यों के लिए यह जगह अगम्य होने के कारण और भी सुरक्षित है। यहाँ ऋषि पत्नियाँ आपको साहचर्य देंगी। हो सकता है तपोवन में आपका असहनीय जीवन कुछ सहनीय हो जाए।'

वैदेही ने कहा, 'हा: लक्ष्मण, वनवास मेरे लिए नया नहीं है। मैं तपोवन की सारी महत्ताओं से परिचित हूँ, जिस कारण दर्शन की अभिलाषी थी। परंतु मैं अनार्यों को विपदा कारक नहीं मानती, विपदादायक तो तुम्हारी आर्य सभ्यता की आत्मुग्ध राजनीति है। जब हम साथ-साथ वनवास में थे तब अगर कौशल्यानंदन ने बारंबार अनार्यों को पीड़ा न पहुँचाई होती, यदि तुमने शूर्पनखा की नाक न काटी होती, यदि उन्होंने सहस्रों राक्षसों का वध न किया होता, यदि आर्यगर्व में अंधे होकर पृथ्वी के आदिम बाशिंदों को न सताया होता तो रावण कभी प्रतिशोध लेने नहीं आता। मेरे इस सर्वनाश की पूर्व प्रस्तुति की एक एक सीढ़ी कौशल्यानंदन के हाथों निर्मित है। मैंने बहुत करीब से अनार्यों को देखा है इसलिए कह रही हूँ के वे भी तुम्हारे मेरे जैसे स्वाभाविक इन्सान हैं।'

इतनी बातों के बाद वैदेही थक चुकी थीं। उत्तेजना की छाप चेहरे पर दिखने लगी थी। अकस्मात् वे एक अन्जाने रोमांच से भर उठीं, उनके गर्भ में कुछ हलचल हुई थी।

वैदेही को एक दूसरी बात याद आ गई, उन्होंने पूछा, 'लक्ष्मण, उन्होंने तो केवल मुझे निर्वासन दिया है। उनकी संतान जब पृथ्वी पर आएगी, तब क्या वह भी अपने पूर्व पुरुषों के राजसुख से वंचित रहेगी? जो कौशल्यानंदन इतने सतर्क थे गर्भ में पल रहे राजजातक और जननी की सेवासुश्रुषा के लिए, उन्होंने क्या इस विषय में तुमसे कुछ नहीं कहा?'

लक्ष्मण ने असहाय दृष्टि से जानकी की ओर देखा, यह बात तो उसने भी नहीं सोची थी, फिर निरुत्तर होकर आँखें झुका ली।

वैदेही की व्याकुलता तत्काल ही बढ़ गई, 'लक्ष्मण, मैं कैसे उसकी रक्षा कर पाऊँगी? जब उसके दाँत उगेंगे, जब मातृदुग्ध उसके लिए यथेष्ट नहीं होगा, तब क्या वे तुम्हारे घृणा के पात्र वनवासी अनार्यों की तरह फल-मूल और शूकरों के मांस का भक्षण करेंगे, या कि आमिषवर्जित ब्राह्मणों के आहार की भिक्षा मांगकर उसे जीवित रखूंगी?'

लक्ष्मण से अब सहन नहीं हो पाया। उन्होंने अग्रज की अविवेचना के प्रति दबे हुए क्रोध के वशीभूत हो मुष्टिका का भीषण प्रहार मृत्तिका पर किया फिर आकाश की ओर देख कर कहा, 'आह!'

वैदेही ने अब तीक्ष्ण दृष्टि लक्ष्मण को भेदते हुए पूछा, 'हे राजपुत्र, मेरा निर्वासनदंड की अवधि क्या है?'

लक्ष्मण से अब दबाव सहन नहीं हुआ। अकस्मात् खड़े हो कर चीत्कार करते हुए कहने लगे, 'देवी, आप समझ क्यों नहीं रही हैं, लोकलाज के भय से उन्होंने आपका परित्याग किया है। संतान हो या आपका भरण पोषण हो हर दायित्व से उन्होंने अपने को मुक्त कर लिया है। आह! देवी, क्यों आपने पंचवटी में लक्ष्मणरेखा का अतिक्रमण किया था!'

स्तंभित दृष्टि से वैदेही ताकती रहीं, अपने कर्ण पर ही विश्वास नहीं कर पा रही थीं। एक रात में ही श्रीरामचंद्र इतने बदल कैसे गए।

वैदेही की आँखों के सामने आलोकित गंगानदी और नैमिषारण्य क्रमशः अँधेरे में घिरते चले गए। उनके सर में चक्कर आने से तृणभूमि पर गिर गईं।

लक्ष्मण की चीत्कार तपोवन तक पहुँच चुकी थी। तीन चार ऋषिबालक गण उच्च शब्द पर आकृष्ट होकर दौड़े-दौड़े शीशम वृक्ष के नीचे आए और एक अद्भुत नाट्यदृश्य से साक्षात् हुए। वैदेही की मुर्छा देख कर इन्हीं में एक आश्रम से जल ले कर आए और वैदेही के मुँह और माथे पर सिंचन करने लगे। एक ऋषिबालक ने लक्ष्मण के सामने खड़े होकर विनीत भाव से कहने लगे, 'आर्य, देख कर यह बोध हो रहा है कि आप लोग किसी उच्च राजवंशजात नारी और पुरुष हैं। गंगा के इस पार अवतरण के पश्चात् भी आप लोगों ने महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में प्रवेश नहीं किया, यह सोच कर हमें विस्मय का बोध हो रहा है! क्या इस देवी की राह की थकान और गर्भधारण की क्लान्ति से अवसन्न हो कर आप लोग विश्राम ले रहे थे?'

लक्ष्मण अपना परिचय देने में कुंठा का बोध कर रहे थे। राजकीय गरिमा का त्याग करते हुए वे अपनी निर्बलता प्रकट करने को तैयार न थे। उन्होंने इतना कहा, 'हे ऋषिबालक गण, यह देवी महर्षि वाल्मीकि के इस आश्रम में विश्रामसुख का उपभोग करने ही कुछ दिनों के लिए आई हैं।'

वैदेही की मुर्छा टूट चुकी थी। कुछ क्षणों तक समझ नहीं पाईं कि कहाँ क्यों किधर हैं, फिर ऋषिबालकों के झुके हुए मुखों को देख उनके भीतर क्रंदन का भाव जागा। वे आर्तनाद कर उठीं, 'लक्ष्मण, लक्ष्मण, तुम चले गए?'

लक्ष्मण ने वैदेही के दोनों पैर किंचित दबाव के साथ पकड़ते हुए कहा, 'देवी, मैं आपकी चेतना लौट आने की प्रतीक्षा कर रहा था।'

वैदेही समझ गई थी कि अब लक्ष्मण को चला जाना पड़ेगा। पिछले छत्तीस वर्षों से जिस राजप्रासाद, स्वजन और परिवार को उन्होंने अपना समझा था, सर्वदा के लिए उनके साथ अब विच्छेद होने वाला है, लक्ष्मण उस विगत जीवन का अंतिम योगसूत्र है। वे लक्ष्मण को बाहुपाश में जकड़ लेना चाहती थीं, पर आश्रम के बालकों की उपस्थिति में उनका गरिमाबोध लौट आता है। अपने को संयत करती हुई कहती हैं, 'हे राजपुत्र, माता कौशल्या से मेरा प्रणाम करते हुए कहना कि वे आर्यपुत्र पर क्रोध न करें। माता सुमित्रा और माता कैकेयी से भी मेरा प्रणाम कहना।'

उमड़ रहे अश्रु पर नियंत्रण के लिए क्षण भर रुकती हैं। लक्ष्मण अविचल होकर वैदेही के दोनों पैर पकड़े बैठे हैं। पुनः वैदेही कहती हैं, 'आर्यपुत्र से कहना, मैं तनिक भी उन पर रुष्ट नहीं हूँ, मैं उनके इस कार्य से गर्वित हूँ। इस जगत् में कोई हाड़-मांस का बना मनुष्य जो कभी नहीं कर पाता उस कठिन कर्त्तव्य का निर्वहन उन्होंने किया है। वे देवतुल्य हैं, मैं जहाँ भी जाऊँ, जिस स्थिति में रहूँ, उनके हित की कामना करूँगी। उन्हें मेरे लिए जिस कलंक का भागीदार होना पड़ा है, उसके लिए मैं लज्जित हूँ। वे अब कलंकमुक्त हो कर यशलाभ करें, यही कामना करती हूँ। स्वामी ही स्त्रियों का परम मोक्ष है, इस बात का स्मरण रखते हुए मैंने विगत छत्तीस वर्ष बिताए हैं, अतः जीवन के इस अंतिम लग्न में भी उनके कार्यों को मैं निर्भ्रांत मान लेती हूँ।'

कुछ देर बाद उन्होंने कहा, 'लक्ष्मण, इतनी देर जो बातें भी मैंने तुमसे कही तुम अक्षरशः महाराज से निवेदन करोगे।'

वैदेही ने रुककर अपने को पुनः सँभाला। स्वर अवरुद्ध होता जा रहा था। फिर लक्ष्मण के हाथों को ज़ोर से पकड़ते हुए कहा, 'तुम्हारे लिए मैं गर्व का बोध करती हूँ लक्ष्मण। जन्म-जन्मांतर तुम्हें देवर के रूप में पाना चाहती हूँ। तुम्हारे कारण ही मेरी आस्था अब तक मनुष्यों पर बची हुई है। तुम्हें देख कर ही मैंने अपना यह विश्वास बचाए रखा कि पुरुषों में भी, राजपुरुषों में भी मनुष्यता रहती है!'

शोकविह्वल लक्ष्मण को लगा उसके हृदय की धड़कन थमती जा रही है। राजपुरी से बाहर विपदाग्रस्त अरण्य में वे लोग दीर्घ तेरह वर्ष एक साथ बिताए थे। आलोकोज्ज्वल इस रमणी के साथ उनका एक विरल संपर्क तैयार हो गया था। वैदेही उम्र में भले ही लक्ष्मण से छोटी थीं परंतु उनके स्वभाव की सहज अभिभावकत्व और माधुर्य ने उनके संबंध को अडिग रखा था। जिस दिन वैदेही को रावण हरण कर के ले जा रहे थे उस दिन के अलावा कभी भी सीता ने लक्ष्मण से कोई रूढ़ स्वर में

बातें नहीं की थीं। संबंध में मातृतुल्य होने के बावजूद उनका संबंध एक गंभीर बंधुत्व और आस्था का था। जिस सीता को विपदा से रक्षा करना ही उनका संकल्प था आज वह उसी कुसुमकलि को ख़तरनाक जानवरों से भरे जंगल में छोड़ कर सदा के लिए जा रहा है। लक्ष्मण को लग रहा था कि ठीक इसी क्षण वज्रपात हो कर दोनों की मृत्यु हो जाती तो सारे शोक और दुर्योगों का अवसान हो जाता। अश्रुवर्षण कर पाते तो उनके मन का बोझ हल्का होता, पर आश्रमिकों के सामने राजोचित संयम की रक्षा भी करनी थी।

लक्ष्मण ने झुक कर जानकी को प्रणाम किया। झुके-झुके ही उन्होंने अनुभव किया कि आँखें सजल हो गई हैं। उन्होंने द्रुत स्वर में कहा, 'मुझे क्षमा कीजिएगा', और वैदेही से मुँह फेरकर नाव की ओर बढ़ चले। वैदेही सूनी दृष्टि से देखती रहीं, लक्ष्मण नदी किनारे पहुँच कीचड़ से पटे तट को अतिक्रम करते हुए नाव पर चढ़े। दूर खड़ा अनार्य युवक लक्ष्मण को देख क़रीब आया। धीरे-धीरे नाव चलने लगी। वैदेही अपलक दृष्टि से लक्ष्मण का गमन देखती रहीं।

आश्रम के बालकों में से एक ने कहा, 'देवी, आप हमारे साथ आइए। महर्षि के आश्रम के सुंदर आबोहवा वाले परिवेश में विश्राम करें।'

वैदेही की तंद्रा भंग हुई, वे उस बालक को कुछ पल देखती रहीं। आश्रम से किसी की गंभीर पुकार सुनकर एक बार उधर दृष्टिपात कीं। पुन: लक्ष्मण की यात्रापथ की ओर उनकी दृष्टि चली गई। नाव अब तक दूसरे तट पर पहुँच चुकी थी। घाट पर उतर कर लक्ष्मण ने नाविक को पारिश्रमिक के रूप में स्वर्णमुद्रा दिए। फिर रथ के निकट पहुँच कर सीता की ओर मुड़कर खड़े हुए। दूर से भी स्पष्ट दिख रहा था कि लक्ष्मण ने सीता को लक्ष्य कर शीश नवाया, हाथ जोड़कर प्रणाम की भंगिमा की। रथ पर बैठे सारथी सुमंत्र अब तक प्रतीक्षा कर रहे थे, उन्होंने भी रथ से उतर लक्ष्मण की तरह ही वैदेही को विदा का प्रणाम किया। फिर स्वर्ण रथ और अयोध्याराज्य का निशान जब चलना शुरू किया तो शाखा-प्रशाखाओं के अंतराल से कुछ दूर तक आभासित होता रहा। लक्ष्मण भी इधर ही देख रहे थे, वैदेही को ऐसा ही लगा।

क्रमश: वह सोने का रथ उनके दुर्भाग्य का प्रतीक स्वर्णमृग लगने लगा था। दो-तीन आश्रमवासियों ने अब आगे बढ़ कर पुकारा, 'देवी'।

वैदेही ने उनलोगों से कहा, 'मैं कुछ देर एकांत में व्यतीत करना चाहती हूँ। आप लोग आश्रम लौट जाएँ। महर्षि वाल्मीकि से मेरा प्रणाम कहिएगा। मन:स्थिर करने के लिए नदी का यह निर्जन तट मेरे अनुकूल है।'

सीता के स्वर में ऐसी नि:स्वार्थ शीतलता थी कि आश्रम के बालकों को कुछ कहते न बना। एक-एक पैर पीछे करते हुए आश्रम की ओर लौट चले। उन सब के चले जाते ही सीता ने चारों तरफ निहारा। वही गंगा नदी, वही शीशम के पेड़, दूर दिखता चित्रकूट पर्वत, आकाश में बगुलों की पंक्तियाँ, आम, बबूल, चंदन आदि के पेड़ों पर झूलते मधुमक्खियों के छत्ते, वही वाल्मीकि आश्रम क्रमश: उन्हें चौदह वर्ष पहले की बातें स्मरण कराने लगे। श्रीराम और लक्ष्मण के साथ वनवास के प्रथम वर्ष यहीं आ कर पहुँची थी। यहीं अपने पति के साथ मनोरम एक रात्रिवास की थीं। और वह चित्रकूट, वहीं उन लोगों ने अपना पर्णकुटीर स्थापित किया था। वहीं बीती थी उन लोगों की दीर्घ प्रतीक्षित मधुचंद्रिमा की रात। वहीं भरत आए थे रामचंद्र को वापस ले जाने। ये सारी स्मृतियाँ उनके मन में शोक की लहरें पैदा करने लगीं।

उन्हें याद आ गई वाल्मीकि के साथ पहली भेंट। पहली भेंट में ही वे अति आत्मीय लगे थे। वाल्मीकि भी विस्मय से भर उठे थे राम-लक्ष्मण के साथ सीता को देख कर। उन्होंने कहा था कि इस तरह स्वेच्छा से राजसुख का त्याग कर वन-जंगलों में पति की संगिनी होने का उदाहरण मैंने इससे पूर्व किसी क्षत्रिय रमणी में नहीं देखा है। वही वाल्मीकि जिन्होंने अपने निकटवर्ती पर्णकुटीर में वर्षों तक सीता का अति सुहागिन रूप देखा था, देवर की सेवापरायणता की अभ्यस्त एक सुखी नारी, जिन्हें सीता ने सदा ही गर्व के साथ अपने विरल पति-सौभाग्य की बातें बताई थीं, आज किस मुँह से उनके सामने जा कर खड़ी होंगी! सामना होते ही तो उन्हें बताना होगा कि रामचंद्र ने गर्भिणी राजमहिषी का निर्मल चरित्र जान कर भी लोकोपवाद के भय से, राजसिंहासन की रक्षा के लिए त्याग कर दिया है।

वही रामचंद्र जिसने यहीं शीशम वृक्ष के तले खड़े हो कर कहा था, 'वैदेही, मेरे इस ऊसर वनवास जीवन में तुम ही एकमात्र मरुद्यान हो।'

कहा था, 'इस वन में फल-मूल दुष्प्राप्य नहीं है। आशा है खाद्य संग्रह के लिए अधिक क्लेश सहन नहीं करना पड़ेगा। फलस्वरूप हम दोनों को ही निविड़ पूर्वक प्रमोदसुख का अवसर मिलेगा।' स्पष्ट रूप से उन्हें सारी बातें याद आ रही थीं।

हाय! उसी रामचंद्र की यह कैसी विवेचना है! असंख्य मधुयामिनी की मधुर स्मृतियों से भरा हुआ वह चित्रकूट, और उन्होंने उसी गंगा की शाखा मंदाकिनी तट को सीता के विसर्जन के लिए उत्तम स्थान के रूप में चुन लिया!

जब ऋषिबालकों से एक अनजान राजपुरनारी के नाटकीय आगमन का संवाद वाल्मीकि ने सुना तो कौतुहल से बालकों को साथ लेकर स्वयं शीशम वृक्ष के पास आ खड़े हुए। उनकी देह से होम, चंदन, पुष्पपराग की मिली जुली सुगंध और ऋषिबालकों की पगध्वनि से भूलंठित वैदेही ने मुँह उठाकर देखा।

वाल्मीकि ने जब सीता का अश्रुप्लावित मुखमंडल देखा तो लगा जैसे उन्हें साँप सूँघ गया हो। चौंकते हुए उन्होंने कहा, 'यह क्या! सीता! एकाकी इस निर्जन वन में क्या कर रही हो!'

वैदेही तृणभूमि पर पड़े सेमल के पत्तों पर लोटपोट होती हुईं वाल्मीकि के चरणों को पकड़कर चिल्लाकर रोने लगीं।

बहुत दूर और दृष्टि की आड़ से लक्ष्मण ने यह दृश्य देखा और आश्वस्त हो कर सुमंत्र से कहा, 'चलिए आर्य, अयोध्या की ओर अश्वों को धावित करें।'

000

शिवना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित नई पुस्तकें
अपनी सी रंग दीन्हीं रे
कहानी संग्रह
सपना सिंह
कोई ख़ुशबू उदास करती है
कहानी संग्रह
नीलिमा शर्मा
इक्कीस फेरों का फ़रेब
उपन्यास
सुनीता पाठक
ओ मारिया पिताशे
संस्मरण
प्रतिभा अधिकारी
सरहदों के पार दरख़्तों के साये में
कविता संग्रह
रेखा भाटिया
कुहासा छँट गया
कहानी संग्रह
ममता त्यागी
बहती हो तुम नदी निरंतर
गीत संग्रह
श्याम सुन्दर तिवारी
कब तक माफ़ करेगी अम्मा
कविता संग्रह
नीरज पाराशर
फ़ैमिली बिज़नेस की सच्चाइयाँ
शोध
इंजी. राजेन्द्र जैन
हरे स्कर्ट वाले पेड़ों के तले
कहानी संग्रह
नीलम कुलश्रेष्ठ
पूर्वकालिक इछावर की परिक्रमा
इतिहास
राजेश शर्मा
कम्पोज़िट इंग्लिश ग्रामर
ग्रामर
भूपेन्द्र गोस्वामी
शिवना प्रकाशन
शिवना प्रकाशन, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट
कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने
सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
फ़ोन : 07562-405545, 07562-695918
मोबाइल : +91-9806162184 (शहरयार)
ईमेल : shivna.prakashan@gmail.com
http://shivnaprakashan.blogspot.in
https://www.facebook.com/shivna.prakashan
शिवना प्रकाशन की पुस्तकें सभी प्रमुख ऑनलाइन शॉपिंग स्टोर्स पर
amazon
http://www.amazon.in
flipkart.com
http://www.flipkart.com
Paytm
https://www.paytm.com
ebay
http://www.ebay.in
दिल्ली में पुस्तकें प्राप्त करें : हिन्दी बुक सेंटर, 4/5 आसफ अली रोड
फ़ोन : 011-23286757 http://www.hindibook.com

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन अमेरिका द्वारा मध्यप्रदेश के सीहोर ज़िले में सीहोर तथा आष्टा में चलाए जा रहे आर्थिक रूप से कमज़ोर परिवार की बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण योजना के तहत स्थापित प्रशिक्षण केन्द्रों पर आयोजित कुछ कार्यक्रम

सीहोर में चलाए जा रहे बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केंद्र पर सत्र 2019-20 में प्रशिक्षण प्राप्त बालिकाओं को डीसीए डिप्लोमा अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक श्री समीर यादव तथा समाजसेवी श्री अनिल पालीवाल ने केंद्र पर आयोजित कार्यक्रम में प्रदान किए।

सीहोर में चलाए जा रहे बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केंद्र पर सत्र 2019-20 में प्रशिक्षण प्राप्त बालिकाओं को डीसीए डिप्लोमा श्रीमती डॉली शर्मा, श्रीमती रश्मि मनु व्यास तथा श्रीमती समर ख़ान ने केंद्र पर आयोजित कार्यक्रम में प्रदान किए।

सीहोर में चलाए जा रहे बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केंद्र पर सत्र 2019-20 में प्रशिक्षण प्राप्त बालिकाओं को डीसीए डिप्लोमा अनुविभागीय पुलिस अधिकारी सुश्री अर्चना अहीर ने केंद्र पर आयोजित कार्यक्रम में प्रदान किए।

सीहोर ज़िले के आष्टा में चलाए जा रहे बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केंद्र पर सत्र 2019-20 में प्रशिक्षण प्राप्त बालिकाओं को डीसीए डिप्लोमा समाजसेवी श्री अखिलेश राय ने आष्टा केंद्र पर आयोजित कार्यक्रम में प्रदान किए।

If Undelivered Please Return to :
P. C. Lab, Shop No. 3-4-5-6, Samrat Complex Basement, Opp. Bus Stand, Sehore, M.P. 466001
Phone 07562-405545, 07562-695918, Mobile 09584425995, 07828313926, 09806162184

स्वत्वधिकारी एवं प्रकाशक पंकज कुमार पुरोहित के लिए पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001 से प्रकाशित तथा मुद्रक ज़ुबैर शेख़ द्वारा शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एम पी नगर, भोपाल, मध्य प्रदेश 462011 से मुद्रित।